गणेश तत्त्व-दर्शन

1
63
JACL-KRC
007563

वैद्य पं० रामप्रसाद शर्मा शास्त्री

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर

पुस्तकालय

पुस्तक संख्या 7563

वर्गीकरण संख्या

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ
7563
परिग्रहण सं.
जयपुर

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर

पुस्तकालय

वर्गीकरण सं०..............

पुस्तक सं०..................

7563

परिग्रहण सं.

दिनाङ्क..............

यह पुस्तक नीचे अङ्कित तिथि या उससे पूर्व लौटा दी जानी चाहिये। यदि पुस्तक निर्धारित तिथि से अधिक समय तक पाठक अपने पास रखेंगे तो 5 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क देय होगा।

12·2P

SV-2024

٩٢٠٢١

ॐ

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

गणेश-तत्त्व-दर्शन

राजस्थान राज्य-सरकार (शिक्षा विभाग) द्वारा मान्यता प्राप्त
'शिव-तत्त्व-दर्शन' 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन', 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' तथा 'ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन'

ग्रन्थ लेखक—

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला

प्राचीन भारतीय गरिमा पुरस्कार सम्मान प्राप्त

卐

प्राक्कथन लेखक—

डॉ० प्रभाकर शास्त्री

साहित्य-धर्मशास्त्राचार्य, एम. ए; (हिन्दी-संस्कृत), पी एच.डी; डी. लिट्; अध्यक्ष
राजस्थान संस्कृत परिषद्, एवं अध्यक्ष संस्कृत-विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर, म ारानी कॉलेज जयपुर, संयोजक संस्कृत पाठ्यक्रम मण्डल
एवं सदस्य—माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर (राजस्थान)

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
जयपुर परिसर, जयपुर
पुस्तकालय
क्रमांक 7563

卐

१९८६

प्रकाशक—

अर्चना प्रकाशन, अजमेर

गणेश-तत्त्व-दर्शन

****

(क) लेखकाधीन

लेखक –**वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला**
आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि-अलंकृत

☐

प्रथम संस्करण : १९८६

☐

मूल्य : **पचास रुपये मात्र**

☐

प्रकाशक : **अर्चना प्रकाशन, अजमेर**

☐

मुद्रक : अर्चना प्रकाशन, अजमेर

****

पुस्तक प्राप्ति स्थान–

अर्चना प्रकाशन
६४, जीवन विहार कॉलोनी
आनासागर सरक्यूलर रोड,
अजमेर-३०५००१

पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री
ए/६ दुर्गापुरा ग्रेसिम स्टाफ कॉलोनी
पो० बिरलाग्राम
[नागदा] ४५६३३१

पं धीरेन्द्र ओझा
२०, गणेश भवन, ओझा मार्ग,
नागदा जंक्शन-४५६३३५

॥ ॐ मङ्गलमूर्तये नमः ॥

श्रीमान्, श्रीमती

सादर सप्रेम भेंट, उपहार

की ओर से

JACL-KRC
007563

प्राक्कथन

प्रचण्डकरदण्डाग्र-विघ्नखण्डनपण्डितम् ।
अलितुण्डलसद्गण्डं वक्रतुण्डमुपास्महे ।।

यं निर्जरासुरनरा अखिलार्थ सिद्धयै भूर्यन्तरायहतयेऽनुदिनं नमन्ति ।
तं भक्तकामपरिपूरणकल्पवृक्षं भक्त्या गणेशमखिलार्थदमानतोऽस्मि ।।

वैद्यप्रवर पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री के नाम से संभवत: कोई ही धर्म-परायण व्यक्ति अपरिचित होगा, जिनने धार्मिक व आध्यात्मिक जगत् में विविध उपाधियां ही प्राप्त नहीं की, अपितु "तत्त्व-दर्शन" शृंखला में शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा सदृश प्रमुख देवाधिदेवों के स्वरूपों की सर्वसाधारण के लिए एकत्र उपस्थित करने में स्तुत्य व श्लाघनीय श्रम किया है । इस शृंखला में उन्होंने "गणेश तत्त्व-दर्शन" का निर्माण किया है, यह जानकर प्रसन्नता है ।

भारतीय धर्म व संस्कृति के मूल "वेद' कहते हैं— परम तत्त्व एक ही है— 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' । गणेश पुराणान्तर्गत गणेश-गीता में भगवान श्री गणेश कहते हैं— "विश्व के समस्त देवों में जो अभेद बुद्धि रखता है, वही वास्तव में तत्त्वज्ञानी है । उनके अनुसार एक ही देव अनेक रूपों ने प्रकट होते हैं, उन्हीं के अनेक नाम हैं । कार्य भेद के अनुसार उनके स्वरूप भी विभिन्न हैं । वास्तविकता यह है कि गणेश ही विष्णु हैं, वे ही शिव स्वरूप हैं, वे ही ब्रह्मा हैं और वे ही सूर्यादि-देवरूप हैं—

शिवे विष्णौ च शक्तौ च सूर्ये मयि नराधिप ।
या भेदबुद्धिर्योग: स सम्यग्योगो मतो मम ।।
अहमेव जगद्यस्मात् सृजामि पालयामि च ।
कृत्वा नानाविधं वेषं संहरामि स्वलीलया ।।
अहमेव महाविष्णुरहमेव सदाशिव: ।
अहमेव महाशक्तिरहमेवार्यमा प्रिय ।।
अहमेव नृणां नाथो जात: पञ्चविध: पुरा ।
अज्ञानान्मां न जानन्ति जगत् कारणकारणम् ।।
मत्तोऽग्निरापो धरणी मत्त आकाश मारुतौ ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च लोकपाला दिशो दश ।।
वसवो मनवो गावो मनव पशवोऽपि च ।
सरित सागरा यक्षा: वृक्षा पक्षिगणा अपि ।।
तथैकविंशति: स्वर्गा: नागा सप्त वनानि च ।
मनुष्या: पर्वता: साध्या: सिद्धा: रक्षोगणास्तथा ।। इत्यादि

(गणेशगीता २१-२७)

सभी वेद गणपति का स्तवन करते हैं। ऋग्वेद में लिखा है—

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम ।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिःसीद सादनम् ।

(ऋग्वेद २।२३।१)

श्री गणेश पार्वती और शिव के पुत्र माने जाते हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि पार्वती के विवाह में भी शुभारम्भ 'गणेश पूजन' से हुआ था। यह एक गूढ रहस्य है कि गणेश सगुण व निर्गुण ब्रह्म हैं। गणेश सब के माता-पिता हैं, हेरम्ब हैं, विघ्नेश्वर हैं, अनादि एवं विघ्नजनक हैं तथा विघ्नहर्ता भी हैं—

अनामयाय सर्वाय सर्वपूज्याय ते नमः।
सगुणाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मणे निर्गुणाय च ।।
मात्रे पित्रे च सर्वेषां हेरम्बाय नमो नमः।
अनादये च विघ्नेश विघ्नकर्त्रे नमो नमः ।।
विघ्नहर्त्रे स्वभक्तानां लम्बोदर नमोस्तुते ।
त्वदीयभक्तियोगेन योगीशाः शान्तिमार्गताः ।। इत्यादि

(शिव-शक्ति प्रणीत-गणाधीश स्तोत्र)

श्री गणेश क्रुद्ध होकर स्वयं ही विघ्न उत्पन्न करते हैं तथा प्रसन्न होकर विघ्ननाश भी स्वयं करते हैं। प्रत्येक भक्त की कामना भी पूर्ण करते हैं। अतः "वरदाता" कहलाते हैं। भगवान् गणेशजी की द्वादश नामावली विख्यात है तथा अनेक श्रद्धालु व्यक्ति किसी भी कार्य के प्रारम्भ में गणेश स्मरण के रूपों में उसका पाठ अवश्य करता है—

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि य पठेत् शृणुयादपि ।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।

महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपनी स्मृति के आचाराध्याय के एक प्रकरण में गणपति के स्वरूप को ही उजागर किया है। वे लिखते हैं—

विनायकः कर्मविघ्नसिद्ध्यर्थं विनियोजितः।
गणानामाधिपत्ये च रुद्रेण ब्रह्मणा तथा।।

वह विनायक जिसे पकड़ लेता है, उस व्यक्ति को दुःस्वप्न आने लगते हैं। वह किसी भी कर्मफल को प्राप्त नहीं कर पाता है—

व्रजन्नपि तथात्मानं मन्यते मन्यते नु मतं परैः।
विमना विफलारम्भः संसीदत्यनिमित्ततः।।

इसीलिए उन्होंने विघ्नराज-विनायक की पूजन विधि प्रस्तुत कर कहा है—

एवं विनायकं पूज्य ग्रहांश्चैव विधानतः।
कर्मणां फलमाप्नोति श्रियं प्राप्नोत्यनुत्तमाम् ।।

इस प्रकार समस्त वेदों में, पुराणों में, स्मृति ग्रन्थों में, लोकाचार में, सर्वत्र भगवान् गणपति की अर्चना का विधान प्राप्त होता है। इसलिए लोक में श्री गणेश को 'विघ्नसागर-शोषक' मानकर मुनि अगस्त्य से उपमित किया जाता है—

नमस्तस्यै गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने ।
यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे ।।

"अग्निषोमात्मकं जगत्" उक्ति के अनुसार यह समस्त संसार अग्नि तथा सोम तत्त्व से ही उत्पन्न हुआ है। वास्तव में अग्नि तथा सोम तत्त्व से उत्पन्न तत्त्व "गणेश" है। शक्ति तथा शिव तत्त्व से गणपति का आविर्भाव माना जाता है। शास्त्रों मे शिव अग्नि को तथा सोम शक्ति को कया गहा है। इसलिये 'उमया सहितः सोमः' की व्याख्या से यह विषय स्पष्ट किया गया है कि इस समस्त जगत् के आत्मा अग्नि एवं सोम हैं। इसे 'अग्निरूप' भी कहते हैं। अग्नि अर्थात् घोर तेज ही रुद्र का शरीर है। अमृतमय शक्ति देने वाला सोम शक्ति रूप है। वही सबकी प्रतिष्ठा है। अग्नि तथा सोम के परस्पर 'हविर्यज्ञ' से समस्त संसार की उत्पत्ति मानी गई है। गण का अर्थ है—वर्ग समूह, समुदाय। अष्ट बसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, "गणदेवता" कहलाते हैं। और इनके स्वामी "गणेश" हैं।

भगवान् गणेश "मोक्षदायक" भी हैं। गणेश शब्द की आध्यामिक दृष्टि से व्याख्या करते हुए विद्वानों ने इस शब्द को रहस्यमय माना है। वे कहते हैं कि 'ग' अक्षर ज्ञान का द्योतक है तथा 'ण' अक्षर निर्वाण का वाचक है। ज्ञान और निर्वाण के ईश (स्वामी) ही 'गणेश' हैं। इसलिए लोक में यह पद्य विख्यात है—

ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचकः।
तपोरीशं परब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम् ।।

यद्यपि कुछ लोग गणेश के स्वरूप को देखकर उपहास करते हैं। उनके वाहन 'मूषक' को भी अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाते हैं। कहां गणेश सदृश भारी भरकम शरीर और कहाँ "चूहा" जैसा क्षुद्र जीव। क्या कभी चूहे पर गणेश सवारी कर सकते हैं? देखने में तो बात अनुपयुक्त सी लगती है, परन्तु इस प्रकार की बातें केवल बालकों की बुद्धि को ही प्रभावित कर सकती है। प्रत्येक शब्द के कई अर्थ होते हैं—वाच्य, लक्ष्य, व्यंग्य, तात्पर्यार्थ आदि साहित्य शास्त्र में प्रसिद्ध ही है। भारतीय मनीषियों ने इस विषय पर गम्भीर चिन्तन किया है। उनके अनुसार 'चूहा' विवेचक, विभाजक, भेदकारक, विस्तारक व विश्लेषक बुद्धि का प्रतीक होता है। गणेश को 'गजानन' भी कहते हैं। पौराणिक कथा के अनुसार उसका सिर काटा गया था अथवा यों मानिये शनि की दृष्टि से स्वयं कट कर गिर पड़ा था। इसे अहंकार का नाश माना गया है। इसी प्रकार गज शिर का संयोजन समन्वय-कारक व संश्लेषक बुद्धि का प्रतीक है। विभाजक तत्त्व चूहा तथा संयोजक तत्त्व गजानन का समन्वय भी अपने आप में कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। समन्वयात्मक बुद्धि के प्रतीक गणेश की प्रधानता भी इसी कारण है। इस प्रकार गणेश-तत्त्व का गूढ़ रहस्य सर्वसामान्य की बुद्धि में सरलता से समाविष्ट नहीं हो सकता।

ऐसे दुरूह 'गणेश तत्त्व' को सर्व सामान्यजन की बुद्धि का विषय बनाने की दृष्टि से वैद्य पंडितप्रवर श्री रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री ने 'गणेश-तत्त्व-दर्शनम्'

नामक ग्रन्थ लिखने का उपक्रम किया है—यह सभी सनातन धर्मावलम्बियों के लिए आनन्द का विषय है। उन्होंने इस विषय को चौबीस सोपानों में विभक्त कर समस्त बिन्दुओं पर सूक्ष्मेक्षिकया विचार किया है। आपकी भाषा सरल, सुबोध व सर्वसामान्य के लिए ग्राह्य है।

श्री शर्मा शास्त्रीजी ने इस ग्रन्थ के प्रथम सोपान का नाम 'मङ्गलाचरण' रखा है, जिसमें भगवान गणेश सहित समस्त देवी-देवताओं का स्मरण किया गया है जो श्री शर्मा शास्त्रीजी की समस्त देवों के प्रति आस्तिक बुद्धि श्रद्धा का परिचय प्रस्तुत करता है। वे 'सर्वदेवमयं जगत्' के सिद्धान्त में श्रद्धा तथा विश्वास रखते हैं।

द्वितीय सोपान में पौराणिक कथानक को आधार बनाकर यह सिद्ध किया है कि भगवान् श्रीकृष्ण ही गणेशावतार हैं। श्रीकृष्ण समस्त चौबीस अवतारों में षोडश कलावतार के रूप में विश्रुत हैं। उनके इस सोपान की प्रस्तुति का उद्देश्य गणेश व श्रीकृष्ण में अभेद स्थापित करना है।

तृतीय सोपान श्री गणेश का 'गजानन' कहलाने वाली घटना का रोचक वर्णन प्रस्तुत करता है।

चतुर्थ सोपान की कथावस्तु का आधार है "आदौ पूज्यो विनायकः"। समस्त शुभकार्यों के प्रारम्भ में श्री गणेश की पूजा विशाल हिन्दू समाज में सुप्रसिद्ध ही नहीं, प्रचलित भी है। अनेक पुराण, यहां तक कि वेद भी उन्हें परात्पर तत्त्व के रूप में स्वीकारता है। अतः श्रीगणेश को सर्वतः प्रथम पूज्य बताया गया है।

पंचम सोपान में गणेश के विवाह व उनके वंशवृद्धि का पौराणिक आख्यान वर्णित है। इसी प्रकार षष्ठ सोपान में श्री गणेश के लोक का परिचय प्रस्तुत किया गया है, जो भी पौराणिक कथाओं पर आधारित है।

सप्तम सोपान 'गणेश-तत्त्व' का विवेचन करता है। इस अध्याय के विवेचन से श्री गणेश की वैदिक कालीनता व प्राचीनता प्रमाणित होती है। और वेद, उपनिषद्, पुराण, स्मृति, श्रुति, तथा संहितादि प्राचीन धर्मशास्त्रों के प्रमाणों द्वारा श्री गणेशजी को ब्रह्म का ही स्वरूप होना सिद्ध किया गया है जो लेखक के साङ्गोपाङ्ग प्राच्य षटशास्त्र अवगाहन का भी परिचायक है।

अष्टम सोपान में गणेश भक्तों के लिए उनकी सहस्रनामावली का न्यास ध्यान भाषार्थ सहित उल्लेख किया गया है।

नवम सोपान श्री गणपति के क्षेत्रों का परिचय प्रस्तुत करता है। दशम से सप्तदश सोपान तक की कथावस्तु भगवान् श्री गणेश सम्बन्धिनी विभिन्न कथाओं व उनके महात्म्य से संबद्ध है, जिनमें गणेश चतुर्थी को चन्द्र दर्शन निषेध, उसका दोष परिहरण, गणेश प्रिय चतुर्थी की उत्पत्ति कथा, चतुर्थी व्रतों का माहात्म्य, गणेशजी के अनुग्रहों की कथायें-जैसे शुक्ल शर्मा एवं विद्रुमा, भगवान् वेद व्यास व बल्लाल भक्त पर अनुकम्पा की कथाएं प्रमुख रूप से चित्रित हैं।

अष्टादश सोपान से द्वाविंश सोपान तक भगवान् गणेश की उपासना व पूजन विधि संबंधी चर्चा को स्थान मिला है। इसमें तन्त्रोक्त पूजा, वेदोक्त पूजा व गणेश के सामान्य का उल्लेखनीय विवेचन है।

त्रयोविंश सोपान में गणेश भक्तों के लिए संग्रहणीय विविध वेदोक्त सूक्त-मंत्र एवं स्तोत्रों, प्रार्थनाओं का संकलन किया गया है। श्री शर्मा शास्त्रीजी ने इन मन्त्रों, स्तोत्रों, पद्यों का हिन्दी भाषानुवाद प्रस्तुत कर प्रशंसनीय कार्य किया है। जिससे सभी हिन्दी भाषी लोग, इस तत्त्व का अर्थ सरलता से हृदयंगम कर सकते हैं।

अन्तिम चतुर्विंश सोपान में ग्रन्थ समापन प्रार्थना है। श्री शर्मा शास्त्रीजी ने इन चौबीस सोपानों में श्री गणपति के रहस्य को प्रकाशित करने वाली उस समस्त साहित्य सामग्री को सरल, सुबोध, सुन्दर, व्यवस्थित रूप से संजोकर प्रस्तुत किया है जो वेदों, पुराणों, स्मृति ग्रन्थों व अन्यान्य ग्रन्थ रत्नों, पत्र-पत्रिकाओं में प्राप्त होते हुए भी रहस्यमय बनी हुई थी तथा एकत्र नहीं होने से दुरूह थी। मैं लेखक शर्मा शास्त्री के इस यज्ञ कार्य के लिए उन्हें हृदय से बधाई देते हुए, उनके दीर्घायुष्य की कामना करता हूँ तथा भगवान् श्री गणेश से प्रार्थना करता हूँ कि वे श्री शर्मा शास्त्रीजी को सर्वविध सौख्य प्रदान करें। श्री शुभम्॥

दिनांक २५ जून १९८५ ई०

डॉ. प्रभाकर शास्त्री,
साहित्य-धर्मशास्त्राचार्य
एम.ए.; (हिन्दी-संस्कृत) पी.एच.डी; डी. लिट्;
अध्यक्ष राजस्थान संस्कृत परिषद् एव
अध्यक्ष संस्कृत विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर।

卐

आमुख

सिन्दूरपूरपरिशोभितपूर्णशुण्डं, श्रीकुण्डतुल्ययुगकुण्डलमण्डिगण्डम् ।
तुण्डेन विघ्नभयकानन भग्न चण्डम्, वन्दे महेश-गिरिजा महिमांशु पिण्डम् ।।

विविधोपाधि एवं वैशिष्ठ्यादि समलङ्कृत वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी(राजस्थान) निवासी, बिरलाग्राम (मध्य प्रदेश) प्रवासी भारत के ऐसे तत्त्वान्वेषी मनीषी रत्न हैं, जो भारतीय सभ्यता; संस्कृति एवं धर्मतत्त्व का दिग्दर्शन हिन्दू मात्र के घर घर तक पहुँचाने के लिए न केवल कृत-संकल्प हैं अपितु अभावों से जूझते हुए; वृद्धावस्था को एक ओर धकेलते हुए इस सूक्ति को अन्वर्थक बना रहे है—

'परोपकाराय सतां विभूतय:'

अथवा वृक्ष कबहुँ नहिं फल भखै, नदी न संचै नीर ।
परमारथ के कारणौं, साधु न धर्या सरीर ।।

भारतीय आर्षमेधा ने पंचदेवोपासना का विधान आदि अनादि काल से भारत में किया है। पंचदेवों में श्रीमन्नारायण, भगवान् शंकर, भगवती दुर्गा, ग्रहाधिपति सूर्य एवं गणाध्यक्ष विघ्नहरण भगवान् विनायक को परिगणित कर उनकी नगर में स्थापना के सम्बन्ध में यह निर्देश शुक्र नीति में दिया गया है।

शृंगाटके ग्राम मध्ये विष्णोर्वा शंकरस्य च ।
गणेशश्च रेवेर्देव्या: प्रसादान् क्रमतोन्यसेत् ।।

अर्थात् ग्राम के प्रवेश मार्ग के आरम्भ में अथवा ग्राम के मध्य में मुख्य रूप से भगवान विष्णु अथवा भगवान शंकर का मन्दिर बनवाना चाहिए और उसके पश्चात् भगवान गणेश, सूर्य तथा भगवती परास्बा के मन्दिर एक निश्चित क्रम में स्थापित करना चाहिए कि प्रत्येक आस्तिक जन को शास्त्रीय मर्यादानुसार उनके दर्शन आदि का अवसर सुलभ हो सके।

प्रश्न किया जा सकता है कि हिन्दू धर्म में तैंतीस करोड़ देवताओं की विद्यमानता होते हुए भी मात्र पाँच देवों की उपासना का विधान क्यों किया गया? उत्तर में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार शरीर के लिए पंचभूत मात्र ही ग्रहण किए गए हैं, चौबीस गुणों में—रूप, रस, गन्धादि के विषय की अनुभूति का दायित्व पांच ज्ञानेन्द्रियों को ही सौंपा गया है, उसी प्रकार धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष एवं इन सबकी उपलब्धि के लिए जीवन में निर्विघ्नता की सिद्धि हेतु पाँच देवों की उपासना का विधान ही हिन्दू धर्म में प्रतिपादित हुआ है। सभी लोग जानते हैं कि भगवान राम को, जो भगवान विष्णु के अवतार थे, मूर्तिमान धर्म कहा गया है—'रामो विग्रवान धर्म:।' यह इस बात का परिचायक है कि—मानव जीवन में धर्म का सम्पादन, मोक्ष की प्राप्ति भगवान विष्णु की कृपा पर ही निर्भर है, अतः भगवान विष्णु की आराधना को प्रमुख स्थान हमारे धर्मग्रन्थों में दिया गया है।

भगवान श्रीकृष्ण ने अपने श्रीमुख से श्रीमद्भगवद्गीता में मोक्ष के सम्बन्ध में कहा है—'यद्गत्वान निवर्तन्ते तद्धाम परम मम।' श्रीमद्भागवत में भगवान श्रीकृष्ण को हा मुक्ति प्रदान करने में समर्थ प्रतिपादित करते हुए कहा है—'मुक्तिं ददाति कर्हिचित्स्म न तु भक्ति योगम्।' इससे उपास्यदेव के रूप में भगवान विष्णु की महत्ता स्वयंसिद्ध हो जाती है।

भगवान शंकर आशुतोष हैं। वे प्रसन्न होकर मानव को समस्त भौतिक सुख तो दे ही देते हैं, साथ ही भगवान श्री नारायण की कृपा का भाजन भी मानव को बना देते हैं। भगवान गणेश लक्ष्मी और सरस्वती दोनों के अधिष्ठान हैं। इनके

सूण्ड के हिंडोले में लक्ष्मी झूलती है तथा दाँतों में सरस्वती का आवास है। इसी वाणी के आवासभूत दांत को भगवान गणेश ने अपनी लेखनी बनाया है।

लक्ष्मी: खेलतु शुण्डयोरिव सदा मर्त्यस्य वाह्वोर्द्वयो:।
दन्ताग्रे वसताच्च सा द्विगुणिता शुक्ला च वागीश्वरी ।।

अर्थात् इनके (गणेश के) कृपा प्रसाद से—जिस प्रकार इनके सूण्ड के हिंडोले में लक्ष्मी झूलती है, वैसे ही मानव की दोनों भुजाओं में भी वह झूले एवं जिस प्रकार श्वेताभ सरस्वती इनके दाँतों में द्विगुण रूप से अपनी छटा दिखाती है, उसी प्रकार मानव के दन्ताग्र भी शोभा विकीर्ण करें।

इसके साथ ही मानव की यह सतत कामना रहती है कि उसके सारे कार्य व्यापार निर्विघ्न सम्पन्न हों, अत: विघ्नविनाशार्थ गणेश की आराधना करें।

इसके अतिरिक्त द्वैतपरक भ्रम से मुक्ति प्राप्ति हेतु तथा श्री गणेश के दन्त से अद्वैतपरक दृष्टि की उपलब्धि हेतु भी इनकी उपासना का विधान है।

प्राग् द्वैत भ्रम एव भाति नितरामद्वैतमेवान्तत:।
एतद् बोधयते रवो गणपतेरेक्तत्वमेकाश्रयन् ।।

सनातन धर्म एक विज्ञानमूलक धर्म है। इसमें वारों के साथ सूर्यादिग्रहों की भाँति तिथियों का सम्बन्ध विभिन्न देवताओं से जोड़ा गया है। अर्थात् वे वे देवता उस-उस तिथि के अधिष्ठातृ देवता प्रतिपादित किए गए हैं और कहा गया है—

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रवि:।
वसु दुर्गान्तको विश्वे हरि: काम: शिव: शशी ।।

अर्थात् प्रतिपदा से पूर्णिमा पर्यन्त विभिन्न तिथियों के अधिष्ठातृ देवता इस प्रकार मान्य किए गए हैं—१ के अग्नि, २ के ब्रह्मा, ३ के गौरी, ४ के गणेश, ५ के सर्प, ६ के कार्तिकेय, ७ के सूर्य, ८ के वसु, ९ के दुर्गा, १० के काल, ११ के विश्वेदेवा, १२ के विष्णु, १३ के कामदेव, १४ के शिव, १५ के चन्द्रमा, ३० के पितर।

भगवान् गणेश को चतुर्थी तिथि का स्वामी बनाया गया है क्योंकि इस तिथि को चन्द्र-सूर्य का अन्तर उस कक्षा पर अवस्थित होता है जिसके प्रभाव से मानव अनायाम कुछ ऐसे कृत्य करने की दिशा में प्रवृत्त हो सकता है जिससे कालान्तार में उसकी प्रगति अवरुद्ध हो जाए। इसी सम्भावित उपप्लव की रोक थाम के उद्देश्य से (Precuation) के रूप में चतुर्थी को विघ्नविनाशक गणेश की पूजा का विधान दैनन्दिनीय तथा विशेष पूजन में इसके महत्त्व को उजागर किया गया है।

संसार में यह उक्ति प्राय: सुनी जाती है—'अर्थ बिना सब व्यर्थ।' ठीक उसी प्रकार कहा जा सकता है—'बिना शक्ति नहीं भक्ति।' महाकवि कालीदास ने इसी बात को आलोकित कर कहा है—'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्।' भगवान् आशुतोष शंकर शक्ति संयुत होकर ही शिव बनते हैं और शिवत्व का विधान करने में समर्थ होते हैं। विना शक्ति उनका स्वरूप रहता है मात्र-शव और शव न स्वयं का हित साधन कर सकता है न अन्य किसी का। पुरुषार्थ चतुष्टय-की सिद्धि शक्ति पर ही निर्भर है। अत: पंच देवों में शक्ति पूजन का प्रावधान है।

रवि प्राणवायु (Oxygen) का स्रोत मेधा, नेत्रज्योति, कान्ति आदि का वर्धक तथा धान्य फल आदि को पकाकर मानव की क्षुधा निवृत्ति में सहायक बनने वाला देवता है। सूर्य-पुराण के अनुसार नारायण ही सूर्य हैं। कई श्लोकों में सूर्य मण्डल में भगवान् नारायण का निवास प्रतिपादित करते हुए कहा है—

"ध्येयं सदा सवितृ मण्डल मध्यवर्ती,
नारायण: सरसिजासन सन्निविष्ट: ।"

प्राणवान् बनने, स्फूर्ति पाने और सूर्य के प्रकाश की भाँति निज यश प्रकाश फैला पाने की क्षमता प्राप्ति के लिए सूर्य पूजन का विधान पंचदेवों की पूजा के अन्तर्गत किया गया है ।

श्री पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री अद्यावधि शिव-तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन, विष्णु-तत्त्व-दर्शन तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन शाश्वत मूल के महान् ग्रन्थ रत्न भारतीय जनता जनार्दन को प्रदान कर ऋषिऋण से उऋण हो चुके हैं और अब गणेश-तत्त्व-दर्शन के प्रणयन की दिशा में इस दृष्टि से प्रवृत हुए हैं कि 'पंचदेव स्तोत्राणि' की भाँति उनके भी पंचदेव तत्त्व-दर्शन जनता के मार्ग-दर्शनार्थ एवं तद्-तद् देव परक तत्त्व भी ज्ञानार्थ प्रस्तुत हो सकें ।

कुछ समय पूर्व 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का आद्योपान्त पर्यालोचन कर मैंने पंडित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री से आग्रह किया था कि वे गणेश-तत्त्व-दर्शन क प्रणयन हेतु विचार करें परन्तु उस समय वे त्रिदेव परक तत्त्व-दर्शन की पूर्ति में रुचि रखने के कारण 'ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन' के प्रणयन में कमर कस कर जुटे हुए थे । बाद में पुन: एतद्विषयक आग्रह को उन्होंने यह कहकर अमान्य कर दिया था कि अब वे इतने थक चुके हैं कि कार्यशक्ति प्राय: जवाब दे चुकी है, साथ ही साधनों और सहयोगियों के बिखर जाने की बात भी उन्होंने कही थी, परन्तु 'स्वभावो दुरतिक्रम:' के अनुसार वे अपने लेखन के स्वभाव को बदल नहीं पाए और मेरे आग्रह अथवा ईश्वरीय प्रेरणा से 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का प्रणयन करने में जुट गए ।

प्रभु कृपा से पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने इस गणेशपरक ग्रन्थ रत्न में उस समस्त सामग्री को अनस्यूत किया है, जो भगवान् गणेश के सम्बन्ध में सुलभ है । शास्त्रीय-वैदिक-पौराणिक एवं अन्य प्रकार से प्रचलित गणेश परक कोई ऐसा विषय नहीं बचा है, जिसको लेखक ने अपने इस ग्रन्थरत्न में न संजोया हो । गणेश सम्बन्धी सर्वांगीण जानकारी तंत्र, मंत्र, यंत्र, आरती, स्तुति सभी को गूंथकर पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने दस्ता सजाया है – जिससे धार्मिक क्षेत्र का कक्ष न केवल प्रकाशित होगा अपितु सुरभित तथा आप्यायित भी होगा ।

इस महनीय कृति के लिए श्री पंडित रामप्रसाद जी शास्त्री का अभिनन्दन करते हुए मैं भगवान् श्रीमन्नारायण से उनके दीर्घ एवं यशस्वी जीवन की कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि लेखक पञ्चमदेव रवि पर भी 'तत्त्व-दर्शन' लिखकर रवि के सर्वाङ्गीण दर्शन करा पाने का सौभाग्य प्रदान करेंगे ।

तुम हो राम-प्रसाद, प्रसाद दो ऐसा युग को ।
जब तक जीवन रहे, न अग-जग भूले तुमको ।।

दिनांक २८ अप्रेल १९८५ ई०
गांधी बाजार,
समक्ष: उच्च न्यायालय हैदराबाद

विद्या भास्कर, आयुर्वेद बृहस्पति,
डा० वेदप्रकाश शास्त्री, एम. ए; पी-एच. डी;
डी. एस्-सी; डी-लिट्; साहित्याऽऽयुर्वेदरत्न

卐

।। श्री गणेशाय नमः ।।

आत्म-निवेदन

जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः।
तयोर्योगे गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः।।

(मुद्गल पुराण गणेशस्तोत्र)

'गणेश' शब्द में आया हुआ 'ग' कार जगद्रूप है, और 'ण' कार ब्रह्मवाचक है। ऐसे सर्वव्यापक परब्रह्म गणेशजी को नमस्कार है।

लेखक का जन्म ऐसे कुल में हुआ, जिसमें वेद, वेदान्त, ज्योतिष, पुराण, धर्मशास्त्रादि की शिक्षा शताब्दियों से चली आ रही है। सनातन धर्म ग्रन्थों का पठन, मनन, स्वाध्याय एक व्यसन रूप में सर्वदा ही बना रहा है। प्रातःस्मरणीय परम पूज्य स्वर्गीय पितामह पंडित महासुखजी शर्मा वेद, वेदान्त, ज्योतिष, पुराण, धर्मशास्त्रादि के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उनके द्वारा तथा पूज्यपाद अन्य गुरुवर्य विद्वानों द्वारा प्राप्त शिक्षा व सम्पर्क ज्ञानोपदेश का ही प्रभाव है कि यह अकिंचन लेखक सन् १९६४ में जीविकोपार्जन भार से मुक्त होकर अपने वानप्रस्थाश्रम के सदुपयोग हेतु इस प्रकार के धार्मिक आध्यात्मिक ग्रन्थों के अधिक पठन, मनन, स्वाध्याय में लग गया। भगवान साम्बसदाशिव का अनुग्रह तथा पूर्वजों व गुरुवर्यों का आशीर्वाद का आश्रय ग्रहण कर 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक एक ग्रन्थ लिख डाला, किंतु लेखक का व्यवसाय (पेशा) पुस्तक लेखन कभी रहा नहीं और न कभी पुस्तक लेखन का अभ्यास ही किया। अतः पुस्तक लेखन में अनेक प्रकार की भूल त्रुटियाँ रहने का भय व संकोच ही बना रहा, किंतु पुस्तक को अनेक धर्मगुरुओं, धार्मिक, आध्यात्मिक प्रबुद्ध वरिष्ठ विविधशास्त्रनिष्णात विद्वानों ने अवलोकन करने के पश्चात् अपने आशीर्वाद, मंगल कामनाएँ एवं सम्मतियाँ प्रदान करने का अनुग्रह किया। इसके पश्चात् 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ प्रकाशन समिति का गठन हुआ और उस समिति ने अर्थ संग्रह-व्यय की व्यवस्था कर उसका प्रकाशन कराया। 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ प्रकाशन होने के पश्चात् सैकड़ों वरिष्ठ विद्वानों तथा अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने अपनी सम्मतियाँ एवं प्रशंसापत्र प्रेषित किए। यदि उन सबको पुस्तकाकार किया जाए तो एक वृहत् पुस्तक बन सकती है। राजस्थान राज्य-सरकार शिक्षा विभाग ने भी अपने विद्यालय पुस्तकालय संकेत क. ख. ग. घ, के लिए मान्यता प्रदान की। अनेकानेक ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं के अन्वेषणकर्ताओं की रिपोर्टों के तथ्यमय अंश सारांश संकलन द्वारा ही अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ का प्राचीन ग्रन्थों के संदर्भों प्रमाणों, द्वारा ही हिन्दी भाषा में लेखन किया गया था। इसके पश्चात् इसी प्रकार से दूसरा ग्रन्थ 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' तृतीय ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' तथा चतुर्थ (चौथा) ग्रन्थ 'ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन' के भी लेखन प्रकाशन हुए। जिनका भी पूर्व लिखित प्रकाशित ग्रन्थों से अधिकाधिक धर्माचार्यों विद्वानों द्वारा समादर किया गया।

उसी प्रकार का अब यह पञ्चम (पाँचवां) ग्रन्थ 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक भगवान गणपति की वाङ्मयी पूजा के रूप में लिखा गया है। त्रुटियाँ स्वभावतः इन सभी में रही होंगी। उनके लिए मैं पूज्यवर्यों, विद्वानों, पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ। कोई भूल त्रुटियाँ दृष्टि में आवे, मुझे अवश्य सूचित करें। और उन पर ध्यान न देकर जो उत्तम मीठा सारयुक्त फल रुचिकर प्रतीत हो, ग्रहण करें, यही मेरा विनम्र निवेदन है।

परब्रह्म परमात्मा स्वरूप गणपति, सूर्य, शिव, शक्ति तथा विष्णु के सम्बन्ध में वेद, श्रुति, स्मृति, पुराण, संहितादि प्राचीन धर्मग्रन्थों में प्रचुर साहित्य बिखरे हुए हैं। और वे वेदवाणी संस्कृत में होने तथा एकत्र नहीं होने से उसका सब को लाभ प्राप्त नहीं हो सकता। और सनातनधर्म में पंचदेवोपासना की मान्यता है—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्।।

सूर्य, गणेश, देवी, शिव और भगवान केशव (विष्णु) इन पाँच देवताओं का सभी कार्यों में पूजन करना चाहिए।

अतएव प्राचीन साहित्य में बिखरे हुए दैव तात्त्विक साहित्य का यथासाध्य एकत्र संग्रह कर उसी के प्रमाण संदर्भों के परिवेश में हिन्दी भाषी जन हितार्थ इन ग्रन्थों का लेखन नहीं किया गया है। अपने वानप्रस्थ आश्रम जीवन समय का सदुपयोग अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में परमपिता परमात्मा के विभिन्न स्वरूप अवतारों का स्मरण, मनन, स्तवन, अर्चना पूजा हो जाए, यही इसका मुख्य उद्देश्य रहा है। यह अनेक ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं के साहित्य का संकलन मात्र है। इस ग्रन्थ के पठन मनन द्वारा पाठकगण परमपिता परमात्मा ब्रह्मस्वरूप भगवान गणेशजी की भक्ति, ज्ञान, विद्या अपनी शुभ मनोकामनाओं की सिद्धि लाभ पूर्ति प्राप्त करेंगे; यही मेरा लाभ व परम सौभाग्य होगा और परिश्रम सफल एवं जन्म कृतार्थ होगा।

लेखक एक स्वल्प बुद्धि मानव होकर परब्रह्म परमात्मा भगवान के विविध अवतारों स्वरूपों के तात्त्विक विषय में लेखनी उठाए यह एक छोटा सा पक्षी चन्द्रमा पर पहुँचने की चेष्टा करे ऐसा ही है। किंतु भगवान गणपति, माँ सरस्वती, कुमारी, कुमार, सिद्ध, किन्नर, सूर्यादि नवग्रह, ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि समस्त देवी-देवगण, जन्मदाता, माता-पिता एवं सर्व पूर्वज पितृगण तथा अन्य सर्व ही गुरुवर्यों के चरणों में नमन कर ग्रन्थ लेखन का शुभारम्भ किया था। उनही सबकी कृपा आशीर्वाद अनुग्रह द्वारा लेखक की वृद्ध अवस्थावश कार्यक्षमताएँ ढीली होते हुए भी यह ग्रन्थ तैयार होकर प्रस्तुत हो रहा है। यह कार्य परम पूज्य इष्ट देवों व पूज्य पितृगणों ने ही अपनी अलक्षित शक्ति प्रेरणा ज्ञानाभास द्वारा ही कराया है। जिसकी अनुभूति समय-समय पर अनेकों बार परोक्ष-अपरोक्ष रूप में लेखक को होती रही है।

इस पुण्यप्रद कार्य में कई धर्मप्राण पूज्य महानुभावों, विद्वानों, धनीमानी सज्जनों, भाईयों, बहनों द्वारा साहित्य संग्रह या परोक्ष अपरोक्ष किसी भी प्रकार से सहायता सहयोग मिले हैं। ग्वालियर रयोन, भारत कोमर्स इन्डस्ट्रीज के अनेक कर्मचारी अधिकारीगण सम्मिलित करने पर वृहत्संख्या में हैं। इनमें सर्वाधिक

सुरुचि बाबू दुर्गाप्रसादजी मण्डेलिया की सर्वदा बनी रही है। इन सबके सुरुचि सहयोग चिरस्मरणीय रहेंगे। हम उन सब के प्रति आभारी हैं।

डॉ. प्रभाकरजी शास्त्री साहित्य-धर्मशास्त्राचार्य, एम.ए. (हिन्दी-संस्कृत) पी.एच डी; डी. लिट्; अध्यक्ष-राजस्थान संस्कृतपरिषद् एवं अध्यक्ष आचार्य संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर तथा महारानी कॉलेज जयपुर, संयोजक संस्कृत पाठ्यक्रम मण्डल तथा सदस्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर (राजस्थान) ने अपने विचार प्राक्कथन के रूप में लिखने की कृपा की है। उनके प्रति मैं आभारी हूँ।

डॉ. वेद प्रकाशजी शास्त्री एम.ए; पी.एच-डी; डी. लिट्; डी.एस.सी; आयुर्वेद रत्न, आयुर्वेद बृहस्पति, विद्या भास्कर, हैदराबाद (आंध्र) ने अपने विचार आमुख के नाम से लिखने का कष्ट किया है। मैं इनके प्रति आभारी हूँ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन से पूर्व जिन परम पूज्यपाद धर्म, गुरुओं, धर्ममर्मज्ञ वरिष्ठ विद्वानों ने ग्रन्थावलोकन एवं संक्षिप्त परिचय अवलोकन करने का कष्ट कर अपने आशीर्वाद, मङ्गलकामनाएँ एवं शुभसम्मतियाँ प्रदान करने का अनुग्रह किया है। उन सबका ही चिरकृतज्ञ ऋणी हूँ।

शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति के कार्यरत नहीं होने के कारण 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ के मुद्रण प्रकाशनादि की व्यवस्था अर्चना प्रकाशन, अजमेर (राजस्थान) द्वारा डॉ० बद्रीप्रसाद जी पंचोली, एम०ए०, (हिन्दी-सस्कृत) पी-एच० डी०, साहित्य रत्न ने तथा पुस्तक मुद्रणार्थ आर्थिक आय-व्यय का विवरण तैयार करने एवं पुस्तकों के तैयार हो जाने पर मंगवाने वितरण करने का कार्यभार श्री धीरेन्द्र ओझा, एम०ए० अधीक्षक भगवान् शेषशायी बिरला मन्दिर नागदा ने स्वीकार किया है। उक्त दोनों महानुभाव सर्वदा ही मेरा पितृ समान समादर करते हुए मेरे सभी ग्रन्थों के लेखन प्रकाशन मुद्रणादि में सहयोग प्रदान करते रहे हैं। मैं इनके प्रति आभारी हूँ।

भगवान् गणेश विषयक कतिपय साहित्य गुजराती भाषा में प्राप्त होने के कारण उसके आवश्यक स्थलों का हिन्दी अनुवाद श्रीमती कुमोदिनी धर्मपत्नी श्रीमान् महेशचन्द्रजी बटाविया तथा श्रीमती ज्योति साबू बी०ए० धर्मपत्नी श्रीमान् प्रमोद कुमार जी साबू ने सहयोग किया है। मैं इनके प्रति भी आभारी हूँ।

पुस्तक के मुद्रण में कतिपय अशुद्धियाँ रह गई हैं। जिसके लिए पुस्तक के अन्त में शुद्धि पत्र लगाया गया है। कृपया पाठकगण शुद्धि के अनुसार पढ़ने का कष्ट करेंगे।

यह परम पवित्र पुण्यप्रद बृहत्यज्ञ कार्य इतनी शीघ्रता से पूर्ण हो पाया है। इसका यह सब श्रेय उक्त पूज्यवर्यों, महानुभावों, विद्वानों, श्रीमानों, भाई, बहिनों को ही है। मैं परमपिता परमात्मा भगवान् गणेशजी के श्री चरणों में करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि भगवान् उन सभी को सपरिवार सानन्द रहते हुए निरन्तर अपने-अपने कार्यों में उन्नति प्रदान करें। उनके विचार बुद्धि धार्मिक, आध्यात्मिक विषयों में विशेष रुचिकर प्रगति करावें और वे अपना मन अविचल दृढ़ भक्ति में सर्वदा लगाये रखें।

मेरे परम इष्टदेव परमपिता भगवान् गणेशजी महाराज अपनी शक्तियों सहित इस ग्रन्थ को मेरी वाङ्मयी पूजा के रूप में स्वीकार कर आशीर्वाद प्रदान कर अनुग्रह करें कि मेरा मन और चित्त परब्रह्म परमात्मा के ही चिन्तन मनन में सर्वदा लगा रहे।

यह 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ ब्रह्मस्वरूप आदिपूज्य भगवान् गणेशजी महाराज तथा उनकी सर्वशक्तियों के श्रीचरणों में मेरी सम्पूर्ण श्रद्धा एवं भक्ति से समर्पण करता हूँ। वे सबके विघ्नों का निवारण करते हुए सबको आनन्द मङ्गल, स्वस्थता, सद्बुद्धि, विद्या, लक्ष्मी तथा ईश्वर भक्ति प्रदान करें।

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरूर्न द्वयाविनः।
विश्वाइदस्माद्ध्वरसो विवाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते॥
(ऋग्वेद ३।२३।१८)

हे ब्रह्मणस्पति! (गणपति) आप उत्तम रक्षा करने वाले जिनका पालन करते हैं, उनको दुःख अथवा त्रास नहीं होता है। उनको पाप भी नहीं लगता है। उनको शत्रु कहीं भी त्रास (कष्ट) नहीं दे सकते हैं। अर्थात् धूर्त, ठग, लोभी भी उनकी कोई हानि नहीं कर सकते हैं। क्योंकि आप सर्वदा उनकी दुष्टों से रक्षा करते हैं।

एकदन्त महाकायं लम्बोदर गजाननम्।
विघ्नाशकरं देवं हेरम्ब प्रणमाम्यहम्॥
(गणपति स्तोत्र १८)

'एक दन्त वाले, बड़े शरीर वाले, स्थूल उदर वाले, हाथी के समान मुखवाले और विघ्नों का नाश करने वाले गणेश देव को मैं प्रणाम करता हूँ।

माघ शुक्ला ५ वसन्त
गुरुवार सम्वत् २०४२ विक्रम
तदनुसार १४ फरवरी सन् १९८६

विनीत :
रामप्रसाद शर्मा
खेतड़ी (राजस्थान) निवासी

अनुक्रमणी

			पृष्ठ संख्या
प्राक्कथन			४
आमुख			९
आत्म-निवेदन			१२
सोपान संख्या	१	मंगलाचरण	१
,,	२	गणेशावतार	६
,,	३	गणेश गजमुख हुए	२०
,,	४	प्रथम पूजा का रहस्य	२४
,,	५	मंगलमय विवाह	३३
,,	६	श्री गणेशलोक	४०
,,	७	गणेश तत्त्व विवेचन	४३
,,	८	गणपतिसहस्रनामस्तोत्र	५५
,,	९	गणपतिक्षेत्र	९९
,,	१०	भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी	१०५
,,	११	चन्द्रदर्शननिषेध, दोषपरिहार	१०९
,,	१२	चोथमाता	११२
,,	१३	गणेशप्रिय चतुर्थी	११७
,,	१४	गणेश की देवों पर कृपा	१२७
,,	१५	शुक्ल शर्मा-विद्रुमा पर कृपा	१२८
,,	१६	वेदव्यास पर कृपा	१३१
,,	१७	बल्लाल भक्त पर कृपा	१३३
,,	१८	गणेश पूजन में सावधानी	१३६
,,	१९	पुराणोक्त सर्वदेवपूजनविधि	१४१
,,	२०	वेदोक्त गणपति पूजन विधि	१४३
,,	२१	गणपति पूजन विधि	१५०
,,	२२	गणपति पूजा विधि	,,
,,	२३	गणेश-स्तवन	१५९
,,	२४	ग्रन्थ समापन-प्रार्थना	१७१
परिशिष्ट—		आशीर्वाद, मंगलकामनादि	१८५

॥ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ॥

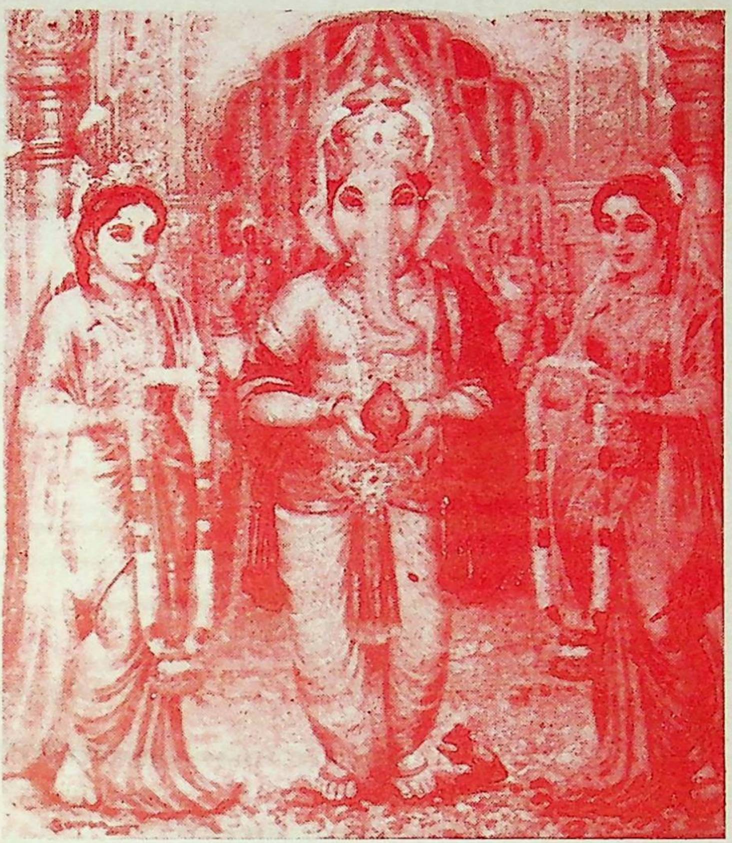

समर्पण

भक्तों को नित चिन्ता हरते, विघ्नहरण महान् ।
तेरे चरणों में अर्पित है, यह तेरा ही तत्त्व-ज्ञान ॥
मंगल-मूर्ति अग्रगण्य, मुझे देवो वरदान ।
मनन करूँ नित मनमें, तेरा ही गुणगान ॥

भाद्रपद शुक्ला ४ चतुर्थ्याम्
गुरुवासरे सम्वत् २०४१ विक्रम,
दिनांक ३० अगस्त सन् १९८४ ई.

रामप्रसाद शर्मा, खेतड़ी निवासी

ग्रन्थकार--

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला

आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि अलंकृत

सोपान १

ॐ

।। श्री गणेशायनमः ।।

गणेश-तत्त्व-दर्शन

मङ्गलाचरण

हे हेरम्ब त्वमेह्ये हि ह्यम्बिका त्र्यम्बकात्मज ।
सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्ष लक्षलाभ पितुः पितः ।।
नागास्यं नागहारं त्वां गणराजं चतुर्भुजम् ।
भूषितं स्वायुधैर्दिव्यैः पाशांकुशपरश्वधैः ।।
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः ।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे ।।

'हे माता पार्वती तथा त्रिलोचन महादेव के पुत्र हेरम्ब ! आप आइए, आइए । आप सिद्धि और बुद्धि के पति हैं, तीन नेत्रों से सुशोभित हैं, लाखों का लाभ कराने वाले तथा पिता के पिता हैं; यहां पधारिए । आप गजानन हैं, नागमय हार धारण करते हैं, आपके चार भुजाएं हैं, आप गणों के राजा हैं । पाश, अंकुश और परशु आदि दिव्य निधि आयुध आपके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं । मैं पूजन के लिए और अपने इस यज्ञ की रक्षा के लिए भी आपका आवाहन करता हूँ । यहां पधार कर आप मेरी पूजा ग्रहण करें और इस यज्ञ की रक्षा करें ।

ॐ नि षु सीद गणपते गणेषु
त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम् ।
न ऋते त्वत्क्रियते किं चनारे
महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च ।। (ऋ. म. १० अनुवाक ९० सूक्त ११२)

'हे गणपते ! आप अपने गणों सहित पधार कर भली-भाँति यहाँ विराजमान हो जाएं; क्योंकि सब देवता और ऋषियों का कथन है कि आप क्रान्तदर्शी कवियों में सर्वोपरि मेधावी हैं । आपके विना बाहर अथवा भीतर, दूर या समीप कोई भी कर्म नहीं किए जा सकते हैं । हे ऋद्धि, सिद्धि और बुद्धि के एकच्छत्र रस वर्षाने वाले सम्राट् ! आप अपना महान् अर्चनीय एवं विचित्र (तत्त्व-दर्शन) ज्ञानप्रकाश मेरे हृदय में प्रकट करने का अनुग्रह कीजिए ।

हे गणपति ! आप जीवों की मनोवृत्तियों के एवं इन्द्रियगणों के अधिपति जनमनगण के अधिनायक हो । मेरे जीव में, अन्तःकरण में, इन्द्रियों में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान प्रकट कीजिए । स्वयं आप उनमें अभिव्यक्त हो जाइए । यह पुण्यप्रद यज्ञकार्य

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष प्रदान करने में सफल हो, इस प्रकार के सभी प्रयत्नों का मार्ग-दर्शन कराने का अनुग्रह करें।

वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा।।
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक:।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायक:।।
धूमकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजानन:।
द्वादशैतानि नामानि य: पठेच्छृणुयादपि।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।

'कोटि सूर्यों के समान महातेजस्वी, विशालकाय और टेढ़ी सूँड वाले गणपतिदेव ! आप सर्वदा सब कार्यों में मेरे विघ्नों का निवारण करें। सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशक, विनायक, धूमकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन—ये गणेशजी के बारह नाम हैं। जो मनुष्य विद्यारम्भ, विवाह, गृह प्रवेश, यात्रा, संग्राम (युद्ध) तथा सकट के अवसर पर इन बारह नामों का पाठ और श्रवण करता है, उसके कार्य में विघ्न उत्पन्न नहीं होता।'

नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णु रूपाय ते नम:।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नम:।।
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक।।
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा।।
गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम।।

'आप ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्ररूप और गजरूप हैं। इन सभी रूपों में आपको बार-बार नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्व का रूप आपका ही स्वरूप है। आप ब्रह्मचारी हैं, आपको नमस्कार है। विनायक आप भक्तप्रिय देवता हैं, आपको नमस्कार है। लम्बोदर आपको मोदक (लड्डू) सदा ही प्रिय हैं, आपको नमस्कार है। देव, आप सदा मेरे सब कार्यों में विघ्नों का निवारण करें। भगवान् गणेशजी महाराज ! आपकी इस पूजा में जो कर्म न्यून तथा अधिक हों, उन सबके द्वारा सर्वात्मा भगवान् गणपति आप सर्वदा मुझ पर प्रसन्न रहें। भूल त्रुटियों के प्रति क्षमा करें।

।। ॐ सूर्यादि-नवग्रहेभ्यो नम: ।।

ॐ ब्रह्मा मुरारी त्रिपुरान्तकारी भानुशशी भूमिसुतोबुधश्च।
गुरुश्च शुक्र: शनिराहुकेतव: सर्वे ग्रहा: शान्तिकरा भवन्तु।।

'ब्रह्मा, मुरारी, त्रिपुरारी, सूर्य, चन्द्रमा, भूमिसुत, (भौम), बुध, गुरु, शुक्र, शनि तथा राहु-केतु सभी ग्रह शान्ति धारण कर पूजा यज्ञ में सफलता प्रदान करें।

।। ॐ गणपत्यादि पञ्चलोकपालेभ्यो नमः ।।
।। ॐ इन्द्रादि दश दिक्पालेभ्यो नमः ।।
ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।।
हृष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवताः ।
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश ।।
(ॐ गौर्यादि षोडशमातृकाभ्यो नमः ।।)
।। ॐ चतुः षष्टियोगिनोमातृकाभ्यो नमः ।।
शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे ।
सर्वदा सर्वदास्माकं सन्निधि सन्निधिं क्रियात् ।।
सरस्वतीं च तां नौमि वागधिष्ठातृ-देवताम् ।
देवत्वं प्रतिपद्यन्ते यदनुग्रहतो जनाः ।।

'शरत्काल में उत्पन्न कमल के समान मुखवाली और सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली शारदा सब सम्पत्तियों की शक्तियों सहित मेरे मुख में सर्वदा निवास करें । उन वचन की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती को प्रणाम करता हूँ, जिनके अनुग्रह से मनुष्य देवता बन जाता है ।'

कुमारी च कुमारश्च गणेशश्च विनायकः ।
सिद्धाश्च किंनराश्चापि मङ्गलं प्रदिशन्तु नः ।।

'कुमारी, कुमार, गणेश, बिनायक, सिद्ध तथा किन्नरगण हमें मङ्गल प्रदान करें ।'

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।।

'नारायणी ! तुम सब प्रकार का मङ्गल प्रदान करने वाली मङ्गलमयी हो कल्याण प्रदान करने वाली शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रों वाली गौरी हो. आपको नमस्कार है ।'

रक्तश्वेत हिरण्यनीलधवलैर्युक्तां त्रिनेत्रोज्ज्वलां
रक्तां रक्तनवस्रजं मणिगणैर्युक्तां कुमारीमिमाम् ।
गायत्रीं कमलासनां करतलव्यानद्ध कुण्डाम्बुजां
पद्माक्षीं च वरस्रजं च दधतीं हंसाधिरूढां भजे ।।

'जो रक्त. श्वेत, पीत, नील और धवल वर्णों के श्रीमुखों से सम्पन्न हैं, तीन नेत्रों से जिनका विग्रह देदीप्यमान हो रहा है, जिन्होंने अपने रक्तवर्ण शरीर को नूतन लाल कमलों की माला से सजा रखा है, जो अनेक मणियों से अलंकृत हैं, और कमल के आसन पर विराजमान हैं, जिनके दो हाथों में कमल और कुण्डिका एवं दो हाथों में वरमुद्रा तथा अक्षमाला सुशोभित हैं, उन हंस की सवारी करने वाली, कुमारी-अवस्था से सम्पन्न भगवती माँ गायत्री का भजन करता हूँ ।'

सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनो ।
मंत्रपूते सदा देवि महालक्ष्मी नमोऽस्तुते ।।

'सिद्धि, बुद्धि, भोग और मोक्ष प्रदान करने वाली हे मंत्रपूत भगवती महालक्ष्मी! आपको सर्वदा प्रणाम है।'

नमः परमदेवाय नमः परमहेतवे ।
नमः शिवाय शान्ताय नमः शिवतराय ते ।।

'आप परम आराध्य को नमस्कार है। आप परम कारण को नमस्कार है। आप शिव को नमस्कार है और परम कल्याणमय प्रभु को नमस्कार है।'

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ।।

'भगवान् शङ्ख और चक्र (तथा गदा-पद्म) धारण किए हुए हैं, उनके मस्तक पर सुन्दर किरीट-मुकुट और कानों में कुण्डल हैं। वे पीताम्बर पहने हुए हैं, उनके नेत्र कमल-दल के समान कोमल, विशाल और खिले हुए हैं। उनके वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि, रत्नों का चन्द्रहार और श्री का चिह्न (स्वर्ण रेखा) सुशोभित है। ऐसे चतुर्भुज भगवान् विष्णु (नारायण) को मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।'

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ।।

'जो सभी देवताओं को अपने तेज से तेजस्वी बनाते हैं, जो देवताओं में सर्वश्रेष्ठ इन्द्र अथवा अग्नि के रूप में स्थित हैं, जो सब देवताओं से पहले ब्रह्मा के रूप में प्रकट हुए, उन ब्राह्मी दीप्ति (ब्रह्म प्रकाश) वाले आदित्य प्रजापति को हम नमस्कार करते हैं।'

मर्कटेश महोत्साह सर्वशोकविनाशन ।
शत्रून् संहर मां रक्ष श्रियं प्रयच्छ मे प्रभो ।।

'हे वानराधीश (हनुमानजी)! महान् उत्साही, सब प्रकार के शोकों का नाश करने वाले प्रभो! मेरे शत्रुओं का नाश करो, मेरी रक्षा करो और मुझे श्री अर्थात् (कार्यसिद्धि लक्ष्मी) प्रदान करो।'

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

'मैं अज्ञानरूपी रतौंधी (रोग) से अंधा हो रहा था, जिन्होंने ज्ञानरूपी अञ्जन की शलाका से मेरा अंधापन दूर कर दिया है, उन श्री गुरुदेव को नमस्कार है।'

हे मातः! हे पितः! अकिञ्चन पुत्र
आपसे यह वर पाए—
श्रीगणेश के 'तत्त्वामृत' को
विद्वज्जन सह पिए-पिलाए ।

सनातन धर्म के पुराण, संहिता, स्मृति, नीति आदि के कितने ही ग्रन्थों में लिखा मिलता है—

शृङ्गाटके ग्राम मध्ये विष्णोर्वा शंकरस्य च ।
गणेशस्य रवेर्देव्याः प्रासादान् क्रमतो न्यसेत्।। (शुक्रनीति ४-३९६)

'राजा का कर्तव्य है कि वह चौराहों पर, गांवों के बीच में, विष्णु, शंकर, गणेश, सूर्य तथा दुर्गा के मन्दिर निर्माण करावे।'

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्॥

'सभी कार्यों में सिद्धि प्राप्ति के लिए श्रीगणपति के साथ श्री सूर्य, श्री दुर्गा, श्री शिव और श्री विष्णु की पूजा करना चाहिए।'

शैवा: सौराश्च गणेशा वैष्णवा: शक्तिपूजका:।
तमेव प्राप्नुवन्तीह वर्षाप: सागरं यथा॥
एक: स पञ्चधा जात: क्रियया नामभि: किल।
देवदत्तो यथा कश्चित्पुत्राद्याह्वान नामभि:॥
(शतकोटि रामायणान्तर्गत आनन्द रामायण विलास काण्ड ८।९-१०)

'इस संसार में शैव (शिवोपासक), सौर (सूर्योपासक), गणेश (गणेशोपासक), वैष्णव (विष्णु उपासक) तथा शक्ति (देवी) पूजक अर्थात् पञ्चदेवोपासक उस ब्रह्म को उसी प्रकार से प्राप्त कर लेते हैं, जैसे वर्षा का जल सागर में समा जाता है। वह ब्रह्म एक है और वही नाम और कर्म के प्रभाव से पाँच रूपों में पञ्चदेवता के रूप में विभक्त होता है। उदाहरण के लिए जैसे देवदत्त नाम का एक मनुष्य है। वह किसी का पुत्र, किसी का भाई, किसी का पिता और किसी का चाचा भी होता है, लेकिन तत्त्वत: वह एक ही है।'

सन् १९६४ ईस्वी में जीविकोपार्जन भार से मुक्त होकर वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर भावी जीवन के समय सदुपोग हेतु स्वान्त:सुखाय अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में शिव-तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन, विष्णु-तत्त्व-दर्शन तथा ब्रह्म-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों का प्रणयन कर उनका प्रकाशन कराया। इसी प्रकार से भगवान् गणपति की कृपा प्रेरणा से यह पंचम ग्रन्थ गणेश-तत्त्व-दर्शन का शुभारम्भ किया जा रहा है।

भगवान् गणेश विद्या, बुद्धि और कार्य सिद्धि के अधिष्ठाता देव हैं, वे अन्य सब ही देवों का तात्त्विक विवेचन करने व कराने वाले हैं। उनको तात्त्विक व्याख्या मुझ जैसे अकिञ्चन स्वल्प बुद्धि मानव द्वारा की जाए, नितान्त ही हास्यास्पद तथा असम्भव सा प्रतीत हो रहा है। किन्तु भगवान् गणेश की ही कृपा प्रेरणा से इस यज्ञ कार्य का शुभारम्भ किया जा रहा है। भगवान् गणेश सब ही देवीदेवताओं के शुभ कार्य पुण्यप्रद यज्ञों को पूर्ण कराते हैं और यह शुभ पुण्यप्रद यज्ञ कार्य तो स्वयं भगवान् श्री गणेश जी महाराज का ही है। वे ही इस यज्ञ कार्य को भी पूर्ण कराएंगे, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। अतएव भगवान् गणेशजी के श्री चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

शिव का, शक्ति-शिवा, विष्णु का, ब्रह्मा-तत्त्व का किया निवेदन।
तव प्रसाद से ही कर पाऊँ, हे गणेश! तव तत्त्वोद्घाटन॥

सिद्धि बुद्धि सहित भगवान् गणेश जी महाराज के श्री चरणों में बारम्बार प्रणाम है।

सोपान २

परब्रह्म गोलोकनाथ भगवान् श्रीकृष्ण का महासती पार्वती के पुत्ररूप में गणेशावतार

एकदन्तं महाकायं तप्तकाञ्चनसंनिभम् ।
लम्बोदरं विशालाक्षं वन्देऽहं गणनायकम् ।।

(पद्मपुराण, सृष्टि ६६/२)

'विशालकाय, तपाए हुए स्वर्ण के समान प्रकाश वाले लम्बोदर, बड़े-बड़े नेत्रों वाले श्री एकदन्त गणनायक की मैं वन्दना करता हूँ ।'

वैराग्य धर्मज्ञान सम्पन्न शैलपुत्री पार्वती के साथ विवाह होने के पश्चात् मङ्गलस्वरूप चराचर आत्मा भगवान् शिव उनको अपने साथ लेकर अत्यन्त रमणीक सुन्दर निर्जन वन में चले गए । वहाँ अनेक समय तक देवाधिदेव महादेव का आनन्द विहार होता रहा । एक दिन शिवप्रिया पार्वती ने भगवान् शंकर से निवेदन किया—'प्रभो ! मैं एक श्रेष्ठ पुत्र चाहती हूँ ।'

सर्वभूतरति त्रिपुरारि ने त्रैलोक्यसुन्दरी पार्वती से प्रसन्न होकर कहा—'प्रिये ! मैं तुम्हें सम्पूर्ण व्रतों में से एक श्रेष्ठ व्रत बतलाता हूँ, जो सम्पूर्ण अभीष्ट सिद्धि का बीजरूप, परम मङ्गलप्रदायक तथा हर्ष प्रदान करने वाला है । उस सर्व प्रकार के सुख आनन्दप्रद व्रत का नाम 'पुण्यक' है । उस व्रत-अनुष्ठान से उत्तम श्रेष्ठ फल प्रदान करने वाला अन्य कोई यज्ञ, व्रत, देवाराधन अनुष्ठान नहीं है । उस व्रत के अनुष्ठान में अमित धन, अगणित सामग्रियां, अगणित ही विद्वानों तथा प्रबन्धकों-परिचारकों की आवश्यकता होती है । यह परम पुण्यमय व्रत राजेन्द्र-पत्नियों और देवियों के लिए ही सुख-साध्य एवं महा आनन्द प्रदान करने वाला है । साध्वी स्त्रियों के लिए तो यह व्रत प्राणाधिक प्रिय है । तुम श्री हरि का स्मरण कर यह व्रत आरम्भ करो । इस अनुष्ठान की पूर्ति एक वर्ष में होती है ।

शिवप्राणवल्लभा पार्वती ने कहा—'प्रभो ! इस पुण्यक-व्रत की क्या विधि है ? यह कब,कैसे आरम्भ किया जाता है और कब इस अनुष्ठान की किस विधि से पूर्ति की जाती है ?'

जगद्गुरु कर्पूरगौर भगवान् शिव ने कहा—'प्रिय पार्वती ! सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाला, समस्त सत्कीर्ति प्रदान करने वाला तथा परम शुभप्रद इस पुण्यक व्रत की विधि संक्षेप में बतलाता हूँ । आप ध्यान से सुनिये—

पुण्यक-व्रत की संक्षिप्त विधि

इस व्रत का आरम्भ माघ मास के शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के दिन किया जाता है। उत्तम व्रत करने को व्रतारम्भ के पहले दिन उपवास करना चाहिए और दूसरे दिन ब्राह्ममुहूर्त्त में शय्या त्याग कर शौचादि से निवृत्त हो, निर्मल जल में स्नान करे। फिर आचमनादि करने के पश्चात् भगवान् श्री हरि को अर्घ्य प्रदान कर शीघ्र ही घर लौट आए। घर पर नित्य कर्म पूर्ण कर लेने के पश्चात् सुयोग्य शुद्धाचरण उत्तम सवशास्त्रनिष्णात पुरोहित का वरण करे, तदनन्तर स्वस्तिवाचन-पूर्वक कलश-स्थापन करे। तत्पश्चात् भगवान् नारायण का स्मरण-ध्यान कर संकल्प करे। तत्पश्चात् यह महान् व्रतानुष्ठान आरम्भ करे।'

फिर सौन्दर्य, नेत्रदीप्ति, विविध अङ्गों के सौन्दर्य, पति सौभाग्य आदि के लिए विभिन्न वस्तुओं के संख्या सहित समर्पण करने का उपदेश करते हुए दयामय भगवान् शिव ने कहा—'सुव्रते ! पुत्र प्राप्ति के लिए कूष्माण्ड, नारियल, जम्बीर तथा श्रीफल—इन फलों को श्रीहरि की सेवा में समर्पित करना चाहिए। व्रत-काल में नाना प्रकार के संगीत और वाद्यों से परम प्रभु को प्रसन्न करने का प्रयत्न करना उचित है। हरिभक्ति की विशेष प्राप्ति के लिए सुगन्धित पुष्पों की (बिना टूटी हुई) एक लक्ष माला भक्तिपूर्वक प्रभु को समर्पण करना चाहिए। उनकी प्रसन्नता के लिए विविध प्रकार के मीठे एवं स्वादिष्ट व्यञ्जनों का भोग लगाना चाहिए। तुलसीदल मिश्रित अनेक प्रकार के सद्गन्धपूरित पुष्प समर्पित करने से श्रीभगवान् हरि की अधिक प्रसन्नता प्राप्त होती है। जन्म-जन्मान्तर में धन-धान्य की वृद्धि के लिए व्रतकाल में व्रती को प्रतिदिन एक सहस्र ब्राह्मणों को तृप्तिकर भोजन करना चाहिए। देवी ! प्रतिदिन पूजन के समय पुष्पों से भरी हुई सौ अञ्जलियाँ समर्पित करे तथा भक्ति की वृद्धि के लिए सौ बार प्रणाम करना चाहिए। सुव्रते ! व्रतकाल में छः मास तक हविष्यान्न, पाँच मास तक फलाहार और एक पक्ष तक हवि का भोजन तथा एक पक्ष तक केवल जल पीकर रहना चाहिए। अग्निदेव के लिए सौ अखण्ड रत्नदीपों का दान करना चाहिए। रात्रि में कुशासन बिछाकर नित्य जागरण करना उत्तम है। व्रती को व्रत की शुद्धि के लिए स्मरण, कीर्तन, केलि, प्रेक्षण, गुह्यभाषण, संकल्प, अध्यवसाय तथा क्रियानिष्पत्ति—इन अष्टविध मैथुनों का परित्याग कर देना चाहिए।

देवी ! इस प्रकार से व्रत के भली भाँति पूर्ण होने पर व्रतोद्यापन करना चाहिए। उस समय तीन सौ साठ डलिया जो वस्त्रों से आच्छादित तथा भोजन के पदार्थ, यज्ञोपवीत और मनोहर उपहारों से सजी हुई हों, दान करना चाहिए। एक हजार तीन सौ साठ ब्राह्मणों को भोजन तथा एक हजार तीन सौ साठ तिल की आहुतियाँ देने का विधान है। फिर व्रत समाप्त होने पर विधिपूर्वक एक हजार तीन सौ साठ स्वर्ण मुद्राओं की दक्षिणा देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त व्रत-समाप्ति के दिन दूसरी दक्षिणा भी बतलाऊंगा। देवी ! इस व्रत का फल यही है कि श्री हरि में भक्ति दृढ़ हो जाती है। श्री हरि के सदृश तीनों भुवनों में विख्यात पुत्र उत्पन्न होता है और सौन्दर्य, पति, सौभाग्य, ऐश्वर्य और विपुल धन की प्राप्ति होती है। महेश्वरी ! यह व्रत प्रत्येक जन्म में समस्त वाञ्छित सिद्धियों का बीज

है, जिसका मैंने इस प्रकार से वर्णन किया है। अतः देवी ! तुम भी अब इस व्रत का अनुष्ठान करो। साध्वि ! तुम्हें अवश्य पुत्र उत्पन्न होगा। इस प्रकार पुण्यक व्रत की विधि और उसका माहात्म्य सुनाने के पश्चात् परमकरुणामय चन्द्रशेखर ने अपनी परमसती सहधर्मिणी पार्वती से कहा—

'प्रिये, इस व्रत के लिए मैं पुष्प और फल लाने के लिए सौ शुद्ध ब्राह्मणों को, सामग्री एकत्र करने के लिए एक सौ भृत्यों को एवं अत्यधिक दास-दासियों को नियुक्त कर देता हूँ। साथ ही समस्त व्रत विधियों को जानने वाले, वेद-वेदाङ्ग के पारंगत महाविद्वान्, सर्वश्रेष्ठ हरिभक्त, सर्वज्ञ एवं परमज्ञानी सनत्कुमार को पुरोहित के पद पर नियत करता हूँ। तुम इस व्रत का श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पालन करो। तुम्हें निश्चय ही परम दुर्लभ तुम्हारी इच्छानुकूल पुत्र-रत्न की प्राप्ति होगी।'

पार्वती द्वारा पुण्यक-व्रत अनुष्ठान

कैलाशपार्वतनन्दिनी उमा ने भगवान् शिव की आज्ञानुसार प्रसन्नतापूर्वक महान् पुण्यक-व्रत के अनुष्ठान का सुदृढ़ निश्चय कर पुष्प और फल आदि व्रतोपयोगी उपकरणों को एकत्र करने के लिए ब्राह्मणों तथा कार्यकर्त्ता कर्मचारियों को प्रेरित किया। सभी सामग्रियों के एकत्र हो जाने और आवश्यक सभी प्रबन्ध कार्य यथावत् चलने की स्थिति हो जाने पर देवविद्या प्रकाश करने वाली भगवती पार्वती ने शुभ-मुहूर्त में व्रतारम्भ किया।

अनुष्ठानाचार्य परम तेजस्वी वेद विशारद ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार भी वहां पहुँच गये। सपत्नीक ब्रह्मा भी आ गए। भगवान् महेश्वर भी उपस्थित हुए। विविध रत्नाभरणों से सुशोभित अपनी प्रियतमा लक्ष्मी एव अपने पार्षदों सहित अत्यधिक सामग्रियों के अम्बार को लिए रत्नजटित विमान पर विराजमान हुए भगवान् विष्णु भी वहां पधार आए। उसी समय सनक, सनन्दन, कपिल, धर्मपुत्र, नरनारायण एवं सब ही प्रख्यात तपोमूर्ति, विविध शास्त्रनिष्णात ऋषिगण अपने शिष्य मण्डलियों सहित पराम्बा के अनुष्ठान में सम्मिलित होने के लिए वहाँ उपस्थित हुए।। शम्भुवामा उमा के उस व्रत के अवसर पर सब ही दिक्पाल, देवता, यक्ष, किन्नर और गणों सहित समस्त गिरि-समुदाय भी एकत्र हुआ। पर्वतराज हिमालय भी अपनी पुत्री के व्रत में रत्नाभरणों से अलंकृत हो पत्नी, पुत्रगण, अपने अनुयायियों सहित नाना प्रकार के द्रव्यों से संयुक्त बहुत बड़ी सामग्रियाँ और व्रतोपयोगी मणि माणिक्य-रत्न की वृहत् राशि लेकर हर्षातिरेक से पहुँच कर सम्मिलित हुए। वे भी पृथ्वी में उत्पन्न अनेक दुर्लभ वस्तुएँ अपने साथ लाए थे। एक लक्ष गजरत्न, तीन लक्ष अश्वरत्न, दस लक्ष गोरत्न, एक करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ, चार लक्ष मुक्ता, एक सहस्र कौस्तभमणि और अन्यन्त स्वादिष्ट एवं सुमिष्ट पदार्थों के एक लक्ष भार थे।

श्रद्धामूर्ति हिमगिरितनया के उक्त पावनतम महान् व्रत में ब्राह्मण, मनु, नाग एवं विद्याधरों के अनेक समुदाय तथा संन्यासी, भिक्षुक एवं बन्दीगण भी पहुँच गए।

उस समय कैलास पर्वत की अपूर्व शोभा हो रही थी। राजमार्ग पर चन्दन का छिड़काव हो रहा था। पद्मरागमणि निर्मित शिव-मन्दिर में आम्रपल्लवों की वंदनवारें बंधी थी। कदली स्तम्भों का सौन्दर्य भी अद्भुत था। वह दूर्वा, धान्य, खील, फल और पुष्पों से अनोखे ढंग से सजा था। वहाँ का अलौकिक दृश्य देख कर उपस्थित देव, ऋषि-मुनि, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व एवं मनुष्य आदि सभी लोग आश्चर्यचकित हो मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे। सर्वत्र प्रसन्नता व्याप्त हो रही थी। सर्वत्र सात्विक आनन्द जैसे नृत कर रहा था। परम कल्याणमयी सृष्टि-स्थिति-संहारकारिणी जगदम्बा जो पावनतम व्रत में दीक्षित होने जा रही थी।

भगवान् शशाङ्क शेखर ने समस्त अभ्यागतों का सादर अभिवादन करते हुए उनके अनुरूप स्वच्छ, सुन्दर एवं सुखदायक निवास तथा भोजन आदि की व्यवस्था की। जहाँ पर त्रैलोक्यपति शिव एवं सर्वदारिद्रचदमनी जगज्जननी का निवास हो वहाँ कमी किसकी? करुणामूर्ति जगदीश्वरी के उक्त व्रतानुष्ठान के अवसर पर शचीपति इन्द्र दानाध्यक्ष, धनपति कुबेर कोषाध्यक्ष और स्वयं भगवान् सूर्य आज्ञा प्रदान करने वाले थे और वरुण व्यञ्जन परोसने का कार्य कर रहे थे।

संसार सागर से पार उतारने वाली सती शिरोमणि शिव-प्रिया के व्रतानुष्ठान के अवसर पर दूध, दही, घी, तेल, मधु, गुड़, चीनी आदि की लक्षाधिक नदियाँ बह रही थी। इसी प्रकार गेहूँ, चावल, जौ, चिवड़ आदि अनेक अन्नों के पर्वत-तुल्य असख्य ढ़ेर लग गये थे। उक्त दिव्य कैलास पर्वत पर स्वर्ण, रजत, मूँगा और मणियों की राशि पर्वतों के समान दिखाई दे रही थी।

निखिल सृष्टि नियामिका गिरिजा के श्रेष्ठतम व्रतोत्सव पर सिन्धुतनया लक्ष्मी ने विविध प्रकार के सुन्दर, सुमिष्ट एवं सुस्वादु उत्तम गन्धयुक्त व्यञ्जन तैयार किये थे। उस समय एक लाख ब्राह्मण परोसने का कार्य कर रहे थे। देवताओं और ऋषियों के साथ स्वयं भगवान् नारायण ने वहाँ भोजन किया। भोजनोपरान्त जब भगवान नारायण रत्न-सिंहासन पर विराजमान हुए तब चतुर ब्राह्मणों ने सुगन्धित ताम्बूल अर्पित किए। परम प्रभु नारायण देवता और ऋषियों से घिरे हुए थे। तेजस्वी पार्षद उन पर चँवर डुला रहे थे। ऋषि तथा सिद्ध प्रभु का स्तवन कर रहे थे। गन्धर्वगण श्रुति मधुर गीत गा रहे थे।

पितामह की प्रेरणा से अहिभूषण भगवान् शंकर ने बद्धाञ्जलि हो अत्यन्त विनयपूर्वक प्रभु की स्तुति करते हुए निवेदन किया—'भक्तवाञ्छाकल्पतरु प्रभो! मेरी एक प्रार्थना सुनिए। शैलजा उत्तम व्रत के द्वारा श्रेष्ठतम पुत्र एवं पति सौभाग्य की कामना करती है। आप सर्वज्ञ एवं सर्वान्तर्यामी हैं, आप परिणाम में मङ्गलदायिनी आज्ञा प्रदान करें।'

पशुपति ने पुन: क्षीरसागरशायी प्रभु की स्तुति की और विधाता के मुख की ओर देख कर मौन हो गए।

स्वर्गापवर्गदाता सर्वभूतपति शिवजी के वचन सुन कर श्री हरि ठठाकर हंस पड़े। फिर उन्होंने महादेवजी से कहा—'उमानाथ! आपकी सहधर्मिणी सन्तान

प्राप्ति के लिए जिस पुण्यक-व्रत का अनुष्ठान करना चाहती हैं, वह व्रतों का सारतत्त्व, दुराराध्य, सम्पूर्ण अभीष्ट फलों का देने वाला, सुखदायक एवं मोक्षप्रद है। फिर कहा—'साध्वी शिवा पुण्यक-व्रत का अनुष्ठान करें। इस व्रताचरण से सहस्रों राजसूय यज्ञों का पुण्य प्राप्त होता है।'

श्री नारायण ने आगे पुन: कहा—'त्रिनेत्र! इस व्रत में सहस्रों राजसूय यज्ञों के समान धन का व्यय होता है। अत: यह व्रत सभी साध्वी महिलाओं द्वारा साध्य नहीं है। इस पुण्यमय व्रत के प्रभाव से स्वयं परब्रह्म गोलोकनाथ श्रीकृष्ण पार्वती के अङ्क (गोद) में क्रीड़ा करेंगे। उनका नाम गणेश होगा, उनके स्मरण से ही विघ्नों का नाश हो जाया करेगा।'

भगवान् नारायण के यह वचन सुनकर त्रैलोक्य पावन त्रिलोचन हर्ष से गद्‌गद् हो गए। उन्होंने वह माङ्गलिक वार्तालाप अपनी प्राणप्रिया पार्वती को सुनाया तो उनकी प्रसन्नता की सीमा न रही। मुदितमन पार्वती व्रतारम्भ के लिए प्रस्तुत हुई, उसी समय भगवान् शंकर की प्रेरणा से विविध प्रकार के देववाद्य बज उठे।

सत्यस्वरूपा उमा ने स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करने के अनन्तर चावलों पर सविधि रत्नकलश स्थापित किया। फिर रत्नसिंहासनासीन पुरोहित की विधिपूर्वक पूजा की। इसके साथ ही त्रैलोक्यतारिणी गिरिजा ने अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिपूर्वक ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर की अर्चा की।

इस प्रकार भगवती शैलजा ने स्वस्तिवाचनपूर्वक व्रतारम्भ किया। तदनन्तर उन्होंने मङ्गल-कलश पर श्री कृष्ण का आवाहन कर उनका भक्तिपूर्वक षोडशोपचार द्वारा पूजन किया। व्रत के विधानानुसार देवी उमा ने त्रैलोक्य दुर्लभ पदार्थों को अत्यन्त प्रीतिपूर्वक समर्पित किया। फिर उन्होंने तिल और घी की लाख आहुतियों से हवन कराया और देवताओं, अतिथियों एवं ब्राह्मणों को बहुमूल्य व्यञ्जनों के भोजन से तृप्त किया। इस प्रकार परम सरला साध्वी शिवप्रिया पुण्यक व्रत के पालनीय प्रत्येक नियमों का वर्षपर्यन्त श्रद्धा एवं विश्वास के साथ सोल्लास पालन करती रही।

अस्वाभाविक दक्षिणा

पुरोहित ने देवी पार्वती से कहा—'व्रत-समाप्ति पर सुव्रते! मुझे दक्षिणा चाहिए।'

परम तपस्विनी अम्बिका ने पुरोहित से कहा—'आप कौन-सा दुर्लभ पदार्थ चाहते हैं? मैं आपको मुँह मांगी दक्षिणा दूँगी।'

पुरोहित ने अस्वाभाविक दक्षिणा की याचना की—'देवी! इस व्रत में दक्षिणास्वरूप मुझे अपने पति को दे दो।'

सर्वथा अकल्पित, अनभ्र वज्रपात जैसी निष्ठुर वाणी सुन कर देवी उमा व्याकुल होकर विलाप करती हुई वहीं मूर्च्छित हो गयीं। निखिल सृष्टि नियामिका मोहनाशिनी भगवती पराम्बा को मूर्च्छित देख कर लोकपितामह विष्णु एवं मुनियों को हँसी आ गयी। तब उन्होंने उमापति महादेव को पार्वती को समझाने

के लिए भेजा।

'धर्मिष्टे ! उठो, निश्चय ही तुम्हारा मङ्गल होगा।' पार्वती को होश में लाने के लिए उन्हें समझाते हुए आशुतोष ने अनेक धर्ममय वचन कहे। उनकी चेतना लौट आने पर महादेव ने कहा –'देवकार्य, पितृकार्य अथवा नित्य-नैमित्तिक जो भी कर्म दक्षिणा से रहित होता है, वह सब निष्फल हो जाता है और उस कर्म से दाता निश्चय ही कालसूत्र नामक नरक में गिरता है। उसके बाद वह दीन होकर शत्रुओं से पीड़ित होता है। ब्राह्मण को संकल्प की हुई दक्षिणा उसी समय न देने से वह बढ़ कर कई गुनी हो जाती।'

क्षीरोदधिशायी विष्णु और कमलासन ने भी श्री पार्वती से धर्म-रक्षा के लिए अनुरोध किया। स्वयं धर्म ने कहा—'साध्वि ! मेरे स्वरक्षित रहने पर प्रत्येक रीति से मङ्गल होगा।' देवताओं ने भी यही बात कही। मुनियों ने भी हवनपूर्ण कर के दक्षिणा देने की प्रेरणा देते हुए कहा –'धर्मज्ञे ! हम लोगों के यहाँ रहते हुए आपका अकल्याण संभव नहीं।'

ब्रह्मा के पुत्र तेजस्वी सनत्कुमार ने देवी पार्वती से सुस्पष्ट कहा—'शिवे ! या तो तुम मुझे दक्षिणा में अपने सर्वेश्वर पति को प्रदान करो या अपने दीर्घकालीन कठोर तप का फल भी त्याग दो। साध्वि ! इस प्रकार महान् कर्म की दक्षिणा न मिलने पर मैं इस दुर्लभ कठोर व्रत का फल ही नहीं, यजमान के समस्त कर्मों का फल भी प्राप्त कर लूंगा।'

सत्यस्वरूपा परम सती पार्वती ने अत्यन्त व्याकुल होकर देवताओं से कहा —'देवाधिपों ! पति से वञ्चित हो जाने वाले कर्म से क्या लाभ ? दक्षिणा देने, धर्म और पुत्र की प्राप्ति से मेरा क्या हित होगा ? पृथ्वी देवी की उपेक्षा कर वृक्ष की पूजा से क्या प्राप्त हो सकेगा ? यदि बहुमूल्य प्राण ही विसर्जित हो जायें तो शरीर की रक्षा किस लिए होगी ?

अत्यधिक दुःख से शिवप्रिया ने कहा—'देवेश्वरों ! साध्वी स्त्रियों के लिए पति सौ पुत्रों के समान होता है। ऐसी स्थिति में यदि व्रत में अपने पति की ही दक्षिणा दे दी जाय तो पुत्र से क्या लाभ होगा ? पुत्र पति का वंश होता है, किन्तु उसका एक मात्र मूल तो पति ही होता है। मूलधन के नष्ट हो जाने पर तो समस्त व्यापार ही विनष्ट हो सकता है।'

उसी समय अन्तरिक्ष में देवताओं और ऋषियों ने एक बहुमूल्य रत्ननिर्मित रथ देखा। वह घ। नील पार्षदों से घिरा हुआ था। सभी पार्षद वनमालाधारी और रत्नाभरणों से विभूषित थे। उस रथ से चतुर्भुज वैकुण्ठवासी भगवान् श्रीनारायण उतर कर देवताओं के सम्मुख उपस्थित हुए। उन परम तेजस्वी, भक्त-प्राणधन,-शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी भगवान् श्रीनारायण की ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओं ने एक श्रेष्ठ रत्नजटित सिंहासन पर बैठाकर उनके पाप-तापहारी अभयद चरण कमलों में श्रद्धा-भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर गद्-गद् कण्ठ से उनकी स्तुति की।

वहाँ का समस्त वृतान्त जान कर भक्तभयहारी श्रीनारायण ने अपने स्वरूप

तत्त्व की विस्तृत व्याख्या करते हुए देवगणों और ऋषि-मुनियों से कहा—'शिव-पार्वती का यह व्रत लोकशिक्षा के लिये है, अपने लिये कदापि नहीं क्योंकि ये स्वयं ही समस्त व्रतों एवं तपस्याओं का फल प्रदान करने वाली हैं। इनकी माया से चराचर जगत मोहित है।'

तदनन्तर परमप्रभु भगवान् श्रीनारायण ने त्रैलोक्यवन्दिता उमा से कहा—'शिवे ! तुम अपने पति महादेव को दक्षिणा में देकर अपना व्रत पूर्ण कर लो, फिर समुचित मूल्य दे कर अपने जीवन-धन को वापस ले लेना। गौओं की भाँति शिव भी विष्णु के ही शरीर हैं अतः तुम ब्राह्मणों को गौ मूल्य प्रदान कर अपने पति को लौटा लेना।'

इतना कह कर महामहिम त्रैलोक्यपावन् श्रीनारायण वहीं अन्तर्धान हो गये। सृष्टिनायक श्रीनारायण के मुखारविन्द से ये मङ्गलमय वचन सुनकर समस्त सुर-मुनि समुदाय हर्षोत्फुल्ल हो गया। कलिकल्मषहन्त्री शिवा भी प्रसन्न मन से अपने प्राण-सर्वस्व को दक्षिणा में देने के लिये प्रस्तुत हो गयीं। भगवती पार्वती ने हवन की पूर्णाहुति की और अपने जीवननाथ को दक्षिणा के रूप में दे दिया।

'स्वस्ति !' कहते हुए सनत्कुमार ने दक्षिणा ग्रहण कर ली। उस समय भयवश परम कोमलाङ्गी पार्वती के कण्ठोष्ठ-तालु सूख गये।

अम्बिका ने दुःखी हृदय से अत्यन्त मधुर एवं विनीत वाणी में ब्राह्मण से निवेदन किया—'विप्रवर ! गौ का मूल्य मेरे पति के बराबर है। मैं आपको अत्यन्त सुन्दर एक लाख गायें प्रदान करूँगी, इसके बदले में आप मेरे जीवन सर्वस्व को लौटा दें। अभी तो मैं आत्मा से रहित किसी भी कर्म में सर्वथा असमर्थ हूँ, प्राणनाथ के मिल जाने पर मैं पुनः ब्राह्मणों को विपुल दक्षिणाएँ प्रदान करूँगी।'

सनत्कुमार (पुरोहित) ने सती शिरोमणी पार्वती से कहा—'देवी ! मैं ब्राह्मण हूँ। मुझे एक लाख गौओं का क्या करना है ? इस दुर्लभ रत्न के सम्मुख गौओं से क्या लाभ होगा ? मैं इस दिगम्बर (नंग-धडंग) को—अपने साथ लेकर इन्हें आगे रख कर डमरू बजाते हुए त्रिलोकी में भ्रमण करूंगा। उस समय बालक-बालिकाएँ इनको देख कर प्रसन्नतापूर्वक ताली बजा-बजा कर अट्टहास करेंगे। उस समय मुझे मनोवाञ्छित सब ही पदार्थ प्राप्त हो जायेंगे।

इतना कह कर सनत्कुमार (पुरोहित) ने उमानाथ को बाजीगर के जमूरे की भाँति बुला कर अपने पास बैठा लिया और कहा—मेरे कहने के अनुसार अब आपको रहना और करना पड़ेगा।

'पार्वती को व्याकुलता और विश्वमोहन भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन'

'आह', सुकोमल हृदया गिरिजा जलहीन मीन की भाँति छटपटाने लगीं। मन-ही-मन वे सोचने लगीं—'कैसा दुर्भाग्य है कि मुझे न तो अभीष्ट देव का दर्शन प्राप्त हुआ और न व्रत का फल ही प्राप्त हो सका।' अधीर होकर परम सती हिमगिरितनया शरीर-त्याग के लिये प्रस्तुत हो गयी।

उसी समय पार्वती सहित देवताओं और ऋषियों ने शून्य (आकाश) में कोटि-कोटि सूर्यों के प्रकाश से भी परमोत्कृष्ट तेज-समूह देखा। उस प्रभापुञ्ज से समस्त दिशाएँ एवं विस्तृत कैलाश देदीप्यमान हो गया। उसकी मण्डलाकृति असीम एवं अनन्त थी। प्रभु के उस महान् तेजः पुञ्ज को देख कर देवगण उनकी स्तुति करने लगे—'अनिर्वचनीय महाविराट् प्रभो! आपका यथार्थ स्तवन सम्भव नहीं' उन महामहिमामय परमप्रभु की विभिन्न प्रकार से स्तुति करते हुए विष्णु, ब्रह्मा, महादेव, धर्म, देव-समुदाय, ऋषि-मुनिगण, सरस्वती, सावित्री, लक्ष्मी और हिमगिरि ने कहा—'आप अकथनीय, स्वेच्छामय और ज्ञान से परे हैं. फिर वेदों के कारणस्वरूप आपकी स्तुति कैसे की जाय? आप मन और वाणी से अगोचर हैं। हम लोग तो आपके कलांश हैं।'

देवता और ऋषिगण चुप हो गए। उस समय कैलासगिरि निवासिनी पार्वती का तेजोमय शरीर प्रज्वलित अग्नि की ज्वाला की तरह प्रकाशित हो रहा था। तेज की मूर्ति-सी प्रतीत होने वाली उमा के सुन्दरतम पावन अङ्ग पर परमोज्जवल वस्त्र सुशोभित थे और सिर पर जटा का भार उनके कठोर तप की सूचना दे रहा था।

'सर्वसमर्थ, सर्वान्तर्यामी एवं अणु-परमाणु में व्याप्त महिमामय श्रीकृष्ण! आप तो मुझे जानते हैं, किन्तु मैं आपको जानने में समर्थ नहीं हूँ।' जगन्माता पार्वती ने भगवान् शिव की प्रेरणा से व्रत के आराध्य देव परमात्मा के स्वरूप का गुणगान करते हुए कहा—'परमात्मन! मैं पुत्र-दुःख से दुःखी होकर आपकी स्तुति कर रही हूँ और इस समय आपके सदृश पुत्र प्राप्त करना चाहती हूँ, परन्तु अङ्गों सहित वेद के विधानानुसार इस व्रत में अपने पति की दक्षिणा दी है, यह अत्यन्त दारुण कार्य है। दयामय! यह सब समझकर आप मुझ पर दया कीजिये।'

भगवती पार्वती श्री कृष्ण के ध्यान में तल्लीन थीं, उस समय उस असीम एवं महान् तेजराशि के मध्य उन्होंने अद्भुत रूप लावण्य-सम्पन्न विश्वमोहन श्री कृष्ण स्वरूप का दर्शन किया। वह हीरक जटित बहुमूल्य रत्ननिर्मित आसन पर आसीन एवं मणियों की माला से सुशोभित थे। नरनिरदवपु पर अद्भुत पीताम्बर की अवर्णनीय शोभा थी। रत्नाभरणों से अलंकृत उस अनुपम विग्रह के कर-कमलों में पीयूषवर्षिणी मुरली विद्यमान थी। उनके ललाट पर चन्दन की खोर और मस्तक पर मन को मोहित करने वाला सुन्दर मयूरपिच्छ था। उस अनुपम सौन्दर्य की तुलना कहीं सम्भव नहीं थी। ऐसे भुवनमोहन अनूप रूप को देख कर भगवती पार्वती उसी के सदृश पुत्र की कामना करने लगी और उसी क्षण उन्हें वर प्राप्त हो गया। इतना ही नहीं, उस समय शिवा ने जो-जो कामनाएँ की, वे सब पूरी हुईं। देवताओं के भी अभीष्ट की पूर्ति हुई। तदनन्तर वह तेज वहीं तिरोहित हो गया।

तब सुर-समुदाय ने ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार को समझाया और उन्होंने दिगम्बर शिव को उनकी प्राणेश्वरी शिवा को लौटा दिया।

फिर तो भगवती पार्वती की प्रसन्नता की सीमा न रही। जगज्जननी ने ब्राह्मणों को बहुमूल्य रत्न प्रदान किए। बन्दियों एवं भिक्षुकों को स्वर्ण-राशि देकर, ब्राह्मणों-देवताओं एवं पर्वतीयों को परम सुस्वादु व्यञ्जनों का भोजन करा कर अनेक प्रकार की भेंट-दक्षिणा और उपहार प्रदान किए। महिमामयी भगवती ने अलौकिक उपहारों से अत्यन्त प्रीतिपूर्वक अपने प्राणनाथ देवदेव महादेव की पूजा की। देववाद्य बजने लगे। अनेक माङ्गलिक गीतों द्वारा वह शुभस्थान ध्वनित हो उठा। सर्वत्र आनन्द और उल्लास का साम्राज्य व्याप्त हो गया।

इस प्रकार सनातनी उमा का पवित्रतम पुण्यक-व्रत सम्पन्न हुआ। पराम्बा ने विपुल रत्नराशि का दान कर सबको उत्तम भोजन कराया। तदनन्तर उन्होंने अपने जीवनधन धर्माध्यक्ष शिव के साथ स्वयं भी भोजन किया। फिर सबको कर्पूरादि से सुवासित ताम्बूल देकर उन्होंने भगवान् शिव के साथ स्वयं भी उसे ग्रहण किया। इसके अनन्तर जगदम्बा प्रसन्नतापूर्वक अपने प्राणधन पति देव महेश्वर के साथ एकान्त में चली गयीं।

भगवान् परब्रह्म का प्राकट्य

उसी समय एक दीन-हीन एवं कुत्सित ब्राह्मण सर्वसम्पत्समन्विता पार्वती के द्वार पर आया। उसके वस्त्र मैले-कुचैले और सिर के बाल रूखे थे। उस कृशकाय कुत्सितमूर्ति ब्राह्मण के दाँत स्वच्छ थे और उसके ललाट पर उज्ज्वल तिलक लगा हुआ था। उसने डण्डे के सहारे खड़े होकर क्षुधा-निवारणार्थ भोजन की याचना करते हुए कहा—'महादेव! मैं क्षुधा और तृषाधिक्य से व्याकुल-अत्यन्त दीन और दुर्बल ब्राह्मण भोजन की इच्छा से बड़ी दूर से चल कर आपकी शरण में आया हूँ। शिव! आप क्या कर रहे हैं? जगन्माता पार्वती शीघ्र आओ। माता के रहते हुए पुत्र भूखा कैसे रह सकता है?'

भगवान् शंकर और पार्वती द्वार पर आए। अत्यधिक दुर्बल ब्राह्मण किसी प्रकार उनके चरणों में प्रणाम कर स्तुति करने लगा। उसके मधुरातिमधुर वचन सुन कर आशुतोष प्रसन्न हो गए।

भगवान् शंकर ने अशक्त वृद्ध ब्राह्मण से पूछा—'विप्रवर! आप कहाँ से पधारे हैं? कृपया बतलाइए आपका शुभ नाम क्या है?' धर्ममयी पार्वती ने भी बड़े प्रेम से कहा—'वेदज्ञ ब्राह्मण! आपका आगमन कहाँ से हुआ है? मेरा परम सौभाग्य है, जो आपने अतिथि के रूप में मेरे द्वार पर पधारने का कष्ट किया। अभीष्ट अतिथि की सेवा की अमित महिमा है।'

वृद्ध ब्राह्मण ने काँपते हुए कहा—'वेद विद्या प्रकाशिनी माता! आप वेदोक्त विधि से मेरी पूजा कीजिए। उपवासव्रती, रोगग्रस्त एवं क्षुधार्त व्यक्ति स्वेच्छानुसार भोजन करना चाहता है। मैं तृषा-क्षुधा से व्याकुल हूँ।'

साक्षात् अन्नपूर्णा ने कहा—'द्विजसत्तम! आप क्या भोजन करना चाहते हैं? आपका त्रैलोक्य दुर्लभ अभीष्ट पदार्थ मैं आपकी सेवा में उपस्थित कर दूंगी। आप मुझे आज्ञा देकर कृतार्थ कीजिए।'

वृद्ध दुर्बल ब्राह्मण ने रुक-रुक कर धीरे-धीरे कहा—'माता ! मैं आप पुत्रहीना का अनाथ पुत्र हूँ। मैंने सुना है, आपने महान् पुण्यक-व्रत सम्पन्न किया है। उसके लिए दुर्लभ सामग्रियाँ एकत्र हुई होंगी। उन अद्भुत पकवानों एवं मिष्ठान्नों से आप मेरी पूजा कीजिए। इसके अनन्तर सुवासित निर्मल तथा स्वादिष्ट जल और सुवासित श्रेष्ठ ताम्बूल प्रदान कीजिए। ये दुर्लभ पदार्थ इतना खिलाइये, जिससे मेरी तोंद सुन्दर हो जाए, मैं लम्बोदर हो जाऊँ।'

'आपके आशुतोष पति सृष्टिकर्ता एवं सम्पूर्ण सम्पत्तियों को प्रदान करने वाले हैं और आप सम्पूर्ण सम्पत्तियों को प्रदान करने वाली महालक्ष्मी स्वरूपा हैं। अतः आप मुझे रमणीय रत्नसिंहासन, बहुमूल्य रत्नाभरण, अग्निशुद्ध सुन्दर वस्त्र, अत्यन्त दुर्लभ श्रीहरिमन्त्र, श्रीहरि में सुदृढ़ भक्ति, मृत्युञ्जय नामक ज्ञान, सुखदायिनी दानशक्ति और सर्वसिद्धि दीजिए।'

वृद्ध ब्राह्मण धीरे-धीरे कहते जा रहे थे—'सती माता ! पुत्र के लिए आपको क्या अदेय है ? मैं तप एवं उत्तम धर्म का पालन करते हुए समस्त कर्मों का पालन करूंगा, किन्तु जन्म-जरा-व्याधि और मृत्यु के हेतु भूत कर्मों का स्पर्श भी नहीं करूंगा।'

इस प्रकार संसार की असारता एवं भगवद्भक्ति का माहात्म्य-गान करते हुए ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध, तेजस्वी, कृशकाय ब्राह्मण ने अन्त में कहा—'समस्त कर्मों का फल प्रदान करने वाली माता ! आप नित्यस्वरूपा सनातनी देवी होकर भी लोक शिक्षा के लिए पूजा और तपश्चरण करती हैं। प्रत्येक कल्प में गोलोकवासी श्रीकृष्ण गणेश के रूप में आपके अङ्क (गोद) में प्रकट होकर क्रीडा करते हैं।'

इतना कहते-कहते अशक्त वृद्ध ब्राह्मण वहीं अन्तर्धान हो गए। वे परमेश्वर इस प्रकार अन्तर्हित हो कर परम साध्वी, परम मङ्गलमयी एवं परमधन्या माता पार्वती की शय्या पर नवजात शिशु के रूप में लेट कर छत की ओर देखने लगे—

शुद्धचम्पक वर्णाभः कोटिचन्द्र समप्रभः।
सुखदृश्य सर्वजनैश्चक्षूरश्मि विवर्द्धकः॥
अतीव सुन्दरतनुः कामदेव विमोहनः।
मुखं निरुपमं बिभ्रच्छारदेन्दुविनिन्दकम्॥
सुन्दरे लोचने बिभ्रच्चारुपद्मविनिन्दके।
ओष्टाधारपुटं बिभ्रत् पक्वबिम्ब विनिन्दकम्॥
कपालं च कपोलं च परमं सुमनोहरम्।
नासाग्रं रुचिरं बिभ्रत् खगेन्द्रचञ्चुनिन्दकम्॥
त्रैलोक्येषु निरुपमं सर्वाङ्गं बिभ्रदुत्तमम्।
शयान शयने रम्ये प्रेरयन् हस्तपादकम्॥

(ब्रह्मवैवर्त्त, गणपति ख. ८/८५-८९)

'उस बालक के शरीर की आभा शुद्ध चम्पक के समान थी। उसका प्रकाश करोड़ों चन्द्रमाओं की भांति उद्दीप्त था। सब लोग उसकी ओर देख सकते थे।

वह नेत्रों की ज्योति को बढ़ाने वाला था। उसका अत्यन्त सुन्दर शरीर कामदेव को विमोहित करने वाला था। उसका अनुपम मुख शारदीय पूर्णिमा के चन्द्र का उपहास कर रहा था। उसके सुन्दर नेत्र, मनोहर कमल को तिरस्कृत करने वाले थे। ओष्ठ और अधर-पुट ऐसे लाल थे कि उसे देखकर पका हुआ बिम्बफल भी लज्जित हो जाता था। कपाल और कपोल परम मनोहर थे। रुचिरनासिका गरुड़ की चोंच को भी तिरस्कृत करने वाली थी। उसके सभी अङ्ग उत्तम थे। त्रिलोकी में कहीं उसकी उपमा नहीं थी। इस प्रकार वह रमणीय शय्या पर सोया हुआ शिशु हाथ-पैर उछाल रहा था।'

किन्तु अत्यन्त कृषकाय वृद्ध ब्राह्मण वेषधारी अतिथि के अकस्मात अन्तर्हित हो जाने पर परमादर्श गृहिणी पार्वती व्याकुल हो गयीं। उन्होंने अपने प्राणपति शिवजी को उन्हें ढूंढने के लिए कहा और स्वयं दुःखी होकर कहने लगीं—'तृषा-क्षुधा से आकुल हे ब्रह्मन्! आप कहां चले गए? भूख से पीड़ित अतिथि के द्वार से चले जाने पर गृहस्थ का जीवन व्यर्थ चला जाता है।'

अतिथिदेव के अचानक अन्तर्हित हो जाने पर छटपटाती हुई अम्बिका ने आकाशवाणी सुनी—'जगज्जननी! शान्त हो जाओ और अपने मन्दिर में जा कर अपने पुत्र को देखो। पुण्यक-व्रत के फलस्वरूप परिपूर्णतम परात्पर श्रीकृष्ण ही तुम्हारे पुत्र के रूप में प्रकट हुए हैं।'

यत्तेजो योगिनः शश्वद् ध्यायन्ते सततं मुदा ।।
ध्यायन्ते वैष्णवा देवा ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
यस्य पूज्यस्य सर्वाग्रे कल्पं कल्पे च पूजनम् ।।
यस्य स्मरणमात्रेण सर्वविघ्नो विनश्यति ।
पुण्यराशिस्वरूपं च स्वसुतं पश्य मन्दिरे ।।
कल्पे कल्पे ध्यायसे यं ज्योतिरूपं सनातनम् ।
पश्य त्वं मुक्तिदं पुत्र भक्तानुग्रह विग्रहम् ।।
तव वाञ्छापूर्णबीजं तपः कल्पतरोः फलम् ।
सुन्दर स्वसुतं पश्य कोटिकन्दर्पनिन्दकम् ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त, गणपति ख. ९।९-१३)

'योगी लोग जिस अविनाशी तेज का प्रसन्न मन से निरन्तर ध्यान करते हैं, वैष्णगण तथा ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता जिसके ध्यान में लीन रहते हैं, प्रत्येक कल्प में जिस पूजनीय की सर्वप्रथम पूजा होती है, जिसके स्मरण मात्र से समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं तथा जो पुण्यराशि स्वरूप है, मन्दिर में विराजमान अपने उस पुत्र की ओर तो दृष्टि डालो। प्रत्येक कल्प में तुम जिस सनातन ज्योतिरूप का ध्यान करती हो, वही तुम्हारा पुत्र है। यह मुक्तिदाता तथा भक्तों के अनुग्रह का मूर्तरूप है। जरा उसकी ओर तो निहारो तुम्हारी कामनापूर्ति का बीज, तपरूपी कल्पवृक्ष का फल और सुन्दरता में करोड़ों काम-देवों को तिरस्कृत करने वाला है, अपने उस लावण्यमूर्ति पुत्र को देखो।'

आगे अम्बिका का भ्रम-निवारण करते हुए आकाशवाणी ने कहा—'वे क्षुधार्त्त अतिथि ब्राह्मण नहीं थे, उस वेष में आपके सम्मुख साक्षात् जर्नादन ही उपस्थित हुए थे।'

'आप प्रसन्नचित्त हो अपने देवाग्रगण्य सुन्दरतम पुत्र को देखो'—आकाशवाणी के द्वारा इस प्रकार की प्रेरणा प्राप्त होते ही माता पार्वती शीघ्रता से अपने महल में पहुँची। वहाँ उन्होंने अत्यन्त अद्भुत, परम सुन्दर; पद्म पत्राक्ष शिशु को अपनी शय्या पर लेटे हुए देखा। वह त्रैलोक्य-सुन्दर-तेजस्वी छत की ओर निहार रहा था। उसके दिव्य अङ्गों से दिव्य तेज फैल रहा था। वह इधर-उधर अपने हाथ-पैर फेंक रहा था। परमपावनी माता का स्तनपान करने के लिए वह क्रन्दन कर रहा था।

हर्षोल्लासपूर्ण हृदय से पुत्रवत्सला भगवती उमा ने दौड़कर त्रैलोकैश्वर्य-दायक भक्तवाञ्छा-कल्पतरु भगवान् शिव से कहा—'प्राणनाथ! आप घर चलकर मन्दिर (महल) के भीतर तो देखिए। सद्यः फलदायिनी आपकी ध्यानमूर्ति ही पुत्ररूप में प्रकट हुई है।'

भुजङ्ग भूषण भी हर्षमग्न हो गए। वे तुरन्त उठकर अपनी प्राणप्रिया के महल में गए। वहाँ उन्होंने शय्या पर तप्तस्वर्ण-तुल्य कान्तिमान् अपने पुत्र को देखा। घोरदैत्यघ्न शिव प्रसन्न और चकित हो कर सोच रहे थे—'अरे, मैं जिस परम तेजस्विनी और मङ्गलमयी मूर्ति का ध्यान करता हूँ, वह तो प्रत्यक्ष मेरे पुत्र के रूप में मेरे सम्मुख मुस्कराती हुई क्रीडा कर रही है।'

सर्वानन्दप्रदायिनी पार्वती के आनन्द की सीमा न थी। उन्होंने उसे अङ्क में ले लिया और हर्ष के आवेग में उसका चुम्बन करने लगीं। आनन्दमग्ना नित्यरूपा पार्वती ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा—

सम्प्राप्यामूलरत्नं त्वां पूर्णमेव सनातनम्।
यथा मनो दरिद्रस्य सहसा प्राप्य सद्धनम्॥
कान्ते सुचिरमायाते प्रोषिते योषितो यथा।
मानसं परिपूर्णं च बभूव च तथा मम॥

(ब्रह्मवैवर्त्त, गणपति ख. ९।२७-२८)

'बेटा! जैसे दरिद्र का मन सहसा उत्तम धन पा कर संतुष्ट हो जाता है, उसी तरह सनातन अमूल्य रत्न की प्राप्ति से मनोरथ पूर्ण हो गया। जैसे चिरकाल से प्रवासी हुए प्रियतम के घर लौटने पर स्त्री का मन पूर्णतया हर्षमग्न हो जाता है, वही दशा मेरे मन की भी हो रही है।'

इस प्रकार कहती हुई माता पार्वती ने शिशु को अत्यन्त प्रेम से गोद में ले लिया और उसे परम दुर्लभ, परम पावन अमृतमय दुग्ध पान कराने के लिए अपना स्तनाग्र उसके मुँह में दे दिया। तदनन्तर चराचर प्राणियों के आश्रय भगवान् शंकर ने भी अत्यन्त प्रसन्नता से अपने पुत्र को गोद में उठा लिया।

भगवान् गणेशजी का प्राकट्योत्सव

पुत्रोत्पत्ति की प्रसन्नता में स्वर्गापवर्गदाता पार्वतीनाथ की प्रेरणा से विविध

प्रकार के मनोहर वाद्य बजने लगे। पुत्र की मङ्गल-कामना हेतु परम पिता शिव ने ब्राह्मणों, बन्दियों एवं भिक्षुकों को नाना प्रकार के अपरिमित रत्नादि और बहुमूल्य सम्पत्ति का दान दिया।

हिमगिरि ने अपने दौहित्र के जन्मोत्सव पर अत्यन्त हर्षोत्साह से ब्राह्मणों को एक लाख रत्न, एक हजार श्रेष्ठ हाथी, तीन लाख घोड़े, दस लाख गायें, पाँच लाख स्वर्ण-मुद्राएँ, मुक्ता-हीरे-रत्नादि, मणियाँ, वस्त्र, आभूषण और क्षीराब्धि से उत्पन्न सभी प्रकार के अनमोल रत्नों का दान दिया।

क्षीरोदधिशायी विष्णु ने कौस्तुभमणि का दान दिया। हर्षातिरेक में उन्होंने श्रेष्ठत्तम मुनियों को बुलवा कर उनकी पूजा की। उनसे समस्त माङ्गलिक कार्य करवाए, पार्वती के पुत्ररूप में प्रकट उस नव-शिशु को आशीर्वाद दिलवाया, वेदों और पुराणों का पाठ करवाया एवं देव-दुर्लभ मनोहर नृत्य तथा मन्त्रमुग्ध— मधुर संगति का आयोजन किया।

अनुग्रह स्वरूप शिव-पुत्र गजानन के प्रकट होने के उत्सव पर ब्रह्मा ने सृष्टि में परम दुर्लभ वस्तुएँ ब्राह्मणों को दी। परम महिमामयी शिवप्रिया के मङ्गलकर पुत्र-जन्म के अवसर पर देवसमुदाय आनन्दोदधि में नित्य निमग्न हो गया था। धर्म, सूर्य, शचीपति इन्द्र, सुरगण-मुनिगण, गन्धर्व, देवियों ने अत्यन्त प्रसन्नता से विविध प्रकार की बहुमूल्य वस्तुओं का दान किया। हर्षातिरेक से क्षीरसागर के दिए गए एक सहस्र माणिक्य, एक सौ कौस्तुभमणियाँ, हीरक, श्रेष्ठ मणियाँ, गौ-रत्न, गज-रत्न, श्वेत वर्ण के अन्यान्य अमूल्य रत्न, स्वर्ण मुद्राओं एवं वस्त्राभरणों के अम्बारों के मूल्यों का अनुमान करना संभव नहीं।

इसी प्रकार भगवती सरस्वती, सावित्री और धनपति कुबेर ने ब्राह्मणों को परम दुर्लभ एवं अदभुत अगणित वस्तुओं का दान किया।

प्राणी मात्र के सच्चे शुभैषी एवं देवताओं के परम शुभचिन्तक जगदाता भगवान् शिव के घर में शिशु के प्रकट होने पर सभी देवता आनन्दोन्मत्त हो गए थे। उस आनन्दकाल में बालक के मङ्गल के लिए जो जहाँ था, वहीं ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व समर्पित करने लगा। सबने दान दिए गए और सभी देवताओं ने उस बालक को दुर्लभतम आशीष प्रदान की।

विष्णु ने कहा—बालक! तुम दीर्घायु, ज्ञान में शिव के सदृश, पराक्रम में मेरे तुल्य और सम्पूर्ण सिद्धियों के ईश्वर होओ।

ब्रह्मा ने कहा—वत्स! तुम्हारे यश से जगत् पूर्ण हो जाय, तुम शीघ्र ही सर्वपूज्य हो जाओ और सबसे पहले तुम्हारी परम दुर्लभ पूजा हो।

महादेव ने कहा—प्राणप्रिय पुत्र! तुम मेरी भाँति दाता, हरिभक्त, बुद्धिमान्, विद्यावान्, पुण्यवान्, शान्त और जितेन्द्रिय होओ।

धर्म ने कहा—पार्वतीनन्दन! तुम मेरे समान परम धार्मिक, सर्वज्ञ, दयालु, हरिभक्त और श्रीहरि के समान दुर्लभ होओ।

लक्ष्मी ने कहा—बेटा! तुम्हारे घर में तथा शरीर में सनातनी स्थिति बनी रहे और मेरी तरह तुम्हें शान्त एवं मनोहर रूपवाली पतिव्रता पत्नी प्राप्त हो।

सरस्वती ने कहा—पुत्र ! मेरे ही तुल्य तुम्हें परमोत्कृष्ट कवित्व शक्ति, धारणा शक्ति, स्मरण शक्ति और विवेचन शक्ति की प्राप्ति हो।

सावित्री ने कहा—वत्स ! मैं वेदमाता हूँ, अतः तुम मेरे मन्त्र-जप में तत्पर हो कर शीघ्र ही वेदवादियों में श्रेष्ठ तथा वेदज्ञान-विशारद बनो।

हिमालय ने कहा—बेटा ! तुम्हारी बुद्धि सदा ही श्रीकृष्ण में लगी रहे, श्रीकृष्ण में ही तुम्हारी सनातनी भक्ति हो, तुम श्रीकृष्ण के समान गुणवान्, बुद्धिमान होओ और श्रीकृष्णपरायण बने रहो।

मेना (हिमालय पत्नी) ने कहा—वत्स ! तुम गम्भीरता में समुद्र के समान, सुन्दरता में कामदेव के सदृश, लक्ष्मीवानों में श्रीपति के तुल्य और धर्म में धर्म की भांति होओ।

वसुन्धरा ने कहा—वत्स ! तुम मेरी तरह क्षमाशील, शरणदाता सम्पूर्ण रत्नों से सम्पन्न विघ्नरहित, विघ्नविनाशक और शुभ-मङ्गल के आश्रय स्थान होओ।

पार्वती ने कहा—बेटा ! तुम अपने पिता के समान महान् योगी, सिद्ध, सिद्धियों के प्रदाता, शुभकारक, मृत्युञ्जय, ऐश्वर्यशाली और अत्यन्त निपुण होओ।

इसी प्रकार से सभी देवी-देवताओं ने अनेक प्रकार के मङ्गल आशीर्वचन दिए। तदनन्तर वहां पधारे हुए सभी ऋषियों-मुनियों और सिद्धों ने नवजात शिशु को अनेक प्रकार के मङ्गलमय आशीर्वाद प्रदान किए। ब्राह्मणों ने प्रसन्न हो कर अपने हृदय का सम्पूर्ण आशीर्वाद एवं वन्दियों ने समस्त मङ्गल कामनाएँ प्रकट की।

अनन्तानन्द सुखद नवोदित शिशु को शुभाशीः प्रदान कर श्रीहरि देवर्षियों के साथ श्रेष्ठ रत्न सिंहासन पर आसीन हुए। उनके दाएँ आशुतोष शिव, बाएँ लोकस्रष्टा ब्रह्मा और सम्मुख श्रेष्ठ धर्मात्मा धर्म आसनासीन हुए। धर्म के समीप सूर्य, देवेन्द्र, चन्द्रमा, देव-समुदाय, मुनिगण, गिरि-समुदाय सुन्दर एवं सुखद आसन पर विराजमान हुए।

तदनन्तर सर्वव्यापिनी जननी ने अपने अघनाशन पुत्र को रत्नसिंहासन पर बैठाया। समस्त देवी-देवताओं ने समस्त ऋषि-मुनियों तथा सिद्धों ने गिरिजा पुत्र की वहां ही अमित पूजोपचार सामग्रियों द्वारा पूजा की तथा अनेक प्रकार के रत्नजटित आभूषण, वस्त्रालंकार, विविध प्रकार के कलायुक्त मनभावन खिलौने, मिष्टान्न व्यञ्जन, फल, पुष्प, रत्नों के ढ़ेर जिनका वर्णन सम्भव ही नहीं, उपहार-भेंट प्रदान किए। उस समय सब ही उपस्थित देवाङ्गनाओं ने मङ्गलगीत गायन किए, अनेक प्रकार के मङ्गल-वाद्य बज उठे, अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। सब ही आनन्द निमग्न हो गए। इस प्रकार श्रीगणेशजी मंत्र का जन्मोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ।

वागीशाद्याः सुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे।
यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम्॥

'ब्रह्मा आदि देवगण सभी कार्यों के आरम्भ में और समापन में जिनको नमस्कार कर के कृतकृत्य होते हैं, उन गजानन (गणेशजी) को मैं प्रणाम करता हूँ।'

(गणेशपुराण, मुद्गलपुराण, तथा अन्य और पुराणों में भी भगवान् गणेशजी के लीला-अवतार चरित्रों की कथाऐं विभिन्न रूपों में प्राप्त होती हैं।

इच्छुक पाठक उन ग्रन्थों में देख सकते हैं। यह लीला चरित्र कथा की विभिन्नता कल्पान्तर भेद से हैं। यहाँ यह वर्णन ब्रह्मवैवर्त्त पुराण गणपति खण्ड अध्याय १ से १० के आधार पर लिखा गया है। इस अध्याय १० की कथा का नाम सुमङ्गलाध्याय है। इस सुमङ्गलाध्याय का पाठ करने, कथा पढ़ने-सुनने से सब प्रकार के विघ्न, अनिष्ट, अरिष्ट, पाप दूर होते हैं। सब प्रकार की शुभकामनाएँ-शुभमनोरथों की सिद्धि प्राप्त होती हैं। सब प्रकार से आनन्द मङ्गल होते हैं।)

(गणेशपुराण में एक स्थान पर माघ कृष्णा चतुर्थी तिथि को चन्द्रोदय होने पर तथा दूसरे स्थान पर भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को मध्याह्न समय में, शिवपुराण में भाद्रपद कृष्णा चतुर्थी को चन्द्रोदय होने पर और स्कन्दपुराण में भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को भगवान् गणेशजी का जन्म होने के वर्णन प्राप्त होते हैं। किन्तु जब उनके विभिन्न अवतार होते हैं तो जन्मतिथि भी विभिन्न हो सकती है। अतः इनकी जन्म तिथि के विषय में किसी प्रकार की शंका करने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। जहां-जहाँ जिस-जिस स्थान पर सार्वजनिक रूप में गणेश जन्मोत्सव मनाए जाते हैं, उसी प्रकार मनाए जाते रहना भी उचित प्रतीत होता है।)

सोपान ३

'श्रीपार्वतीनन्दन गणेशजी गजमुख हुए'

भगवान् गणेशजी का प्राकटचोत्सव सम्पन्न ही हुआ था। उत्सव में पधारे हुए देवी-देवता, ऋषि-मुनिगण, सिद्धादि अभी अपने-अपने स्थानों पर प्रस्थान करने ही वाले थे। जगत् जननी मङ्गलमयी विविध वस्त्रालंकार भूषिता हिमालय पुत्री पार्वती अपने शुभानन शिशु गणेशजी को गोद में लिए हुए रत्नसिंहासन पर विराजमान हुई विविध उत्तम प्रकार के सुगन्धित सामग्रियों द्वारा निर्मित ताम्बूल चबाती हुई हर्षातिरेक हो मुस्करा रही थीं। पांच परिचारिका सखियां विविध प्रकार के पंखे, मोरच्छल, श्वेत चवर झला (डुला) रही थी।

उसी समय महायोगी सूर्यपुत्र शनैश्चर, शकरनन्दन गणेशजी को देखने के लिए वहां आए। उनका मुख अत्यन्त नम्र था, आंखें कुछ मुँदी हुई थीं और मन एकमात्र श्रीकृष्ण में लगा हुआ था। वे तपः फल को खाने वाले, तेजस्वी, अग्नि शिखा के समान प्रकाशमान, अत्यन्त सुन्दर, श्यामवर्ण, पीताम्बरधारी और श्रेष्ठ थे। वे वहां पहुँचते ही प्रथम विष्णु, ब्रह्मा, शिव धर्म, सूर्य, देवगण तथा ऋषि-मुनिगण जहां अपने-अपने योग्य सिंहासनों पर विराजमान थे, जाकर सबको प्रणाम किया। इसके पश्चात् उनकी आज्ञा लेकर ही उस बालक को देखने के लिए गए। शनैश्चर देव ने सिर झुका कर माता पार्वती देवी को नमस्कार किया। उस

समय वे पुत्र को अपनी छाती से चिपटाए रत्नसिंहासन पर विराजमान थीं। सूर्य पुत्र शनैश्चर को सिर झुकाए हुए देख कर मां दुर्गा ने उन्हें शीघ्र ही शुभाशीर्वाद दिया और फिर से उनका कुशल मङ्गल पूछा।

पार्वती ने पुनः पूछा—ग्रहेश्वर ! इस समय तुम्हारा मुख नीचे की ओर क्यों झुका हुआ है तथा तुम मुझे अथवा इस बालक की ओर देख क्यों नहीं रहे हो ? मैं इसका कारण जानना चाहती हूँ।

शनैश्चर ने कहा—साध्वि ! सारे जीव स्वकर्मानुसार अपनी करनी का फल भोगते हैं, क्योंकि जो भी शुभ अथवा अशुभ कर्म होता है, उसका करोड़ों कल्पों में भी नाश नहीं होता। जीव कर्मानुसार ब्रह्मा, इन्द्र और सूर्य के भवन में जन्म लेता है। कर्म से ही वह मनुष्य के घर में और कर्म से ही पशु आदि योनियों में उत्पन्न होता है। कर्म से वह नरक में जाता है और कर्म से ही उसे वैकुण्ठ की प्राप्ति होती है। स्वकर्मानुसार वह चक्रवर्ती राजा हो जाता है और अपने ही कर्मों से वह नौकर भी हो जाता है। माता ! कर्म से ही वह सुन्दर होता है और अपने कर्म के फलस्वरूप वह रोगग्रस्त बना रहता है। कर्मानुसार ही वह विषय-प्रेमी और अपने कर्म से ही विषयों से निर्लिप्त रहता है। कर्म से ही वह लोक में धनवान्, कर्म से ही दरिद्रः, कर्म से ही उत्तम कुटम्बवाला और कर्म से ही बन्धुओं के लिए कण्टकरूप हो जाता है। अपने कर्म से ही जीव को उत्तम पत्नी, उत्तम पुत्र और निरन्तर सुख की प्राप्ति होती है तथा स्वकर्म से ही वह पुत्रहीन, दुष्ट-स्वभाव स्त्री का स्वामी अथवा स्त्रीहीन होता है।

शंकरवल्लभे ! आपके प्रश्न का समाधान करने वाला एक परम गोपनीय इतिहास है, यद्यपि वह लज्जाजनक तथा माता के समक्ष कहने योग्य नहीं है, किन्तु आपकी आज्ञा से कहता हूँ, सुनिए। मैं बचपन से ही श्रीकृष्ण का भक्त था। मेरा मन सदा एकमात्र श्रीकृष्ण के ही ध्यान में लगा रहता था। मैं विषयों से विरक्त हो कर निरन्तर तपस्या में रत रहता था। पिताजी ने चित्ररथ की कन्या से मेरा विवाह कर दिया। वह सती-साध्वी नारी अत्यन्त तेजस्विनी तथा सतत तपस्या में रत रहने वाली थी। एक दिन ऋतुस्नान कर के वह मेरे पास आयी। उस समय मैं भगवच्चरणों का ध्यान कर रहा था। मुझे बाह्यज्ञान बिलकुल नहीं था। पत्नी ने अपना ऋतुकाल निष्फल जान कर मुझे शाप दे दिया कि—'तुम अब जिसकी ओर दृष्टि करोगे, वही नष्ट हो जाएगा।' तदन्तर जब मैं ध्यान से विरत हुआ, तब मैंने उस सती को संतुष्ट किया किन्तु अब वह शाप से मुक्त कराने में असमर्थ थी अतः पश्चाताप करने लगी। माता ! इसी कारण में किसी वस्तु को अपने नेत्रों से नहीं देखता और तभी से मैं जीवहिंसा के भय से स्वाभाविक हो अपने मुख को नीचे किए रहता हूँ। शनैश्चर की यह बात सुन कर पार्वती हंसने लगीं और नर्तकियों तथा किन्नरियों का समस्त समुदाय जो वहां उस समय नृत्य, गायन, वाद्य-वादन मनोरञ्जनार्थ पहले से जमा हुआ बैठा था ठहाका मार कर हंस पड़ा।

शनैश्चर की बात सुनकर भगवती दुर्गा ने परमेश्वर हरि का स्मरण किया और कहा—'यह समस्त जगत् ईश्वर की इच्छा के ही वशीभूत है।' फिर देववशीभूता पार्वती देवी ने कौतुहलवश शनैश्चर से कहा—'तुम मेरी तथा

बालक की ओर देखो। भला, इस निषेक (कर्मफलभोग) को कौन हटा सकता है ?' तब पार्वती का यह वचन सुनकर शनैश्चर स्वयं मन-ही-मन इस प्रकार से कहने लगे—'अहो ! क्या मैं इस पार्वतीनन्दन पर दृष्टिपात करूं ? क्योंकि यदि मैं बालक को देख लूँगा तो निश्चय ही उसका अनिष्ट हो जाएगा।' इस प्रकार कह कर धर्मात्मा शनैश्चर ने धर्म को ही साक्षी बनाकर बालक को तो देखने का विचार किया, किन्तु बालक की माता को नहीं। शनैश्चर का मन तो पहले से ही खिन्न था। उनके कण्ठ, ओष्ठ और तालु भी सूख गए थे, फिर भी उन्होंने अपने बाँयें नेत्र के कोने से शिशु के मुख की ओर निहारा। शनि की दृष्टि पडते ही शिशु का मस्तक धड़ से अलग हो गया तब शनैश्चर ने अपनी आँखें फेर ली और वे नीचे मुख करके खड़े हो गए। इसके पश्चात् उस बालक का खून से लथपथ हुआ सारा शरीर तो पार्वती की गोद में पड़ा रह गया, परन्तु मस्तक अपने-अभीष्ट गोलोक में जाकर श्रीकृष्ण में प्रविष्ट हो गया। यह देखकर पार्वती देवी बालक को छाती से चिपटा कर फूट-फूट कर विलाप करने लगी और उन्मत्ता की भांति भूमि पर गिर कर मूर्च्छित हो गयी। तब वहाँ पास ही उपस्थित सभी देवी-देवता, मूर्तिमान पर्वतगण, गन्धर्व, अप्सरादि, ऋषि-मुनिगण, सिद्धादि तथा कैलासवासी जन यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित रह गए। उस समय उन सबकी दशा चित्र लिखित पुत्तलिकाओं के समान जड़वत् हो गई।

इस प्रकार उन सबको मूर्च्छित तथा जड़वत् देखकर श्रीहरि गरुड़ पर सवार हुए और शीघ्रता से उत्तर दिशा की ओर चले गए। वहाँ उन्होने पुष्पभद्रा नदी के तट पर वन में एक गजेन्द्र को देखा, जो निद्रा के वशीभूत हो बच्चों से घिर कर हथिनी के साथ सो रहा था। उसका सिर उत्तर दिशा की ओर था, मन परमानन्द से पूर्ण था और वह परिश्रम से थका हुआ था। भगवान् श्रीहरि ने शीघ्र ही सुदर्शन चक्र से उसका सिर काट लिया और रक्त से भीगे हुए उस मनोहर मस्तक को बड़े हर्ष के साथ गरुड़ पर रख लिया। गज के कटे हुए अङ्ग के गिरने से हथिनी की निद्रा टूट गई। तब अमङ्गल शब्द करती हुई उसने शावकों को भी जगा दिया। वह शोक से विह्वल हो शावकों के साथ बिलख-बिलख कर चीत्कार करने लगी।

तत्पश्चात् जो लक्ष्मी के स्वामी हैं, जिनका स्वरूप परम शान्त है, जिनके कर-कमलों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म शोभा पाते हैं, जो पीताम्बरधारी, परात्पर, जगत् के स्वामी, निषेक खण्डन करने में समर्थ, निषेक को उत्पन्न करने वाले, सर्वव्यापक, निषेक के भोग के दाता और भोग के निस्तार के कारणस्वरूप हैं तथा जो गरुड़ पर आरूढ़ हो मुस्कराते हुए सुदर्शन चक्र को घुमा रहे हैं — उन परमेश्वर का उस हथिनी ने स्तवन किया। उसकी स्तुति से भगवान् प्रसन्न हुए और उसे वर प्रदान किया और तत्काल ही दूसरे गज का मस्तक काट कर इसके धड़ से जोड़ दिया और उन ब्रह्मवेत्ता ने ब्रह्मज्ञान से उसी समय उसे जीवित कर दिया। उस गजेन्द्र के सर्वाङ्ग में अपने चरण-कमल का स्पर्श कराते हुए कहा—'गज ! तू अपने कुटुम्ब के साथ एक कल्पपर्यन्त जीवित रह कर सुखोपभोग कर।' इस प्रकार कह कर मन के समान वेगशाली भगवान् तत्काल ही कैलास पर आ पहुँचे।

वहाँ पार्वती के वासस्थान पर आकर उन्होंने उस बालक को अपने हाथों में लेकर अपनी छाती से चिपटा लिया और उस हाथी के मस्तक को सुन्दरतापूर्वक उस बालक के धड़ से जोड़ दिया। फिर उन ब्रह्मस्वरूप भगवान् ने ब्रह्म ज्ञान से हुँकारोच्चारण किया और खेल-खेल में ही उसे जीवित कर दिया। पुनः भगवान् श्रीहरि ने पार्वती को सचेत करके उस शिशु को उनकी गोद में रख दिया और आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा पार्वती को समझाना आरम्भ किया।

भगवान् विष्णु ने कहा—शिवे ! तुम तो जगत् की बुद्धिस्वरूपा हो। क्या आप नहीं जानती हैं कि ब्रह्मा से लेकर कीटपर्यन्त सारा जगत् अपने कर्मानुसार फल भोगता है। प्राणियों का जो स्वकर्मार्जित भोग है, वह भी करोड़ कल्पों तक प्रत्येक योनि में शुभ-अशुभ फलरूप से नित्य प्राप्त होता रहता है। सती ! इन्द्र अपने कर्मवश कीड़े की योनि में जन्म ले सकते हैं। कीड़ा पूर्वकर्मानुसार इन्द्र भी हो सकता है। पूर्वजन्मार्जित कर्मफल के बिना सिंह मक्खी को भी मारने में असमर्थ है और मच्छर अपने प्राक्तन कर्म के बल से हाथी को भी मार डालने की शक्ति रखता है। सुख-दुःख, भय-शोक, आनन्द—ये सब कर्म के ही फल हैं। लिखा है—

सुखं दुःखं भयं शोकमानन्दं कर्मणः फलम् ।
सुकर्मणः सुखं हर्षमितरे पापकर्मणः ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त पुरा. गण. १२।२७)

सुख-दुःख, भय-शोक, आनन्द-ये कर्म के ही फल हैं। इनमें सुख और हर्ष उत्तम कर्म के और अन्य पापकर्म के परिणाम हैं।

कर्म का भोग शुभ-अशुभ रूप से इहलोक अथवा परलोक में प्राप्त होता है, परन्तु कर्मोपार्जन के योग्य पुण्य क्षेत्र भारत ही है। स्वयं श्रीकृष्ण कर्म के, फलदाता, विधि के विधाता, मृत्यु के भी मृत्यु, काल के भी काल, निषेक के निषेक कर्ता, संहरता के भी संहारक, पालक के भी पालक, परात्पर, परिपूर्णतम गोलोकनाथ हैं। हम ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर जिस पुरुष की कलाएँ हैं, महाविराट् जिसका अंश है, जिसके रोम-विवर में जगत् भरे हैं, कोई-कोई उनके कलांश हैं और कोई-कोई कलांश के भी अंश हैं और जो सम्पूर्ण चराचर जगत्-स्वरूप हैं, उन्हीं श्रीकृष्ण में यह विनायक स्थित हैं।

इस प्रकार से विष्णु का कथन सुन कर पार्वती का मन संतुष्ट हो गया। तब वे उन गदाधर भगवान् को प्रणाम कर के शिशु को दूध पिलाने लगीं। तदनन्तर प्रसन्न हुई पार्वती ने शंकरजी की प्रेरणा से अंजलि बांध कर भक्तिपूर्वक उन कमलापति भगवान् विष्णु की स्तुति की। तब विष्णु ने शिशु को तथा शिशु की माता को आशीर्वाद दिया और अपने आभूषण कौस्तुभमणि को बालक के गले में पहना दिया। ब्रह्मा ने अपना मुकुट और धर्म ने रत्नजटित आभूषण पहनाया। फिर क्रमशः देवियों ने तथा उपस्थित सभी देवताओं, ऋषि-मुनियों, पर्वतों, गन्धर्वों और समस्त महिलाओं ने यथोचित रूपरत्नालंकार प्रदान किये। उस समय महादेवजी का हृदय अत्यन्त हर्षमग्न हो गया और वे विष्णु का स्तवन करने लगे। इस प्रकार से उस समय मर कर जीवित हुए बालक को देख कर शिव-पार्वती ने ब्राह्मणों को असंख्य रत्न दान किये। हर्ष से गद्गद् हुए हिमालय ने बन्दियों को एक सौ

हाथी और एक सहस्र घोड़े प्रदान किए तथा देवगणों ने हर्षित हो कर ब्राह्मणों को और सभी स्त्रियों ने बन्दियों को अनेक प्रकार के आभूषण तथा स्वर्ण-मुद्राएँ दान की। लक्ष्मीपति विष्णु ने अनेक प्रकार से माङ्गलिक कार्य सम्पन्न कराये, ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के स्वादिष्ट मिष्टान्न-व्यञ्जनों का भोजन करा कर तृप्त किया और वेदों तथा पुराणों का पाठ कराया। मेना, हिमालय, हिमालय के पुत्र और प्रिय अमात्यों ने गिरिजा के पुत्र का पूजन किया। वहाँ उपस्थित ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि सभी देवताओं ने—

'ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गणेश्वराय ब्रह्मरूपाय चारवे।
सर्वसिद्धिप्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नमः॥'

इस मंत्र से भक्तिपूर्वक वस्तुएँ समर्पित करके परमानन्द मग्न हो गए। इस मन्त्र में बत्तीस अक्षर हैं। यह मन्त्र सम्पूर्ण कामनाओं का दाता; धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का फल देने वाला और सर्वसिद्धिप्रद है। इसके पाँच लाख जप से ही जापक को मन्त्रसिद्धि प्राप्त हो जाती है। भारतवर्ष में जिसे यह मन्त्रसिद्धि हो जाती है, वह विष्णु-तुल्य हो जाता है। उनके नाम-स्मरण से सारे विघ्न भाग जाते हैं। निश्चय ही वह महान् वक्ता, महासिद्ध, सम्पूर्ण सिद्धियों से सम्पन्न, श्रेष्ठ कवियों में श्रेष्ठ गुणवान, विद्वानों के गुरु का गुरु तथा जगत् के लिए साक्षात् वाक्पति हो जाता है।

स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपङ्कजस्मरणम्।
वासरमणिरिव तमसां राशीन्नाशयति विघ्नानाम्॥

'उन गजवदन देवदेव की जय हो, जिनके चरण कमल का स्मरण सम्पूर्ण विघ्न समूह को इस प्रकार से नष्ट कर देता है, जैसे सूर्य अन्धकार को दूर कर देता है।'

सोपान ४

'गणेशजी की सर्वप्रथम पूजा का रहस्य'

मात्रे पित्रे च सर्वेषां हेरम्बाय नमो नमः।
अनादये च विघ्नेश विघ्नकर्त्रे नमो नमः॥
सर्वविघ्नविनाशाय सर्वकल्याणहेतवे।
पार्वतीप्रियपुत्राय गणेशाय नमो नमः॥

'हे सबके माता और पिता हेरम्ब आपको नमस्कार है। हे विघ्नेश्वर! आप अनादि और विघ्नों के जनक (उत्पादक) हैं, आपको बार-बार नमस्कार है। सर्व प्रकार के विघ्नों का विनाश करने के लिए, समस्त कार्यों में कल्याण करने हेतु पार्वती के प्रिय पुत्र गणेशजी को बार-बार नमस्कार है।'

सनातन धर्म में सभी कार्यों में पञ्चदेवोपासना की मान्यता है—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्॥

'सब ही कार्यों की सिद्धि प्राप्त करने के लिए भगवान्, सूर्य, गणेश, देवी, शिव तथा विष्णु का पूजन करना चाहिए।'

यह विश्व पञ्चभूतात्मक है। इसीलिए पाँच तत्त्वों के पाँच देवता माने गए हैं—पृथ्वी तत्त्व के शिव, जलतत्त्व के गणेश, अग्नि तत्त्व की देवीशक्ति (महेश्वरी), वायु तत्त्व के देवता सूर्य (अग्नि) और आकाश तत्त्व के देवता विष्णु माने गए हैं।

आकाशस्याधिपो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी।
वायोः सूर्यः क्षितेरीशो, जीवनस्यगणाधिपः॥

इनका निश्चित गणना क्रम है—गणेश, शक्ति, शिव, विष्णु तथा सूर्य। गणेश जल के देवता हैं। जल से ही सर्वप्रथम सृष्टि का आरम्भ होता है, इसलिए गणेश की सर्वप्रथम पूजा होना उचित है और गणना में भी उनका नाम प्रथम होना नितरां उचित माना गया है। इसके पश्चात् द्वितीय नामगणना पूजा शक्ति की होती है। शक्ति अग्नि तत्त्व की अध्यक्षा हैं और गणेश की परमादरणीय माता हैं, अतः इनका द्वितीय स्थान गणना पूजन में होना भी उचित है। पृथ्वी—जल और अग्नि इन उभयविध तत्त्वों की आधार-भूमि है, इस पृथ्वी-तत्त्व के अध्यक्ष तथा गणेश के पिता होने से माता के अनन्तर पिता शिव का नाम पूजा व गणना के क्रम में कहा जाएगा। इन तीनों की सृष्टि होने के पश्चात् शब्द की आवश्यकता होती है। शब्द गुण वाले आकाश के देवता भगवान् विष्णु हैं, इसलिए चतुर्थ गणना एवं पूजा में विष्णु का स्थान आता है। तदनन्तर सबके पश्चात् सूर्य की प्रतिष्ठा होती है, क्योंकि सूर्य जगत् तथा स्थावर के आत्मा ही हैं। आत्मा ही चरम पदार्थ-सूक्ष्मतम द्रव्य है। अतः इनकी गणना अन्त में ही होना चाहिए। इस भाँति पञ्चदेवों का यह तात्त्विक शास्त्र निर्दिष्ट क्रम होता है। अतः पञ्चदेवोपासना में भी सर्वप्रथम पूजन भगवान् गणेशजी का ही किया जाना उचित हुआ।

सब ही प्रकार के उत्तम कार्यों में तथा हिन्दू धर्मावलम्बियों में तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं की गणना की जाती है, उन सभी देवी-देवताओं की आराधनाओं में छोटे-बड़े सभी संसारिक-पारलौकिक कार्यों में भगवान् गणेशजी का सर्वप्रथम स्मरण, अर्चना, वन्दना की जाती है। उनकी अर्चना, वन्दना, स्मरण करने के पश्चात् सभी कार्य निर्विघ्न सुसम्पन्न होते हैं और शुभ-फल सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। उनकी अर्चना-वन्दना-स्मरण कभी भी निष्फल नहीं होते हैं। हिन्दू धर्मावलम्बी सभी कार्यों का आरम्भ करते समय भगवान् गणेशजी का पूजन अवश्य करते हैं। किसी कार्य को आरम्भ कर दिया है—इसका पर्याय 'श्रीगणेश कर लिया है' माना जाता है—

माता पार्वती ने परशुरामजी से कहा—

तेजसा कृष्ण तुल्योऽयं कृष्णांशश्च गणेश्वरः।
देवाश्चान्ये कृष्णकलाः पूजास्य पुरतस्ततः॥

(ब्रह्मवैवर्त्त पु. गण. ४४।२८)

'श्रीगणेश के अंश से उत्पन्न हुआ यह गणेश तेज में श्रीकृष्ण के ही समान है। अन्य देवता तो श्रीकृष्ण की कलाएँ हैं। इसीसे इनकी अग्रपूजा होती है।'

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में लिखा है—माता पार्वती के पुत्ररूप में जब भगवान् गणेश अवतरित हुए, उस समय भगवान् गणेशजी का जन्मोत्सव मनाया गया। तब सब ही देवता वहाँ उपस्थित हुए और उन्होंने भगवान् गणेशजी को अपने-अपने आशीर्वाद प्रदान किए—

लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु शुभ मुहूर्त में देवताओं और मुनियों के साथ भगवान् शिव के सदन में पहुँचे। वहाँ उन्होने श्रेष्ठतम उपहारों से पद्मप्रसन्ननयन गजानन की पूजा की और आशीर्वाद प्रदान किया—

सर्वाग्रे तव पूजा च मया दत्ता सुरोत्तम।
सर्वपूज्यश्च योगीन्द्रो भव वत्सेत्यवाचतम्॥

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति. १३।२)

'सुरश्रेष्ठ! मैंने सबसे पहले तुम्हारी पूजा की है, अतः वत्स! तुम सर्वपूज्य तथा योगीन्द्र होओ।'

ब्रह्माजी ने कहा—वत्स! तुम्हारे यश से जगत् पूर्ण हो जाए, तुम शीघ्र सर्वपूज्य होओ और सर्वप्रथम तुम्हारी ही दुर्लभ पूजा हो।

महादेवजी ने कहा—प्रिय पुत्र! तुम मेरी भाँति दाता, हरिभक्त, विद्या-बुद्धिनिधान, पुण्यवान्, शान्त और जितेन्द्रिय होओ।

प्रसन्नचित्त कमलनयन भगवान् विष्णु ने शिवप्रिय बालक के कण्ठ में वनमाला पहनायी और मोक्षदायक ब्रह्मज्ञान तथा सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्रदान करके उसे सर्व प्रकार से अपने समान बना दिया। तत्पश्चात् षोडशोपचार की सब सामग्रियाँ उन्हें प्रदान करके देवताओं और ऋषि-मुनियों के साथ उसका नामकरण संस्कार किया—

विघ्नेशश्च गणेशश्च हेरम्बश्च गजाननः।
लम्बोदरश्चैकदन्तः शूर्पकर्णो विनायकः॥

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति. १३।५)

'विघ्नेश, गणेश, हेरम्ब, गजानन, लम्बोदर, एकदन्त, शूर्पकर्ण और विनायक ये उस बालक के नाम रखे गए।'

तत्पश्चात् परमदयाधाम भगवान् हरि ने समस्त ऋषि-मुनियों द्वारा हेरम्ब को विविध प्रकार के जितने भी उत्तम प्रकार के आशीर्वाद वेदों में वर्णित हैं, सब आशीर्वाद प्रदान कराए। तदनन्तर उस मङ्गलमय अवसर पर सभी देवी-देवतागण वहाँ आए थे, सबने उस शिव-पुत्र को विविध प्रकार के उत्तम-उत्तम उपहार प्रदान किए और बार-बार श्रद्धाभक्तिपूर्वक अनेक प्रकारों द्वारा उनका पूजन किया। जिस-जिस देवी-देवता को जो-जो अधिकार प्राप्त हैं, वह सब अधिकार उन सब देवी-देवताओं ने प्रयोग करने हेतु भगवान् गणेशजी को भी प्रदान कर दिए।

सर्वव्यापिनी गणेशजननी ने अपने अघनाशन पुत्र को रत्नसिंहासन पर विराजमान किया और समस्त तीर्थों के जल से भरे हुए एक सौ आठ कलशों द्वारा समस्त उपस्थित ऋषि-मुनियों द्वारा वेद मन्त्रोच्चारणपूर्वक स्नान अभिषेक कराया। तदनन्तर उन्होंने समस्त दुःखभञ्जनकारक अपने पुत्र को अग्निशुद्ध दो रेशमी वस्त्र धारण कराए और पुण्यतोया गोदावरी के जल से पाद्य, पापनाशिनी गंगाजी के जल से अर्घ्य एवं दुर्वा, अक्षत, पुष्प और चन्दन मिश्रित पवित्र तीर्थ पुष्कर के जल से आचमन कराया। तत्पश्चात् मातेश्वरी ने गणेश को रत्नपात्र में रखा हुआ मन्त्राभिषिक्त मधुपर्क शर्करामिश्रित द्रव पान कराया।

तदनन्तर स्वर्गलोक में निवास करने वाले देवताओं के वैद्यराज अश्विनी कुमार द्वारा निर्मित स्नानोपयोगी विष्णु तैल, अनेक बहुमूल्य विविध कलापूर्ण रत्नों द्वारा जड़ित आभूषण, विविध प्रकार के सुगन्धित पुष्प, अनेक प्रकार के रंग के पारिजात पुष्पों की विविध कलापूर्ण मालाएँ, अनेक प्रकार के सुगन्धित चन्दन आदि, सुगन्धित तैल सार तथा उत्तम सुगन्धित धूप-दीप प्रदान किए गए। इसके पश्चात् पशुपाशविमोचन गणाधिपति गणेश को उनका प्रिय लड्डू तथा उनको प्रिय लगने वाले विविध प्रकार के मिष्टान्न-व्यञ्जनों से भरे हुए अनेक बड़े-बड़े थाल (पात्र) अर्पित किए गए। उन पुष्कल व्यञ्जनों के पर्वत तुल्य ढेर लग गए। तदनन्तर ढेर के ढेर अनार, बेल के फल, जम्बू-फल, खजूर, कटहल, आम, केला, नारियल, अमरूद अर्पित किए गए। इसके पश्चात् आचमन कराया गया और विविध प्रकार की सुगन्धित शीघ्र पाचन करने वाली औषधियों द्वारा निर्मित ताम्बूल के सुन्दर सुवासित स्वादिष्ट पान के बीड़े और वायनपूरित सैकड़ों स्वर्णपात्र (सोने के थाल) लड्डूक प्रिय गणेशजी को समर्पित किए।

इसके पश्चात् हिमालय, मेना, हिमालय, के पुत्र तथा वहाँ उपस्थित ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि समस्त देवताओं ने पुनः —

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गणेश्वराय ब्रह्मस्वरूपाय चारवे।
सर्वसिद्धिप्रदेशाय विघ्नेशाय नमो: नमः॥
(ब्रह्मवैवर्त्त. गण. १३।३२)

इस मंत्र से प्रणेता अज्ञानविमोचन गिरिजा पुत्र गणेश की पूजा की और उन्हें भाँति-भाँति के दुर्लभ पदार्थ-वस्तुएँ प्रदान की और भगवान् गणेशजी के दर्शन करते हुए आनन्द में मग्न हो गए।

भगवान् विष्णु ने भगवान् गणेश की स्तुति में निवेदन किया —

ईश ! मैं सनातन ब्रह्म ज्योतिःस्वरूप आपका स्तवन करना चाहता हूँ, किन्तु आपके अनुरूप निरूपण करने में सर्वथा असमर्थ हूँ, क्योंकि आप इच्छारहित, सम्पूर्ण देवों में श्रेष्ठ, सिद्धों और योगियों के गुरु, सर्वस्वरूप, सर्वेश्वर, ज्ञानराशि स्वरूप, अव्यक्त, अविनाशी, नित्य, सत्यआत्मस्वरूप, वायु के समान अत्यन्त निर्लेप, क्षतरहित, सबके साक्षी, संसार-सागर से पार होने के लिए परम दुर्लभ मायारूपी नौका के कर्णधार स्वरूप, भक्तों पर अनुग्रह करने वाले, श्रेष्ठ वरणीय, वरदाता, वरदानियों के भी ईश्वर, सिद्ध, सिद्धिस्वरूप, सिद्धिदाता, सिद्धि के साधन, ध्यानातीत, ध्येय ध्यान द्वारा असाध्य, धार्मिक, धर्मस्वरूप, धर्म के ज्ञाता, धर्म और

अधर्म का फल प्रदान करने वाले, संसार वृक्ष के बीज, अंकुर और उसके आश्रय, स्त्री-पुरुष और नपुंसक के रूप में विराजमान तथा उनकी इन्द्रियों से परे, सबके आदि, अग्रपूज्य, सर्वपूज्य, गुण के सागर, स्वेच्छा से निर्गुण ब्रह्म तथा स्वेच्छा से ही सगुण ब्रह्म का रूप धारण करने वाले स्वयं प्रकृतिरूप और प्रकृति से परे प्राकृतरूप हैं। शेष अपने सहस्रों मुखों से भी आपकी स्तुति करने में असमर्थ हैं। और कहा—

न क्षमः पञ्चवक्त्रश्च न क्षमश्चतुराननः।
सरस्वती न शक्ता च न शक्तोऽहं तव स्तुतौ ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त गण. १३।४९)

आपका स्तवन करने में पञ्चमुख महादेव तथा चतुर्मुख ब्रह्मा भी समर्थ नहीं हैं, न सरस्वती की ही शक्ति है और न मैं ही आपका स्तवन कर सकता हूँ।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में ही लिखा है—भगवान् गणेशजी के बल, पराक्रम तथा प्रखर बुद्धि-विवेक को देख कर ही उनको प्रमथादिगणों का अधिपतिपद प्रदान किया और गणेश (गणों के ईश) नाम प्रदान किया गया था। वे प्रमथादिगणों को नियन्त्रण में रखते हैं। अतः कार्य के शुभारम्भ में गणेशजी की पूजा करने से उस कार्य में कोई विघ्न नहीं होता है—

गणेशपूजने विघ्नं निर्मूलं जगतां भवेत्।
निर्व्याधिः सूर्यपूजायां शुचिः श्रीविष्णुपूजते ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त गण. ६।१००)

'किसी कार्य के आरम्भ में भगवान् गणेशजी की पूजा कर लेने से विश्व के सभी विघ्न जड़-मूल से नष्ट हो जाते हैं। सूर्य की पूजा से शरीर के रोग दूर हो जाते हैं तथा भगवान् विष्णु की पूजा से बाहर एवं भीतर से पवित्रता प्राप्त हो जाती है।'

नारद पुराण में ॐ (ओंकार) का महत्त्व प्रतिपादन करते हुए कहा गया है—भगवान् गणपति के विग्रह का एक रूप-गजमुख-एकाक्षर ॐ (ओंकार) परब्रह्म रूप का ही प्रतीक है। भगवान् गणेश वेदमन्त्रों के अधिष्ठाता ब्रह्मणस्पति हैं और वेद मन्त्रों के उच्चारण में प्रथम ॐ शब्द का प्रयोग होता है। यह ॐ श्रीगणेशजी का परम मङ्गल ओंकार शब्द परब्रह्म है। ओंकार का उच्चारण मङ्गल प्रदान करने वाला है—

ओंकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा।
कण्ठं भित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ।।

(नारद पुराण पूर्व. ५१।१०)

ओंकार सृष्टि का आदि बीज और अव्यक्त परब्रह्म का प्रथम व्यक्त होने वाला स्वरूप तथा शब्द है। ओंकार और परब्रह्म का वाच्य-वाचक सम्बन्ध है। यह ॐ प्रणव ही परब्रह्म की सर्वश्रेष्ठ स्तुति मानी गई है।

ओंकार प्रभवा देवा ओंकार प्रभवाः स्वराः।
ओंकार प्रभवं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।

इस समस्त चराचर सृष्टि (त्रिलोकी) का रहस्य इस ओंकार में ही समाया

हुआ है। यह गणेश ॐ ही हैं। अतः इनकी सर्वप्रथम पूजा होना नितान्त ही श्रेष्ठ विधान है।

ब्रह्माण्ड पुराण में एक कथा आती है—एक समय श्री त्रिपुरसुन्दरी ललिताम्बा का भण्डासुर गजासुर आदि दैत्यों के साथ घमासान युद्ध चल रहा था। उस युद्ध में भण्डासुर के अनेक पुत्रों का निधन हो गया और दैत्य लोग हतोत्साह हो गए। युद्ध से निराश हुए दैत्यों ने जयविघ्न-यन्त्र का निर्माण कर पूजा की और माता ललिताम्बा के सेना शिविर में रखवा दिया। इस यन्त्र के प्रभाव से ललिताम्बा की सेना में आलस्य, कृपणता, निद्रा, तन्द्रा, दीनता, क्लीवता, अहंकार, विस्मृति आदि दोष उत्पन्न हो गए। समस्त सेना शस्त्रों का परित्याग कर उत्साह-हीन हो कर बैठ गई। इस स्थिति को देख कर श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी ललिताम्बा श्रीमहा-कामेश्वर के पास पहुँची और उनके मुखमण्डल की ओर मन्दहास्य पूर्वक देखने लगी। तब ही ललिताम्बा के मन्द हास्य के तेज प्रकाश पुञ्ज में से एक अनिर्वचनीय तेजस्वी देव गजानन देवता प्रकट हो गए। उनका मुख हाथी के समान था। उनकी अङ्ग कान्ति जपा-कुसुम के समान से लाल थी। उनके दस हाथों और सूण्ड में क्रमशः विजोरा (नीम्बू), गदा, ईख का धनुष, शूल, शङ्ख, पाश, उत्पल, धान की बाल, वरदमुद्रा, अंकुश तथा रत्नमय कलश लिए हुए थे। वे लम्बोदर थे। उनके मस्तक पर चन्द्राकार चूड़ामणि शोभा पा रही थी। ऐसे स्वरूपधारी गजानन देवता ने प्रकट होते ही श्रीत्रिपुरसुन्दरी ललिताम्बा के चरणों में प्रणाम किया।

ललिताम्बा का आशीर्वाद प्राप्त कर वह्नि प्रकार के अन्दर सेना-शिविर में पहुँचे। उन्होंने वहाँ विघ्न यन्त्र को देखकर तुरन्त ही अपने तेज दन्ताघात से उसे चूर्ण कर आकाश में उड़ा दिया। उस विघ्न-यन्त्र के नष्ट होते ही समस्त सेना सचेत होकर उत्साहपूर्वक युद्ध के लिए उद्यत हो गई।

श्री गजानन ने अपने पराक्रम से दैत्य सेना को मारते-मूर्च्छित करते हुए शत्रु की सात अक्षोहिणी सेना का व गजासुर नामक महापराक्रमी दैत्य का संहार कर दिया।

गजासुर दैत्य को मारकर श्री गजानन; श्रीललिताम्बा के समक्ष उपस्थित हुए। श्रीगणपति पर श्री राजेश्वरी ललिताम्बा अत्यन्त प्रसन्न हुई और उनको समस्त देवी-देवताओं की पूजा से सर्वप्रथम पूजे जाने का वर प्रदान किया—

विततार महाराज्ञी प्रीयमाणा गणेशितुः।
सर्वदैवतपूजायाः पूर्वपूज्यस्वमुत्तमम् ॥

(ब्रह्माण्ड पुरा. ललितो. २७।१०४)

'श्रीगजानन भगवान् को जब महाराज्ञी ललिताम्बा ने यह वर प्रदान कर दिया, तब से ही श्रीगणेश महाराज विष्णु, ब्रह्मा, शिव आदि सब ही देवी-देवताओं, असुरों, ऋषि-मुनियों में प्रथम पूजित होने लग गए।'

किसी कार्य के शुभारम्भ में भगवान् गणेशजी की पूजा स्तवन नहीं करने से उस कार्य में विघ्न होने की कथा-प्रमाण भी शास्त्रों में प्राप्त होते हैं। श्रीमद्भागवत में एक कथा आती है—

समुद्र-मन्थन के लिए जब देवगण तथा राक्षसगण मन्दराचल पर्वत को ले

कर ग्रा रहे थे, उसके भार से कई एक देवता एवं राक्षस उस पर्वत के नीचे दबने से तथा उसकी रगड़क में ग्रा जाने से क्षत विक्षत तथा हताहत हो गए। तब भगवान् विष्णु ने उन सबको ग्रपने ग्रमृत समान हस्त कमल के स्पर्श द्वारा पुन: स्वस्थ एवं पुनर्जीवित किया। तत्पश्चात् मन्दराचल पर्वत को मथानी के रूप में समुद्र में जल के ऊपर रखा गया, तब वह समुद्र के जल में डूब गया। इस दृश्य को देख कर देवता तथा राक्षस निराश तथा उत्साहहीन हो गए। तब भगवान् विष्णु ने विचार किया कि इस कार्य में इस प्रकार के विघ्न उपस्थित क्यों हो रहे हैं तो ज्ञात हुग्रा कि इस कार्य के ग्रारम्भ में गणेश की पूजा नहीं की गयी है, ग्रत: वे ही यह विघ्न उपस्थित कर रहे हैं—

विलोक्य विघ्नेशविधिं तदेश्वरो
दुरन्तवीर्योऽवितथाभिसंधि: ।
कृत्वा वपु: कच्छपाद्भुतं महत्
प्रविश्य तोयं गिरिमुज्जहार ।।

(श्रीमद्भागवत ८।७।८)

उस समय भगवान् विष्णु ने देखा कि यह तो सब विघ्नों के ग्रधिपति का किया हुग्रा कार्य है। इसलिए भगवान् विष्णु ने बहुत बड़ा तथा ग्रनोखा ग्रपना ही कच्छप-रूप बनाया ग्रौर समुद्र के जल में पैठ कर के मन्दराचल को ग्रपनी पीठ पर ऊँचा उठा लिया, तब ही समुद्र मन्थन कार्य पूर्ण हो सका। भगवान् विष्णु तो ग्रनन्त शक्ति व प्रबुद्ध हैं, वे तो चाहे सो ही कर सकते हैं।

इसी प्रकार की दूसरी कथा गणेशपुराण के उपासना खण्ड में प्राप्त होती है—

भगवान् त्रिपुरारी महेश्वर ने त्रिपुर विजय के लिए उद्योग किया, किन्तु उस समय कार्यारम्भ में उन्होंने भी भगवान् गणेश की ग्रर्चना नहीं की, ग्रत: विघ्नों से घिर गए। तब त्रिपुरारी ने भी मन ही मन विचार कर निश्चय किया कि यह तो गणपति का ही किया हुग्रा विघ्न है। तत्पश्चात् महादेवजी ने भक्तिभाव से गणेशजी की पूजा की ग्रौर उन्हीं ग्रपराजित देव से विघ्नशान्ति का उपाय पूछा। भगवान् शिव की पूजा से गणपति महाराज सन्तुष्ट हुए ग्रौर विघ्न की शान्ति के लिए महादेवजी से कहा कि ग्राप विधि-विधान से गणेश सहस्रनाम का पाठ करें। गणेशजी के उपदेशानुसार महादेवजी ने पूजा व सविधि गणेशसहस्रनाम का पाठ किया, तब ही कार्यसिद्धि व सफलता को प्राप्त हो सके।

एक कवि ने इतिहास-पुराण प्रमाणित कथा संकेत करते हुए गणेशजी की प्रार्थना में लिखा है —

जेतुं यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलिं बध्नता,
स्त्रष्टं वारिभवोद्भवेन भुवनं शेषेण धर्तुं धराम् ।
पार्वत्या महिषासुरप्रमथने सिद्धाधिपै: सिद्धये,
ध्यात: पञ्चशरेण विश्वजितये पायात् स नागानन: ।।

'त्रिपुर पर विजय प्राप्त करने के लिए भगवान् शंकर ने, छल से बलि को बांधने के लिए भगवान् विष्णु ने, चौदहों भुवनों की रचना के लिए ब्रह्माजी ने,

पृथ्वी को अपने मस्तक पर धारण करने के लिए भगवान् शेष ने, महिषासुर के वध के लिए भगवती पार्वती (दुर्गा) ने, सिद्धि प्राप्त करने के लिए सिद्धेश्वरों ने तथा विश्व विजय करने के लिए कामदेव ने जिनका ध्यान (स्मरण) किया, वे भगवान् गजानन हमारी रक्षा करें।'

भगवान् गणेश विघ्नों के अधिपति भी हैं, अतः उनका पूजन कर लेने से विघ्न नहीं होते। याज्ञवल्क्यस्मृति ग्रन्थ के आचाराध्याय में 'गणपतिकल्प' के नाम से इस विषय में पूर्ण विवरण वृहत रूप में लिखा हुआ है। उसमें उल्लेख है—

विनायकः कर्मविघ्नसिद्ध्यर्थं विनियोजितः।
गणानामाधिपत्ये च रुद्रेण ब्रह्मणा तथा॥ (२७१)

'ब्रह्मा, रुद्र तथा विष्णु ने गणेशजी को कर्मों में विघ्न डालने का अधिकार तथा पूजा करने के पश्चात् विघ्न शान्त कर देने के सामर्थ्य (अधिकार)—भी प्रदान किए हैं। उसके साथ ही पुष्पदन्त आदि गणों का अधिपति पद भी प्रदान किया है।'

किसी भी शुभ कार्य का आरम्भ करते समय में तथा किसी भी देवी-देवता की पूजा करने के समय में सर्वप्रथम गणेशजी का पूजन अवश्य करना ही चाहिए। यदि पहले गणेशजी का पूजन नहीं किया जाता है तो उस कार्य में अवश्य विघ्न होते हैं। भविष्य पुराण में लिखा है—

देवतादौ यदा मोहाद् गणेशो न च पूज्यते।
तदा पूजाफलं हन्ति विघ्नराजो गणाधिपः॥

'यदि मोहवश (प्रमाद से) देवताओं के आदि में गणेशजी की पूजा नहीं की जाती है तो विघ्नराज गणेश पूजा के फल को नष्ट कर देते हैं।'

भगवान् गणेशजी के आदिपूज्य, गणेश्वर, गणाधिपति, विघ्नोत्पादक, विघ्नविनाशन, विघ्नेश्वर आदि अनेक नाम तथा ऐसे ही अनेक अधिकारों एवं पदों का उल्लेख विविध शास्त्रों में मिलता है। उनमें से अनेक नामों का वर्णन तो गणेश सहस्रनाम में ही प्राप्त है। भगवान् गणेशजी का स्वभावप्रकृति बालकों के समान मानी गयी है। इनकी छोटे से छोटे रूप में पूजा कर लेने और सूक्ष्मरूप में स्मरण नमन करने से ही यह प्रसन्न भी हो जाते हैं। अतः सब प्रकार के शुभ कार्यों में अथवा देव पूजन में सूक्ष्म पूजन स्मरण मात्र से ही शुभ कार्यसिद्धि-फलप्रद-निर्विघ्न सम्पन्न हो जाते हैं। यदि कोई शुभकार्यारम्भ में, देव पूजनादि में इनका पूजन, स्मरण, नमन नहीं करता है तो वे अपने विघ्न समूह को लेकर वहाँ पहुँच जाते हैं और किसी न किसी प्रकार से उस कार्य में अवश्य विघ्न किए बिना नहीं रहते हैं—

यो विघ्नपाशं च करेण बिभ्रत्
स्कन्धे कुठारं च तथापरेण।
अपूजितो विघ्नमथोऽपि मातुः
करोति को विघ्नपते समोऽन्यः॥

किन्तु कोई इनकी पूजा स्मरण करता है तो ये उस वक्त के समस्त मनोरथों की शीघ्र फलसिद्धि भी प्रदान कर देते हैं—

ध्यातेन येनाखिलदेहभाजां
पूर्णा भविष्यन्ति मनोऽभिलाषाः। (वही ८)

ब्रह्मा, विष्णु, तथा महेश (त्रिदेवों) का एक साथ सब देवगणों तथा ऋषि-मुनियों के प्रति कथन है—

अग्रो वयं सुरवरा यथा पूज्या जगत्त्रये ।
तथाद्य गणनाथश्च सकलैः प्रतिपूज्यताम् ।।
एतत्पूजां पुरा कृत्वा पश्चात्पूज्या वयं नरैः ।
वयं च पूजिताः सर्वे नायं च पूजितो यदा ।।
अस्मिन्नपूजिते देवाः परपूजा कृता यदि ।
तदा तत्फलहानिः स्यान्नात्रकार्या विचारणा ।।

(शिव पु. रुद्रस. कु ख- १८ ११,२३-२४)

'हे अमरवरो ! जैसे त्रिलोक्य में हम तीनों देवताओं की पूजा होती है, उसी भाँति तुम सबको इन गणेश का भी पूजन करना चाहिए । ....मनुष्यों को चाहिए कि पहले इनकी पूजा कर लें, तत्पश्चात् हम लोगों का पूजन करें । ऐसा करने से हम लोगों की पूजा सम्पन्न हो जाएगी । देवगणो ! यदि कहीं इनकी पूजा पहले न करके अन्य देवों का पूजन किया गया तो उस पूजन का फल नष्ट हो जाएगा — इसमें अन्यथा विचार करने की आवश्यकता नहीं है ।'

आदिपूज्यं गणाध्यक्षमुमापुत्रं विनायकम् ।
मङ्गलं परमं रूपं श्रीगणेशं नमाम्यहम् ।।

'जो उमा के पुत्र गणाध्यक्ष विनायक हैं; जिनकी सर्वप्रथम पूजा होती है, ऐसे परम मङ्गलस्वरूप श्रीगणेशजी को मैं नमस्कार करता हूँ ।'

किसी भी मङ्गलमय ऐहलौकिक पारलौकिक देवताओं की आराधनादि सब ही शुभ कार्यों के आरम्भ में शीघ्रता से करने योग्य—भगवान् गणेशजी की सूक्ष्म पूजन स्तवन विधि—

किसी भी पात्र (बर्तन) अथवा किसी पत्ते पर पीले रंग की मिट्टी की एक गोल डलो अथवा साबुत सुपारी रख देवें । यह भगवान् गणेशजी की मूर्ति हो गयी । इस पर तीन बार बहुत सूक्ष्म रूप से जल का छींटा लगा देवें । यह उन गणेशजी का पाद्य, अर्घ्य तथा आचमन हो गया । इसके पश्चात् रंगीन सूत के तीन तार जिनको कहीं नाल, कहीं मोली अथवा कहीं कलावा कहते हैं, दस-पाँच अगुल का ही टुकड़ा तोड़ कर चढ़ा देवें । यह गणेश का वस्त्र पहनाना हो गया । इसके पश्चात् कुंकुम (रोली) का जल मिला कर छींटा लगा देवें । यह गणेशजी का तिलक हो गया । इसके पश्चात् कोई भी प्रकार का लाल रंग का पुष्प मिले वह अथवा दूब (घास) के पाँच सात तार ही चढ़ा देवें । तदनन्तर सूखे चावलों के दाने (पाँच-चार), गुड़ की छोटी डली (टुकड़ी) अथवा दो-चार बताशे अथवा मिश्री की दो-चार डली यह सब अथवा इनमें से जो भी उस समय मीठी वस्तु प्राप्त होवे वही चढ़ा देवें । इसके पश्चात् चार बार उनके सामने जल का छींटा लगावें । यह उनका नैवेद्य-आचमन (भोजन-जल समर्पण) हो गया । इसके पश्चात् दोनों हाथ जोड़ कर उनके सामने स्तवन प्रार्थना करें ।

गजाननं भूत गणाधिसेवितं
कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम् ।

उमासुतं शोकविनाशकारकं
नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम् ।।

इसके पश्चात् नतमस्तक हो कर नमस्कार करें। इससे ही भगवान् गणपति प्रसन्न हो जाते हैं। इस प्रकार पूजा नमन करने वाले के सब कार्य निर्विघ्न आनन्द-पूर्वक सफल सिद्ध होते हैं। इसमें केवल आस्तिक श्रद्धा विश्वास भाव मात्र ही है। इसमें किसी भी प्रकार से कोई पैसा और समय अधिक खर्च नहीं होता है।

नमस्तस्यं गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने।
यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे ।।

'जो ब्रह्मविद्या प्रदान करने वाले हैं तथा जिनका नाम विघ्नों के समुद्र को सुखाने के लिए अगस्त्यजी ऋषि के समान है, उन गणेशजी को नमस्कार है।'

卐

सोपान ५

भगवान् गणेशजी का मङ्गलमय विवाह

विश्वात्मिका ब्रह्ममयी हि बुद्धि-
स्तस्या विमोहप्रदिका च सिद्धिः।
ताभ्यां सदा खेलति योगनाथ-
स्तं सिद्धिबुद्धीशमथो नमामि ।।

(मुद्गलपुराण अष्ट, ख, गणेश हृदयस्तो. ३६)

'बुद्धि विश्व की आत्मा है, ब्रह्ममयी है, सिद्धि उसको विमोहित करने वाली है। उन दोनों के साथ मङ्गलमय गणेश की मङ्गलमयी लीला चलती रहती है। उस सिद्धि-बुद्धि के स्वामी को नमस्कार है।'

भगवान् गणपति और कार्तिकेय ने किशोर अवस्था में पदार्पण किया वे दोनों ही, अलौकिक अद्भुत गुण कर्मों से सम्पन्न थे। वे नित्य अनेक प्रकार की मनोहारिणी लीलाएं करते। उन्हें देखकर माता-पिता। (उमा—महेश्वर) अत्यन्त प्रसन्न और सुखी होते और अनेक प्रकारों से उन्हें स्नेह पूर्ण भावों द्वारा लालन-पालन करने में लगे रहते। स्कन्द और गणपति में परस्पर अत्यन्त प्रेम था। वे सर्वदा मिलकर अनेक प्रकार की बाल क्रीड़ा किया करते वे दोनों ही एक दूसरे के बिना रहते ही नहीं थे। वे दोनों ही अत्यन्त श्रद्धा, प्रेम भक्ति पूर्वक माता-पिता की आज्ञा पालन में रहते और सेवा-भक्ति भी करते थे। इन्हीं कारणों से उन बालकों पर माता-पिता का प्यार-दुलार भी दिनोंदिन बढता ही जा रहा था।

धीरे-धीरे दोनों ही बालक विवाह योग्य हो गए। उमा-महेश्वर उनकी विवाह योग्य अवस्था देखकर उनके विवाह-सम्बन्ध में विचार परामर्श भी करने लगे। स्कन्द और गणेश—दोनों भाई शिव-शिवा को समान रूप से प्रिय थे। वे विचार करते इन बालकों का विवाह सम्बन्ध किन कन्याओं से और किस प्रकार से किया जाए। माता-पिता की परस्पर वार्तालाप को सुनकर एक समय भगवान् गणपति ने कहा—पहले मेरा विवाह होगा। स्कन्द ने कहा—नहीं मेरा विवाह पहले होगा।

भगवान् महेश्वर एवं सर्वमाङ्गल्य प्रदायिनी शिवा ने दोनों पुत्रों की वार्ता सुनकर आश्चर्य किया और शिव-शिवा ने ही परस्पर परामर्श करके एक दिन दोनों पुत्रों गणेश तथा कार्तिकेय को अपने पास बुलाकर कहा—

हे पुत्रो ! तुम दोनों ही हम दोनों को अत्यन्त प्रिय हो। हमने तुम्हारी विवाह विषयक वार्ता सुनकर कि पहले विवाह किसका किया जाए। यह निर्णय हम तुम दोनों के द्वारा ही कराना चाहते हैं, उसमें शर्त यह होगी कि तुम दोनों में से जो भी कोई सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा करके प्रथम वापस लौट आएगा, उसका ही विवाह पहले किया जावेगा।

माता-पिता की बात सुनते ही मयूर वाहन कार्तिकेय ने तो सम्पूर्ण पृथ्वी की यथासाध्य शीघ्र परिक्रमा करने हेतु तत्काल ही शीघ्रातिशीघ्र प्रस्थान किया।

मूषकवाहन भगवान् गणेशजी माता-पिता की बात सुनकर सोच-विचार में पड़ गए—

मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? परम बुद्धिमान्, मूषकवाहन, लम्बोदर ने मन में विचार किया मैं तो एक-दो योजन भी नहीं चल सकता, फिर इस इतनी बड़ी पृथ्वी की परिक्रमा करके स्कन्द से पहले कैसे लौटकर आ सकूँगा। मन में सोचते-सोचते लम्बोदर ने निश्चय किया और शीघ्र स्नान करके शुद्ध उत्तम सुन्दर वस्त्र धारण किए और दो पवित्र शुद्ध उत्तम सुन्दर आसन बिछाए तथा शीघ्रता से माता-पिता के चरणों में प्रणाम कर निवेदन किया—

परम पूज्य श्री पिता एवं श्री माताजी आप दोनों इन दो मेरे बिछाए हुए आसनों पर विराजमान हों। मैं आप श्री के चरणों में प्रार्थना करता हूँ, आप कृपा करके मेरी अभिलाषा पूर्ण करें।

भगवान् आशुतोष एवं तत्काल प्रसन्न होने वाली माता उन आसनों पर विराजमान हो गए। मूषक वाहन गणेशजी ने उन माता-पिता की श्रद्धाभक्ति पूर्वक अत्यन्त विनम्रभाव से पूजा की और उनके मङ्गलमय चरण कमलों में बार-बार दण्डवत् प्रणाम किया। तत्पश्चात् वे सर्वसमर्थ माता-पिता की परम भक्ति भाव पूर्वक परिक्रमा करने लगे और प्रत्येक परिक्रमा के साथ दोनों के चरणों में प्रणाम भी करते। इस प्रकार बुद्धि विधाता गणेशजी ने सर्वेश्वर महादेव एवं सर्वेश्वरी माता पार्वती की सात प्रदक्षिणाएँ (परिक्रमाएँ) कीं और हाथ जोड़कर विविध प्रकार से उनका स्तवन किया। इसके पश्चात् निवेदन किया—

अब आप लोग कृपा करके मेरा विवाह शीघ्र कर दीजिए।

बुद्धिनिधान गणेशजी की प्रार्थना सुनकर धर्माध्यक्ष शिव ने कहा—

'तुम्हारा भाई स्कन्द नदी, समुद्र, पर्वत, कानन आदि सहित पृथ्वी की परिक्रमा करने गया है। तुम भी जाओ और पृथ्वी की परिक्रमा करके कार्तिकेय से पहले लौटकर आओ, तब तुम्हारा विवाह पहले हो जाएगा।'

शास्त्रनिधानपरायण गणेशजी ने अप्रसन्न होकर निवेदन किया—हे धर्ममूर्ति ! माताजी एवं धर्म के आधार पिताजी ! मैंने सम्पूर्ण पृथ्वी की एक नहीं, सात प्रदक्षिणाएँ (परिक्रमाएँ) करली हैं।'

विविध लीलाविहारी शिव-शिवा ने लौकिक नियमानुसार आश्चर्य दिखाते हुए अपने परम बुद्धिनिधान पुत्र गणेशजी से कहा—

'सप्त द्वीपवाली इस विशाल वसुन्धरा की परिक्रमा तुमने कब पूर्ण करली?' बुद्धिनिधान गणेशजी ने कहा—'हे धर्माध्यक्ष माता-पिता !! मैंने आप लोगों की सात परिक्रमा पूरी करके निश्चय ही जगल, पहाड़ों सहित सप्त द्वीपमयी इस वसुन्धरा की परिक्रमा करली है।' तदन्तर शास्त्रपारंगत गणेशजी ने निवेदन किया—धर्म के विधान वेदों और शास्त्रों के ये वचन सत्य हैं या असत्य हैं ?

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रक्रान्तिं च करोति यः।
तस्य वै पृथिवीजन्यफलं भवति निश्चितम्॥
पुत्रस्य च महत्तीर्थं पित्रोश्चरणपङ्कजम्।
अन्यतीर्थं तु दूरे वै गत्वा सम्प्राप्यते पुनः॥
इदं संनिहितं तीर्थं सुलभं धर्मसाधनम्।
पुत्रस्य च स्त्रियाश्चैव तीर्थं गेहे सुशोभनम्॥

(शिव पुराण रुद्रस कुमा. ख. १९।३९,४१-४२)

'जो पुत्र माता-पिता की पूजा करके उनकी प्रदक्षिणा करता है, उसको पृथ्वी की परिक्रमा करने का फल प्राप्त हो जाता है। क्योंकि पुत्र के लिए माता-पिता के चरण कमल ही महान् तीर्थ हैं। अन्य तीर्थ तो दूर जाने पर प्राप्त होते हैं, किन्तु धर्मसाधन की जड़ यह तीर्थ तो पास में ही सुलभ हैं। पुत्र के लिए माता-पिता और स्त्री के लिए पति उत्तम सुन्दर तीर्थ घर मे प्राप्त हो जाते हैं।'

इसके पश्चात् महाबुद्धिमान् विघ्नेश्वर ने कहा—'वेद शास्त्रों में बतलाए हुए निरन्तर यह वचन झूठे मान लिए जायेंगे तो आप देवताओं का वेदों में बतलाया हुआ सब स्वरूप भी झूठा ही मानना पड़ेगा, इसलिए आप या तो वेदों में बतलाए हुए वचन झूठे कर देवें, नहीं तो जल्दी ही मेरा विवाह करें। आप दोनों धर्म की मूर्ति हैं, इसलिए जो भी सबसे उत्तम निर्णय हो, वही प्रदान करें।'

शास्त्रानुसार और बुद्धिमता पूर्ण सारभूत पार्वतीनन्दन की इस प्रकार की बातें सुनकर भगवान् महेश्वर-महेश्वरी अत्यन्त आश्चर्य चकित हुए। और विद्यावारिधि गणेशजी की बडाई करते हुए बोले—

पुत्र ते विमला बुद्धिः समुत्पन्ना महात्मनः।
त्वयोक्तं यद्वचश्चैव तत्तथैव न चान्यथा॥
वेदशास्त्रपुराणेषु बालकस्य यथोदितम्।
त्वया कृतं तु तत्सर्वं धर्मस्य परिपालनम्॥

सम्यक्कृतं त्वया यच्च तत्केनापि भवेदिह ।
अवाभ्यां मानितं तच्च नान्यथा क्रियतेऽधुना ।।
(शिवपुरा. रुद्रसं. कु ख. ५०।५३-५४)

'पुत्र ! तुम महान् आत्मबल से भरे पूरे हो, इससे ही तुम्हारे अन्दर इस प्रकार की स्वच्छ बुद्धि और ज्ञान प्राप्त हुआ है । तुमने जो बात कही है, वह नितान्त ही सत्यतापूर्ण हैं । इससे दूसरी बात नहीं हो सकती । वेद-शास्त्रों और पुराणों में बालकों के लिए धर्म पालन करने योग्य बातें बतलाई गई हैं, वह सब तुमने पूर्ण कर ली । तुमने जो बातें की हैं, वह अन्य (दूसरा) कौन कर सकता है ? हमने यह सब तेरी बातें स्वीकार कर ली हैं, अब इसके अतिरिक्त और कुछ नही होगा ।'

भगवान् शिव-पार्वती ने बुद्धिसागर गजानन को इस प्रकार सन्तोष प्रदान किया और तदनन्तर गणेशजी के विवाह विषय में विचार व प्रयत्न करने लगे ।

भगवान् शिव-शिवा परस्पर विचार-विमर्श करते गजानन अत्यन्त शूरवीर, सर्वसद्गुण-सम्पन्न, अद्भुत प्रतिभाशाली हैं । इसी के अनुकूल सर्वगुण सम्पन्न कन्या से ही इसका परिणय होना योग्य है । किन्तु ऐसी ही सर्वगुण-विभूषित कन्या कहाँ से प्राप्त होगी ।

एक दिन शिव-सदन पर ब्रह्मपुत्र देवर्षि नारदजी पहुँचे । माता पार्वतीजी ने उनका स्वागत-सत्कार किया उन्हें उत्तम श्रेष्ठ आसन पर बैठाया ।

भगवान् शिव ने नारदजी से कहा—'मुनिवर ! आप बहुत दिनों के बाद यहाँ पधारे, आपसे मिलने पर बड़ी प्रसन्नता हुई । कृपा करके परम मेधावी रूप-गुण-सम्पन्न गणेश के योग्य कोई कन्या बतलाइये । हम इसका विवाह करने के लिए आतुर हैं ।'

नारदजी ने अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक कहा—

'आपके पुत्र के गुण यश सुन्दरता का बखान त्रिलोकी में व्याप्त हो रहा है । प्रजापति विश्वरूप के दिव्य-रूप-यौवन-सम्पन्ना, परम लावण्यवती, दो कन्याएँ हैं । दोनों कन्याएँ प्रत्येक दृष्टि से आपके पुत्र गणेश के अनुकूल तथा मङ्गलमयी हैं । और उन्होंने ही मुझे इस कार्य के लिए भेजा है । आप कृपा पूर्वक यह सम्बन्ध स्वीकार कर लेवें ।'

महर्षि नारदजी का यह प्रस्ताव सुनकर भगवान् शंकर और माता पार्वती अत्यन्त प्रसन्न हुए । और महर्ष दोनों कन्याओं का गणेशजी के साथ विवाह सम्बन्ध कर लेना स्वीकार कर लिया ।

भगवान् शिव व माता पार्वती द्वारा ऋद्धि-बुद्धि का विवाह मङ्गलायतन गणेश के साथ कर लेने की स्वीकृति प्राप्त होने पर महर्षि नारद जी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई और वे विश्वरूप प्रजापति के पास यह शुभ समाचार सुनाने के लिए वापस लौट गए ।

नारदजी द्वारा ऋद्धि-बुद्धि का गणेशजी के साथ सम्बन्ध को स्वीकृति का

समाचार विश्व प्रजापति को विदित होने पर उनकी प्रसन्नता की तो सीमा ही नहीं रही ।

दोनों ओर भगवान् गणेश और ऋद्धि-बुद्धि के मङ्गल परिणय की तैयारियाँ होने लग गईं ।

मङ्गलमय गणेशजी के शुभ विवाह मुहूर्त लग्न निश्चय के अनुसार भगवान् शिव एवं माता पार्वती की ओर से भगवान् विष्णु इन्द्रादि सब-ही देवी-देवताओं, महर्षिगणों, मुनियों तथा अप्सराओं को विवाहमहोत्सव में सम्मिलित होने का निमन्त्रण प्राप्त होने पर वे सब ही प्रसन्नचित्त हुए शीघ्रता से शिव-सदन पहुँच गए ।

भगवान् शंकर के मङ्गलभवन में जो अत्यन्त ही सुन्दरता पूर्वक सजाया गया था । मङ्गलायतन गजानन को रत्न जटित स्वर्ण निर्मित सिंहासन पर बैठाकर सब प्रकार के उत्तम सुन्दर विविध भांति के रेशम निर्मित वस्त्रालंकार आभूषणों से अलंकृत कर भगवान् शिव-माता शिवा एवं सब ही आगन्तुक देव-गणों ने भगवान् गणपति को शुभ फल प्रद मङ्गलमय शकुन उपचार प्रदान किए और उनको अत्यन्त रमणीक रत्नस्वर्ण निर्मित वृहत् मूषक वाहनों द्वारा चलाए जाने वाले रथ पर विराजमान किया । तदनन्तर भगवान् महेश्वर एवं माता पार्वती तथा सभी आगुन्तक देवगण, ऋषि-मुनियों सहित अपने-अपने योग्य वाहनों पर आरूढ़ हुए और रथारूढ़ गणपति को आगे करके विश्वरूप प्रजापति (कन्यापक्ष) के स्थान पर प्रस्थान किया । बरात के आगे अनेक प्रकार के सुन्दर मङ्गल-वाद्य बज रहे थे । और शिवगण अपने-अपने शस्त्रास्त्रों सहित हर्षोत्फुल्ल हुए समस्त बरात की रक्षा की परिधि के रूप में रक्षा करते हुए चले जा रहे थे । आकाश धूलिकणों से आच्छादित हो रहा था । इस प्रकार यह सब विशाल समूह आनन्द-मग्न हुआ चला जा रहा था ।

विश्वरूप प्रजापति ने शिव-पार्वती एवं सब ही देवी-देवताओं तथा शिव के सब ही गणों के ठहरने योग्य अत्यन्त सुन्दर उत्तम भवनों के एक नगर का निर्माण करा दिया था । बरात के पहुँचने पर उन सबको उनके ठहरने योग्य विभिन्न भवनों में ठहराया गया । और सब की विभिन्न इच्छाओं के अनुकूल सब प्रकार के विभिन्न मिष्टान्न, पकवान, नमकीन व्यञ्जन पदार्थों का निर्माण कराके भण्डार भरा दिए थे । और इसी भाँति से सब प्रकार के फलों के भण्डार भी वहाँ स्थापित करा दिए थे । भोजनोपरान्त मुख शुद्धि हेतु उत्तम सुन्दर सुवासित पदार्थों द्वारा निर्मित पानों के बीडों के भण्डार भी वहां स्थापित किए थे । प्रजापति ने ऐसा उत्तम सुन्दर सुव्यवस्थित सुप्रबन्ध करा दिया था कि जिसको जिस पदार्थ वस्तु की आवश्यकता इच्छा हो, वहीं वस्तु पदार्थ जहाँ बरातीगण ठहरे हुए हैं, उसी स्थान पर अपने आप ही प्रस्तुत होते रहें ।

वहाँ सब समय मङ्गल-वाद्य बजते रहें । और सब समय में अनेक प्रकार के नृत्य मङ्गल गान होते रहें । अन्य सभी प्रकार के भी मनोरंजन साधन के प्रबन्ध जुटा दिए थे । बरात में आए हुए सभी देवी-देवता आगन्तुक ऋषि ब्राह्मण विद्वान्,

शिवजी के गरण इन सब ही आवश्यक वस्तु पदार्थों का उपभोग लाभ प्रयोग प्राप्त करते हुए आनन्द मग्न प्रमुदित हो रहे थे।

शुभ विवाह (पाणि-ग्रहण) मुहूर्त लग्न होने पर ऋषि-मुनियों द्वारा मन्त्रोच्चारण पूर्वक विश्वकर्माने कर्पूर गौर शिव और परमसती पार्वती की इच्छानुसार शास्त्र विधि अनुसार मङ्गलमय विवाह संस्कार सम्पन्न कराया। उस समय उस स्थान पर सब ही देवी-देवगण, ऋषि-मुनि समुदाय एकत्र हुए। सबकी प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं थी। देव-वाद्य बज रहे थे। विविध प्रकार के नृत हो रहे थे, मङ्गल गीत गाए जा रहे थे।

भगवान् महेश्वर माता महेश्वरी अपने प्रिय बुद्धि निधान, ज्ञान समुद्र, शुभ गुण सदन, पुत्र गणेश का 'ऋद्धि' और 'बुद्धि' दोनों के साथ विवाह करके अत्यन्त प्रसन्न तथा आनन्द मग्न हो गए।

विश्वरूप प्रजापति के विदा करने पर भगवान् शिव माता शिवा अपने प्रिय पुत्र के साथ ऋद्धि-सिद्धि पुत्रवधुओं सहित प्रमुदित मन आनन्द पूर्वक शिव-सदन में पहुँच गए। अपने मङ्गलमय परिणय के हो जाने से सर्वानन्द मङ्गल प्रदाता गणेशजी अत्यन्त प्रसन्न व आनन्दित हो गए। अत्यन्त सुशीला एवं परम आज्ञाकारिणी सुमधुर भाषिणी ऋद्धि-सिद्धि दोनों पत्नियों के साथ रहते हुए अपने जीवन को सुख और आनन्द पूर्वक मानने लगे। समय आने पर गणेश पत्नी ऋद्धि के कोंख से 'क्षेम' और 'बुद्धि' के उदर से 'लाभ' नामक अत्यन्त सुन्दर दिव्य बालकों का जन्म हुआ—

सिद्धिर्गणेशपत्न्यास्तु क्षेमनामा सुतोऽभवत्।
बुद्धिर्लाभाभिधः पुत्र आसीत् परमशोभनः॥

(शिवपुरा. रुद्र सं. कुमा. ख. २०।८)

इस प्रकार गणाध्यक्ष भगवान् गणेश सपरिवार परमानन्दपूर्वक निवास करने लगे।

कुमार कार्तिकेय

सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा करके गजानन-भ्राता कार्तिकेय जब लौटकर आए तब देवर्षि नारदजी के द्वारा गणेशजी के विवाह हो जाने का समाचार मिला, तब अत्यन्त खिन्न चित्त हुए। उन्होंने दुःखी मन से, अपने परम पूज्य पिता श्री के चरणों में प्रणाम कर शिव-सदन त्यागकर अन्यत्र ही चले जाने का निश्चय कर लिया। शिवा और शिव ने उन्हें बहुत समझाया; किन्तु वे अपने निश्चय से विचलित नहीं हुए और क्रौंच पर्वत पर चले गए।

तद्दिनं हि समारभ्य कार्तिकेयस्य तस्य वै।
शिवपुत्रस्य देवर्षे कुमारत्वं प्रतिष्ठितम्॥
तन्नाम शुभदं लोके प्रसिद्धं भुवनत्रये।
सर्वपापहरं पुण्यं ब्रह्मचर्यप्रदं परम्॥

(शिवपुरा. रुद्र सं. कु. खं. २०।२७-२८)

'उसी दिन से शिव-पुत्र स्वामि कार्तिकेय का कुमारत्व (कुँआरपना) प्रतिष्ठित हुआ। उनका 'कुमार'—नाम त्रैलोक्य में विख्यात हो गया। वह नाम शुभदायक, सर्वपापहारी, पुण्यमय और उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य की शक्ति प्रदान करने वाला है।'

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ४३ में स्वामी कार्तिकेय का विवाह देवसेना (महाषष्ठी) के साथ होने का आख्यान भी प्राप्त होता है। उसमें 'देव सेना' जिसको महाषष्ठी भी कहते हैं, उसकी उत्पत्ति कथा भी लिखी है। और लिखा है—प्रजापति ने अपनी रत्नाभरणभूषिता परम सुन्दरी एवं शीलवती कन्या देव सेना (महाषष्ठी) को वैवाहिक विधि के अनुसार वेदमन्त्रोच्चारण पूर्वक पाणि-ग्रहण संस्कार करके स्वामी कार्तिकेय को समर्पित किया था।

प्रत्येक कार्तिक-पूर्णिमा के पावन पर्व पर देवता, ऋषि तीर्थ और मुनीश्वर स्वामी कार्तिकेय के दर्शनार्थ क्रौंच-पर्वत पर जाया करते हैं। कार्तिक-पूर्णिमा के दिन कृतिका नक्षत्र का योग होने पर कुमार कार्तिकेय का दर्शन करने से मनुष्य के सब पातक धुल जाते हैं और उसकी समस्त कामना पूर्ण होती हैं।

अपने प्राणप्रिय, सुन्दरतम, मयूरवाहन पुत्र कार्तिकेय के बिना पुत्रवत्सला माता पार्वती अत्यन्त दुःखी रहने लगी। एक दिन अत्यन्त व्याकुल होकर अपने प्राण-सर्वस्व शिव से दीन-वाणी में बोली – 'स्वामिन्! जहाँ कार्तिकेय गया है, वहीं मुझे भी ले चलिए।'

भगवान् शिव अपनी प्राणाधिका पत्नी पार्वती को संतुष्ट करने के लिए अपने अंश से पार्वती को साथ लेकर क्रौंच पर्वत पर पहुँचे और वहाँ सर्व-सुखद मल्लिकार्जुन – नामक ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में प्रतिष्ठित हो गए। सत्पुरुषों की गति और भक्त वाञ्छा कल्पतरु परम प्रभु शिव आज भी अपनी प्राण-प्रिया के साथ वहाँ विराजमान हैं।

जब कुमार कार्तिकेय ने अपने माता-पिता के वहाँ आने का समाचार सुना तो वहाँ से अन्यत्र चले जाने का विचार किया, किन्तु वे तीन योजन दूर गए थे, तब ही देवताओं और ऋषियों ने उनसे वहाँ ही रुक जाने की प्रार्थना की। इस कारण दयामय कुमार आगे नहीं गए और वहाँ ही रुक गए।

अपने प्राणप्रिय पुत्र कार्तिकेय के स्नेह से विह्वल शिव-शिवा प्रत्येक पर्व पर उन्हें वहाँ देखने आते हैं। अमावस्या के दिन करुणामूर्ति कर्पूर गौर और पूर्णिमा के दिन पवित्रतम प्रेममूर्ति माता पार्वती वहाँ पधारती हैं।

कल्याण मासिक पत्र के तीर्थाङ्क नामक विशेषांक के पृष्ठ ३८५ पर 'तिरु-प्परं कुन्नम्' तीर्थ का वर्णन प्राप्त होता है। यह स्थान मदुरा से पाँच मील दूर स्टेशन है। स्टेशन से दो फर्लांग पर एक पर्वत काटकर गुफा मंदिर बहुत बड़ा बना हुआ है उसमें सभी देवताओं की मूर्ति स्थापित है। यह सुब्रह्मण्य स्वामी का मंदिर है। यहाँ के लोगों की मान्यता है कि स्वामी कार्तिकेय का विवाह यहाँ इस तीर्थ में हुआ था।

शिव पुराण में लिखा है —

एतच्छ्रुत्वा नरो धीमान् सर्वपापैः प्रमुच्यते।
शोभनाल्लभते कामानीप्सितान् सकलान् सदा॥
यः पठेत् पाठयेद्वापि शृणुयाच्छ्रावयेत्तथा।
सर्वान् कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥

(शिवपुरा. रुद्र सं. कु. ख. २०।३९-४०)

'इस ग्राख्यान को सुनकर बुद्धिमान् मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। ग्रौर उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। जो मनुष्य इस चरित्र को पढ़ता ग्रथवा पढ़ाता है, एवं सुनाता ग्रथवा सुनता है, निस्संदेह उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं।'

भगवान् गणपति एवं स्वामी कार्तिकेय दोनों भाइयों के चरणों में बारंबार नमस्कार है।

卐

सोपान ६

श्री गणेश-लोक

श्री गणेशजी के लोक धाम) के विषय में गणेशपुराण में लिखा है—

विस्तीर्णपञ्चसाहस्रं योजनानि महामते ।।
रत्नकाञ्चनभूमौ स राजते भासयन् दिशः ।
स्वानन्दनामा दिव्योऽयमिक्षुसागरमध्यगः ।।
(गणेशपुरा. २।५०।३१-३२)

'श्री गणेशजी के उस धाम का नाम 'स्वानन्दधाम' है। यह द्वीप इक्षुरस सागर के मध्य में पांच हजार योजन के विस्तार में स्थित है।'

उस द्वीप-प्रान्त की पृथ्वी इक्षुसागर की लहरों से प्रक्षालित होती रहती हैं। ग्रौर उसमें मन्द-मन्द शीतल सुगन्धित पवन चलती रहती है। यहाँ की पृथ्वी नवरत्नमय निर्मित है। वहाँ प्रकट हुए उन रत्नों की चमक से वहाँ पृथ्वी ग्ररुण वर्ण दिखायी देती है। मन्दार पारिजात ग्रादि पांचों प्रकार के कल्पवृक्षों की पंक्तियों तथा ग्रनेक प्रकार के विविध सुगन्धित चित्र विचित्र पुष्प लताग्रों से वह व्याप्त है। सूर्य चन्द्रमा के उदित प्रकाश से वह भूमि दिग-दिगन्त तक प्रकाशित है। उस द्वीप के मध्य में नवरत्नमय पारिजात वृक्ष भी हैं, वहाँ छहों ऋतुएँ ग्रपने गुणधर्मानुकूल समयानुसार प्रीति बढाती रहती हैं। वह नित्य सेवन करने योग्य हैं। कई ग्रन्थों में इस द्वीप का नाम 'चिन्तामणि द्वीप', 'सर्वसौन्दर्य कोप', 'नवरत्नमय द्वीप', 'दिव्यलोक', भी बतलाया गया है।

वहाँ निवास करने वाले देवताग्रों के ग्रसंख्य प्रकाशमान ग्रनेक ऊँची मंजिलों, छतरी-ग्रटारियों द्वारा विभूषित भवन बने हुए हैं। जिन सबका निर्माण सुवर्ण गजमुक्तामणि, हीरे, पन्ने तथा ग्रनेक मुक्तामणियो द्वारा किया गया है। गणेश-लोक का प्रकाश चन्द्रमा की भांति सौम्य सुहावना होते हुए भी करोड़ों सूर्यों के प्रकाश को मन्द करने वाला है। यहाँ के भवनों में जो गणेश परिकर देव निवास

करते हैं, वे सर्वदा भगवान् गणेशजी की ही सेवा-पूजा में लगे रहते हैं। यह गणेशजी का 'स्वानन्द-धाम' अत्यन्त ही सुन्दर एवं रमणीक है। यह सर्वदा सर्व प्रकार की सुख सुविधाओं से परिपूर्ण है। यहाँ कभी भी किसी प्रकार की वस्तुओं का अभाव नहीं है। वहाँ निवास करने वालों को कोई इच्छा-तृष्णा शेष नहीं रहती है। यह 'गणेशधाम' अनेक प्रकार की सुख-समृद्धियों से अटूट परिपूर्ण भरा हुआ रहता है। यहां रहने वालों को जरा-मृत्यु आदि का कोई भय नहीं होता, किसी भी प्रकार की आधि-व्याधि, चिन्ता, शोक, दुःख आदि तथा किसी भी प्रकार को किसी से स्पर्धा, दुःख भी नहीं होते। वहां रहने वालों को शोक और दुःख की छाया भी नहीं है। वहां के सभी देवगणों का स्वरूप बालक स्वरूप गणेशजी के समान है। सबके वस्त्र कुसुंम तथा केशर के रंग के समान रंगवाले उत्तम रेशम के धागों से निर्मित एवं चमत्कृत होते हैं। उन पर सुवर्ण तथा रजत के तारों द्वारा विविध प्रकार के फूल, पत्ते तथा बेल निर्माण किये हुए होते हैं और वे लोग विविध प्रकार के सुवर्णकटक, हार, बाजूबन्द तथा करधनी एवं मुकट कुण्डलादि जिनमें विविध प्रकार के रत्न भी जड़े हुए होते हैं, ऐसे आभूषणों से विभूषित रहते हैं।

वहाँ निवास करने वाले देवगणों को सर्वदा नैवेद्य के रूप में छत्तीस प्रकार के उत्तम स्वादिष्ठ मेवा मिष्टान्न निर्मित दिन-रात में चार बार लड्डू भगवान् गणेशजी को प्रसाद रूप में भोग लगाया हुआ प्रसाद प्राप्त होता है तथा इस प्रसाद के साथ ही विविध प्रकार के उत्तम मीठे-खट्टे पेय एवं जम्बूफल (जामून), कैथफल, बेलफल, केला, अमरूद (जाम्बफल,) आम्रफल, बिजोरा निम्बू, मूली तथा नारियल (श्रीफल) भी भगवान् गणपति को पूजोपचारों में समर्पित किए हुए प्राप्त होते हैं। कितने देवगण भगवान् गणेशजी की विविध प्रकार की सेवाओं में संलग्न रहते हैं और कितने ही सामवेद के मन्त्रों तथा विविध प्रकार के गणपति सूक्त, ब्रह्मणस्पति सूक्त, बृहस्पति सूक्त, इन्द्र सूक्त, देव-पुरोहित सूक्त आदि के मन्त्रों एवं गणपति के विविध स्तोत्रों द्वारा स्तवन करते रहते हैं। कतिपय नृत्य-गायन विविध वाद्य पारंगत विद्वान् भगवान् गणेशजी के समक्ष नृत्य-गायन,वाद्य-वादन में निरत रहते है। भगवान् गणपति की वहाँ दिन-रात में सात बार विविध उपचारों द्वारा मन्त्रोच्चार पूर्वक सेवा-पूजा नीराजन स्तवन किए जाते हैं।

भगवान् गणेशजी का यह 'स्वानन्द धाम' सब प्रकार के सुखानन्द से परिपूर्ण है। किन्तु इसको प्राप्त करने के विषय में लिखा है—

न वेदैर्न न दानैश्च व्रतैर्यज्ञैर्जपैरपि।
तपोभिर्विविधैश्चायं प्राप्यते नैव कर्हिचित्॥
विनायकस्य कृपया प्राप्यते नित्य भक्तितः।
समष्टिव्यष्टिरूपोऽत्र सदा तिष्ठति विघ्नराट्॥

(गणेशपुराण. २।५०।३३-३४)

यह 'स्वानन्द धाम' (गणेश-लोक) वेदाध्ययन, दान, व्रत, यज्ञ, जप-तप से किसी भी स्थिति अथवा किसी भी प्रकार के प्रयत्नों द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इसकी प्राप्ति तो भगवान् गणेश की भक्ति के फलस्वरूप भगवान्

विनायकजी की कृपा (अनुग्रह) द्वारा ही हो सकती है। इस लोक में भगवान् विघ्नेश्वर समष्टि-व्यष्टि रूप से निवास करते हैं। भगवान् गणेशजी उस अपने लोक में किस भाँति से विराजमान होकर निवास करते हैं। इसके लिए लिखा है—

सहस्रपत्रसंयुक्ता तन्मध्ये पद्मिनी शुभा।
सहस्रपत्रं कमलं तस्यां भाति यथा शशी ।।
तत्कर्णिकागतस्तल्पो रत्नकाञ्चननिर्मितः।
दिव्याम्बरयुतः शेते नृप तत्र विनायकः ।।
सिद्धि बुद्धि सदा तस्य पादसंवाहनं मुदा।
कुर्वाते परया भक्त्या सामवेदस्त्रिमूर्तिमान् ।।
गानं करोति शास्त्राणि मूर्तिमन्ति स्तुवन्ति तम्।
पुराणानि च सर्वाणि वर्णयन्त्यस्य सद्गुणान्।
बालरूपधरस्तत्र शुण्डादण्डविराजितः।
कोमलाङ्गोऽरुणनिभो विशालाक्षो विषाणवान् ।।
मुकुटी कुण्डली राजत्कस्तूरीतिलकः स्वराट्।
दिव्यमाल्याम्बरधरो दिव्यगन्धानुलेपनः ।।
मुक्तामणिगणोपेतं सरलं दाम संदधत्।
अनन्तकोटिसूर्यौजाश्चन्द्रार्धकृतशेखरः ।।

(गणेशपुराण २।५०।५३-५९)

श्रीगणेशजी के उस स्वानन्दधाम में 'सहस्र पत्रों से युक्त पद्मिनी (कमलिनी) है। उसमें चन्द्रमा के समान कान्तिमान सहस्रदल वाला कमल सुशोभित है। उसकी-कर्णिका में रत्न-काञ्चन द्वारा निर्मित एक सुन्दर उत्तम मञ्च (पर्यङ्क) है। दिव्यवस्त्रों से युक्त विनायक (श्री गणेशजी) उस पर विराजते हैं अथवा शयन करते हैं। सिद्धि-बुद्धि अत्यन्त भक्ति-भाव पूर्वक सर्वदा उनके चरणों की सेवा में तत्पर रहती हैं। मूर्तिमान तीन स्वरूप धारण किए हुए सामवेद उनका गान करता है। शास्त्र भी मूर्तिमान् होकर उनकी स्तुति करते हैं। समस्त पुराण उनके सद्गुणों का बखान करते हैं। वहाँ शुण्ड-दण्ड से शोभायमान हुए बालरूप धारण किए हुए श्रीगणेशजी विराजमान हैं। उनका अंग कोमल एवं अरुणवर्ण का है। उनके बड़े बड़े नेत्र और एक दाँत है। वे मुकट एवं कु० ल तथा कस्तूरी के तिलक से शोभायमान हैं। उनकी माला दिव्य है तथा उनका अम्बर-परिधान दिव्य चमत्कृत है और उनके अंगों में दिव्य गंध का लेप हो रहा है। वे मुक्ता-मणिगणों से युक्त रत्नमण्डित मुन्दर कलापूर्ण सुवर्णहार पहने हुए हैं। वे अनन्त कोटि सूर्यों के समान तेजस्वी हैं। वे मस्तक पर अर्धचन्द्र का मुकट धारण किए हैं।

इस प्रकार सर्व सौन्दर्यगुणों के अमित भण्डार श्रीगणेशजी का स्मरण चिन्तन परमानन्द मंगल प्रदान करने वाला है। वे समस्त सुख समृद्धि वैभव प्रदान करने वाले हैं। उनके सब ही रूप-स्वरूप, अंग-प्रत्यंग, आभरण, भूषण, परिधान, परिवार, प्रतिहार, पार्षद, वाहन, ध्वजा, छत्र तथा उनका लोक निवास-स्थान

मन्दिर-भवन आदि सब ही उत्तम सुन्दर एवं दिव्य हैं। उनके द्वारा सब ही प्रकार के परमानन्द की प्राप्ति होती है। वे संसार की यात्रा करने वालों के सब प्रकार के दुःख-कष्ट दूर करते हैं। उनके स्मरण चिन्तन से सुख, शान्ति, समृद्धि तथा आत्मतृप्ति प्राप्त होती है। उनके श्री चरणों की सेवा, ध्यान, स्मरण, चिन्तन, स्तवन तथा विविध पूजोपचारों द्वारा अर्चना-पूजा करने वालों के इहलोक तथा परलोक दोनों ही सफल हो जाते हैं। वे विघ्नों के समूह तथा पापों के पहाड़ों, दुःखों के भण्डारों को सर्वदा के लिए जड़ से नष्ट कर देते हैं और अपनी कृपा-भक्ति प्रदान कर सर्वानन्द प्रदान कर देते हैं।

वन्दे वन्दारुमन्दारमिन्दुभूषणनन्दनम्।
अमन्दानन्दसंदोहबन्धुरं सिन्धुराननम्॥

'जो वन्दना करनेवाले भक्त-जनों के लिए मन्दार (कल्पवृक्ष) के समान इच्छा पूरक हैं, चन्द्रभूषण भगवान् शिव को आनन्दित करने वाले पुत्र हैं और अमन्दानन्द राशि से मनोहर प्रतीत होते हैं, उन सिन्धुर-वदन (गजानन) की मैं स्तुति करता हूँ।'

卐

सोपान ७

भगवान् गणेश तत्त्व-विवेचन

प्रधानस्वरूपं महत्तत्त्वरूपं धरावारिरूपं दिगीशादिरूपम्।
असत्सत्स्वरूपं जगद्धेतुभूतं सदाविश्वरूपं गणेशं नताः स्मः॥
(गणेशपुराण, उपा. १३।१२)

'भगवान् गणपति प्रकृति स्वरूप हैं, महत्तत्त्वरूप हैं, पृथ्वी और जल के रूप में अभिव्यक्त हैं, दिगीशादि रूप में प्रकट हैं, असत् और सत् दोनों ही उनके स्वरूप हैं, वे जगत् के कारण हैं। उनको हम सब नमस्कार करते हैं।'

ॐ नि षु सीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम्।
न ऋते त्वत्क्रियते किं चनारे महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च॥
(ऋग्वेद १०।९०।११२)

'हे गणपते! आप अपने गणों सहित पधारकर उत्तम प्रकार से यहां विराजमान होवें, क्यों कि सब देवता और ऋषियों का कथन है कि आप लेखकों विद्वानों कवियों में सर्वोपरि मेधावी हैं। आपके नहीं होने से बाहर-भीतर, दूर-समीप कोई भी कर्म (कार्य) नहीं किये जा सकते हैं। हे ऋद्धि-सिद्धि तथा बुद्धि

के सर्वोपरि रस वर्षाने वाले सम्राट ! आप अपने इस महान् अर्चनीय एवं विचित्र-ज्ञान प्रकाश को मेरी बुद्धि में प्रकट करने का अनुग्रह कीजिए ।'

गणपत्युपनिषत् (गणेशाथर्वशीर्ष) में भगवान् गणेशजी की स्तुति, प्रार्थना, स्वरूप-तत्त्व, गणेश जी के मन्त्र और उनकी गायत्री, उनका ध्यान, नमस्कार, पाठ-पूजन और जपका माहात्म्य एवं फल लिखे हैं—उसमें तात्त्विक विषय में भी वर्णन प्राप्त होता है—

गणेशजी की स्तुति-प्रार्थना

ॐ नमस्ते गणपतये । त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि । त्वमेव केवलं कर्तासि । त्वमेव केवलं धर्तासि । त्वमेव केवलं हर्तासि । त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि । त्वं साक्षादात्मासि नित्यम् ।।१।। ऋतं वच्मि । सत्यं वच्मि ।।२।। अवत्वं माम् । अववक्तारम् । अव श्रोतारम् । अव दातारम् अव धातारम् । अवानूचानमव शिष्यम् । अव पश्चात्तात् । अव पुरस्तात् । अव चोत्तरातात् । अव दक्षिणात्तात् । अव चोर्ध्वात्तात् । अवाधरात्तात् । सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात् ।।३।।

'ॐ भगवान् गणपति को नमस्कार है । आप ही प्रत्यक्ष तत्त्व हो । आप ही केवल कर्ता हो । आप ही केवल धर्ता हो । आप ही केवल हर्ता हो । यह निश्चय है आप ही इन सब रूपों में विराजमान ब्रह्म हो । आप साक्षात् नित्य आत्म स्वरूप हो । मैं ऋत-यह बात न्याय पूर्वक निवेदन करता हूँ । सत्य कहता हूँ । आप मुझ शिष्य की रक्षा करें । आचार्य की रक्षा करें । श्रोता की रक्षा करें । दाता की रक्षा करें धाता की रक्षा करें । व्याख्या करने वाले आचार्य की रक्षा करें । शिष्य की रक्षा करें । पश्चिम से रक्षा करें । पूर्व से रक्षा करें । उत्तर से रक्षा करें । दक्षिण से रक्षा करें । ऊपर से रक्षा करें । नीचे से रक्षा करें । आप सब ओर से मेरी रक्षा करें । चारों ओर से मेरी रक्षा करें ।

गणेश-स्वरूप-तत्त्व

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः । त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः । त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि । त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्व ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि।।४। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति । सत्रं जगदिदं त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारि वाक्यपदानि ।।५।। त्व गुणत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं मूलाधार स्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भू र्भुवः स्वरोम् ।।६।।

'आप वाङ्मय हो, आप चिन्मय हो, आप आनन्दमय हो, आप ब्रह्ममय हो, आप सच्चिदानन्द अद्वितीय हो । आप प्रत्यक्ष ब्रह्म हो । आप ज्ञानमय, विज्ञानमय

हो। यह समस्त जगत् आपमें उत्पन्न होता है। यह समस्त जगत् आपमें लय को प्राप्त होगा। इस समस्त जगत् की आपमें प्रतीति हो रही है। आप भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश हो। परा, पश्यन्ती, वैखरी और मध्यमा—वाणी के ये चार विभाग आपही हो। आप सत्त्व, रज, तम—तीनोंगुणों से परे हो। आप भूत, भविष्य, और वर्तमान तीनों कालों से परे हो। आप मूलाधार चक्र में नित्य स्थित रहते हो। इच्छा, क्रिया और ज्ञान—तीन प्रकार की शक्तियां आप ही हो। आपका योगीजन नित्य ध्यान करते हैं। आप ब्रह्मा हो, आप विष्णु हो, आप रुद्र हो, आप इन्द्र हो, आप अग्नि हो, आप वायु हो, आप सूर्य हो, आप चन्द्रमा हो, आप ब्रह्म हो। भूः, भुवः स्वः—ये तीनों लोक तथा ॐ कार वाच्य परब्रह्म भी आप ही हो।'

गणेश-मंत्र और गायत्री

गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दु लसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। ग कार पूर्वरूपम्। अकारो मध्यरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्। बिंदुरुत्तररूपम्। नादः संधानम्। संहिता संधिः। सैषा गणेशविद्या। गणक ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः। श्री महागणपतिर्देवता। ॐ गम् गणपतये नमः।।७।।

एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।।८।

'गण के आदि अर्थात् ग् का पहले उच्चारण करके बाद वर्णों के आदि अर्थात् अ का उच्चारण करें, उसके पश्चात् अनुस्वार उच्चारित होता है। इस प्रकार अर्धचन्द्र से सुशोभित 'गं' ॐकार से अवरुद्ध होने पर आपके बीज मन्त्र का स्वरूप (ॐ गं) है। गकार इसका पूर्वरूप है, अकार मध्यम रूप है, अनुस्वार अन्त्यरूप है, बिन्दु उत्तर रूप है। नाद संधान है। संहिता संधि है। ऐसी यह गणेश विद्या है। इस महामन्त्र के गणक ऋषि हैं, निचृद् गायत्री छन्द है, श्रीमहागणपति देवता हैं। यह महामन्त्र है—ॐ गं गणपतये नमः। एकदन्त को हम जानते हैं। वक्रतुण्डका हम ध्यान करते हैं, वह दन्ती (गजानन) हमें प्रेरणा प्रदान करें। (यह गणेश-गायत्री है)

गणेशजी का ध्यान

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशाङ्कुशधारिणम्।
अभयं वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्।।
रक्तं लम्बोदरं शूपकर्णकं रक्तवाससम्।
रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्।।
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।
आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्।।
एवं ध्यायति यो नित्य स योगिनां वरः।।९।।

'एकदन्त, चतुर्भुज, चारों हाथों में पाश, अङ्कुश, अभय और वरदान की मुद्रा धारण किए तथा मूषक-चिह्न की ध्वजा लिए हुए, रक्तवर्ण, लम्बे उदरवाले, शूप जैसे बड़े-बड़े कानों वाले, रक्त वस्त्रधारी शरीर पर रक्तचन्दन का लेप किए

हुए, रक्त पुष्पों से भली-भांति पूजित, भक्तों के ऊपर अनुकम्पा करने वाले देवता, जगत् के कारण, अच्युत, सृष्टि के आदि में आविर्भूत, प्रकृति और पुरुष से परे श्री गणेशजी का जो नित्य ध्यान करता है, वह योगी सब योगियों में श्रेष्ठ है।'

गणपति-नमस्कार

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्नविनाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमो नमः ।।१०।।

'व्रात (देवसमूह) के नायक को नमस्कार, गणपति को नमस्कार। प्रमथपति (शिव के गणों के अधिपति) को नमस्कार, लम्बोदर को, एकदन्तको, विघ्नविनाशक को, शिवजी के पुत्र को तथा श्रीवरदमूर्ति को नमस्कार है।'

भगवान् गणपति का पूजन-स्तोत्र पाठ तथा मंत्र जप करने का माहात्म्य फल

एतदथर्वशिरो योऽधीते स ब्रह्मभूयाय कल्पते। स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते। स सर्वतः सुखमेधते। स पञ्चमहापातकोपपातकात् प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। धर्मार्थकाममोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्। यो यदि मोहाद् दास्यति स पापीयान् भवति। सहस्रावर्तनाथं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत् ।।११।।

अनेन गणपतिमभिसिञ्चति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनशनं जपति स विद्यावान्भवति। इत्यथर्वणवाक्यम्। ब्रह्माद्याचरणं विद्यात्। न बिभेति कदाचनेति ।।१२।।

यो दुर्वाङ्कुरैर्यजति स वैश्रवणोपमोभवति। योलाजैर्यजति स यशोवान्भवति। समेधावान्भवति। यो मोदकसहस्रेण यजति स वाञ्छितफलमवाप्नोति। यः साज्यसमिद्‌भिर्यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते ।।१३।।

अष्ट ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासंनिधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात् प्रमुच्यते। स सर्वविद् भवति। य एवं वेदेत्युपनिषत् ।।१४।।

'अथर्वशिरस् (अथर्ववेद का उपनिषद्) है।'

'जो इसका पाठ करता है, वह ब्रह्मत्व को प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। सब प्रकार के विघ्न उसको बाधा नहीं पहुँचा सकते। वह सब स्थानों में सुख प्राप्त करता है। वह पाँचों प्रकार के महान् पातकों तथा उपपातकों से मुक्त हो जाता है। सायंकाल पाठ करने वाला दिन के पापों का नाश करता है। प्रातः पाठ करने वाला रात्रि के पापों का नाश करता है। जो प्रातः-सायं दोनों समय इसका पाठ करता है, वह निष्पाप हो जाता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करता है। इस अथर्वशीर्ष को, जो शिष्य न हो, उसे नहीं देना चाहिए। जो मोहके कारण देता है, वह पातकी हो जाता है। सहस्रबार पाठ करने से

जिन-जिन कामनाओं का उच्चारण करता है, उन-उन की सिद्धि इसके द्वारा ही वह मनुष्य प्राप्त कर सकता है। इसके द्वारा जो गणपति को स्नान कराता है, वह वक्ता बन जाता है। जो चतुर्थी तिथि को उपवास करके जपता है, वह विद्यावान् (विद्वान्) हो जाता है। यह अथर्वण का वाक्य है। जो इस मन्त्र के द्वारा तपश्चरण करना जानता है, वह कभी भी भय को प्राप्त नहीं होता है। जो दूर्वाङ्कुरों के द्वारा भगवान् गणपति का यजन करता है, वह कुबेर के समान हो जाता है। जो लाजों (चावलों की खिल्ली) द्वारा यजन करता है, वह यशस्वी होता है, वह मेधावी होता है। जो सहस्र लड्डुओं (मोदकों) के द्वारा यजन करता है, वह वाञ्छित फल को प्राप्त करता है। जो घृत के सहित समिधा से यजन करता है, वह सब कुछ प्राप्त करता है। वह सब कुछ प्राप्त करता है। आठ ब्राह्मणों को सम्यक प्रकार (पूरे प्रकार) से ग्रहण कराने पर सूर्य के समान तेजस्वी होता है। सूर्य ग्रहण के समय महानदी में अथवा प्रतिमा (श्रीगणेशजी की मूर्ति) के समीप जपने से मन्त्र सिद्धि होती है। वह महाविघ्न से मुक्त हो जाता है। महापातक से मुक्त हो जाता है, महान् दोष से मुक्त हो जाता है, जो इस प्रकार से जानता है, वह सर्वज्ञ हो जाता है, वह सर्वज्ञ हो जाता है।'

गणेशोत्तरतापिनी उपनिषद् ग्रन्थ में लिखा है—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्मेदं सर्वम्। तस्योपव्याख्यानम्। सर्वभूतम्भ भविष्यदिति सर्वमोंकार एव। एतच्चान्यच्च त्रिकालातीतं तदप्योंकार एव। सर्वं ह्येतद्गणेशोऽयमात्मा ब्रह्मेति। (गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् १)

ॐ यह एकाक्षर रूप ब्रह्म है ही। इसी की व्याख्या में कहा जाता है—भूत, भविष्य, वर्तमान यह सभी ओंकार रूप हैं। यह त्रिकाल स्वरूप और त्रिकालातीत सब ओंकार ही है। वही ओंकार रूप ब्रह्म यह गणेश है।'

ॐ तद्गणेशः। ॐ सद्गणेशः। ॐ परं गणेशः। ॐ ब्रह्म गणेशः।
(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् २।१)

'वही तत्-गणेश है, वही सत्-गणेश है, वही पर-गणेश है, वही ब्रह्म गणेश है।'

स निर्गुणः स निरहंकारः स निर्विकल्पः स निरीहः स निराकार आनन्दरूपस्तेजो रूपमनिर्वाच्यमप्रमेयः पुरातनो गणेशः निगद्यते।
(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् २)

'उसका न कोई रूप है, न नाम है और न गुण है। वही गणेश ब्रह्म है। वह निर्गुण, निरहंकार, निर्विकल्प, निरीह, निराकार, आनन्दरूप, तेजोरूप, अनिर्वचनीय और अप्रमेय कलातीत गणेश है।'

भगवान् गणपति निर्गुण-सगुण ब्रह्म हैं। गणपति अथवा गणेश नाम में जो गण शब्द प्रयोग होता है; इस 'गण' शब्द में 'ग' का मतलब (तात्पर्य) दृश्यादृश्य जगत् में रहने वाला 'ब्रह्म' और 'ण' का मतलब (तात्पर्य) है-मन-वाणी से रहित और संयोग एवं अयोग में रहने वाला। इस प्रकार से 'गकार' और 'णकार' रूप से भगवान् गणेश को निर्गुण-सगुण ब्रह्म कहा गया है।

अप्राप्यमप्राप्यं च अज्ञेयं चाज्ञेयं च। विकल्पसहिष्णु तच्छक्तिकं गजवक्त्रं गजाकारं जगदेवावरुन्धे।

(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् ३)

जिसको मन से नहीं जाना जा सके, जो अज्ञेय है, जिसको वाणी के द्वारा दूसरे को नहीं बतलाया जा सके और निर्गुण होने से विकल्प शून्य है, वह निरुपाधिक माया से युक्त है। उनका गजाकार स्थूल और गजवक्त्र महान् शक्ति का द्योतक है, जिसने जगत् को धारण कर रखा है।'

वह भगवान् गणपति इस सृष्टि में सर्वत्र ब्रह्मरूप में विद्यमान् हैं।

आनन्दो भवति स नित्यो भवति स शुद्धो भवति स मुक्तो भवति स स्वप्रकाशो भवति स ईश्वरो भवति स मुख्यो भवति स वैश्वानरो भवति स तैजसो भवति स प्राज्ञो भवति स साक्षी भवति स एव भवति स सर्वो भवतीति। (गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् ५)

'वही सद्रूप गणेश आनन्द रूप है, नित्य है, शुद्ध है, मुक्त है, स्वयं प्रकाश है, ईश्वर है, और प्रमुख है। वही वैश्वानर और तैजस तथा प्राज्ञ है। वही सर्वसाक्षी है, वह वही है, वही सब है, वह सब कुछ है।'

भगवान् गणेशजी के वाचस्पति, बृहस्पति, ब्रह्मणस्पति, अग्निरूप, देवपुरोहित नाम भी प्रयुक्त होते हैं। और इन नामों के वेदों में मन्त्र भी प्राप्त होते हैं तथा उन मन्त्रों का गणपति की अर्चना वन्दनादि अनेक अनुष्ठानों में विद्वानों द्वारा प्रयोग भी किया जाता है—

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपश्रवस्तमम्।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम्॥

(ऋग्वेद २।२३।१)

हे अपने गणों में गणपति (देव)! क्रान्तदर्शियों में (विद्वान, कवियों, लेखकों में) श्रेष्ठ कवि, उत्तम लेखक, ज्येष्ठराज (शिव-शिवा के पुत्र अथवा बड़े देवों में भी बड़े), मन्त्रों के स्वामी, ब्रह्मणस्पति, सर्वाधिक भोग एवं सुख आदि के प्रदान करने वाले, हम आपको इस उत्तम कर्म (यज्ञकर्म) में पधारने हेतु प्रार्थना करते हैं। आप हमारी स्तुतियों को स्वीकार करें और इस सदन (यज्ञस्थल) में पधार कर रक्षार्थ विराजमान होवें।*

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन्।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत्तमांसि॥

(ऋग्वेद ४।५०।४)

'बृहती वाक् अथवा संसार के स्वामी बृहस्पति परमव्योमरूप महाशक्ति के तेज से सर्वप्रथम उत्पन्न होकर सात छन्दरूप मुखवाले और सात किरणों अथवा सात वर्ण—वर्गवाले गणपति विविध रूप धारण करके नाद द्वारा अन्धकार अथवा अज्ञान को दूर करते हैं।'

---

* 'ब्रह्मन्' का अर्थ वाणी अथवा ब्रह्मज्ञानी भी होता हैं। ब्रह्मणस्पति का अर्थ वाक्पति, वाणीपति, वाचस्पति तथा मन्त्रों का स्वामी भी होता है।

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरुर्न द्वयाविनः ।
विश्वाइदस्माद् ध्वरसो विबाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते ।।
(ऋग्वेद २।२३।५)

'हे सर्वोत्तम रक्षा करने वाले ब्रह्मणस्पति ! आप जिसके रक्षक होते हैं, उसको कोई किसी भी प्रकार से दुःख कष्ट नहीं पहुँचा सकता है । पाप भी उसको कोई पीडा नहीं दे सकते हैं, शत्रु भी उस को नहीं मार सकते हैं, कोई भी दुष्ट उसको नहीं सता सकते हैं । उसको किसी भी प्रकार से हानि पहुँचाने वाले समस्त हानिकारकों को आप दूर भगा देते हैं ।'

गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे
प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे
निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे
वसो मम । आहमजानिगर्भधमा
त्वमजासि गर्भधम् ।।
(शुक्लयजुर्वेद २३।१९)

'हे सर्वव्यापी भगवान् गणेशजी ! हम आप को समस्त गणों का पति मानते हैं, आप पधारिए । हम आपको प्रिय पदार्थों तथा सभी स्थावर-जङ्गम प्राणियों का पालन-पोषण करने वाला मानते हैं, आप आइए । हम आपको समस्त सुख प्रदान करने वाली निधियों का निधिपति मानते हैं, आप हमारे पास पधारने का अनुग्रह कीजिए । और आप हमें भी पूजारूप गर्भ का पालन-पोषण करने योग्य बनाने का अनुग्रह कीजिए ।'

वेद, उपनिषदों की भांति पुराण धर्म-शास्त्रों में भी देवी-देवताओं के तात्त्विक वर्णन प्राप्त होते हैं । गणेश पुराण में एक कथा आती है—

कदाचित् सु मुहूर्ते तु पिता वाचक्नविः सुतम् ।
गणानां त्वेति ऋङ्मंत्रं महान्तमुपदिष्टवान् ।।
उवाच च महामन्त्रो वैदिकोऽखिलसिद्धिदः :
आगमोक्तेषु मन्त्रेषु तन्त्रेषु श्रेष्ठ एव च ।
ध्यात्वा गजाननं देवं जपैनं स्थिरमानसः ।
परा सिद्धिं समाप्यैव ख्यातिं लोके गमिष्यसि ।।
ततो गृत्समदो विप्रो मन्त्रं प्राप्य पितुर्मुखात् ।
अनुष्ठानरतो भूत्वा जपध्यानपदोऽभवत् ।।
(गणेशपुराण उपा. ३६।१८-२२)

किसी समय शुभ मुहूर्त में वाचक्नवि ऋषि ने अपने पुत्र (गृत्समद) को 'गणानां त्वा' इत्यादि ऋग्वेद के मन्त्र का उपदेश देकर कहा—यह गणपति का वैदिक महामन्त्र है और तन्त्रोक्त समस्त मन्त्रों में श्रेष्ठ मन्त्र है तथा सर्व प्रकार की सिद्धियां प्रदान करने वाला है । तुम एकाग्रचित्त से भगवान् गणेशजी का ध्यान करके इसी मन्त्र का जप करो । इससे ही मोक्षरूपी परमसिद्धि को सरलता पूर्वक प्राप्त कर लेगा और विश्वविख्यात हो जाएगा । इसके पश्चात् गृत्समद ब्राह्मण

अपने पिता के मुख से यह मन्त्रोपदेशप्राप्त करके इस सद्नुष्ठान में निरत हो गये ।' और परम सिद्धि प्राप्त की ।

विश्व निर्माता ब्रह्मा की आज्ञा से पृथ्वी, देवता और ऋषि-मुनियों ने विनायक की स्तुति में निवेदन किया—

निराकृते नित्य निरस्तमाय
परात्पर ब्रह्ममयस्वरूप ।
क्षराक्षरातीत गुणैर्विहीन
दीनानुकम्पिन् भगवन्नमस्ते ।।
निरामयायाखिल —कामपूर
निरञ्जनायाखिल दैत्यदारिन्।
नित्याय सत्याय परोपकारिन्
समाय सर्वत्र नमो नमस्ते ।।

(गणेशपुराण २।६।१२-१३)

'आप निराकार एवं परात्पर ब्रह्मस्वरूप, क्षर अक्षर से, प्रतीत, सत्वगुणादि से रहित एवं दीनों पर दया करने वाले हैं, आपको बार-बार नमस्कार हैं । आप निरामय सम्पूर्ण कामनाओं से पूर्ण, निरञ्जन, समस्त दैत्यों का दलन करने वाले, नित्य, सत्य, परोपकारी और सर्वत्र समरूप से निवास करते हैं, आपको हम बार-बार नमस्कार करते हैं ।' इसी प्रकार से विनायकलीला में काशीनरेश ने विनायक की स्तुति में कहा—

त्वमेव ब्रह्मा विष्णुश्च महेशो भानुरेव च ।
त्वमेव पृथिवी वायुरन्तरिक्षं दिशो द्रुमा : ।।
पर्वतैः सहिता: सिद्धा गन्धर्वा यक्षराक्षसा: ।
मुनया मानवाश्चापि स्थावरं जङ्गमं जगत् ।।
त्वमेव सर्वं देवेश सचेतनमचेतनम् ।
जन्मान्तरीयपुण्येन दृष्टोऽसि कश्यपात्मज ।।

(गणेशपुराण ३।५५।३१-३४)

'हे देवेश ! हे विनायक !! आप ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सूर्य हैं । आप ही पृथ्वी, वायु, आकाश, दिशाएँ तथा पर्वतों सहित वृक्ष हैं । सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, मुनि, मनुष्य तथा समस्त स्थावर जङ्गम जगत् भी आप ही हैं । समस्त जड़चेतन-समुदाय आपका ही स्वरूप है । जन्मान्तर के पुण्य से ही मुझे आपके दर्शन हुए हैं ।' इसी भाँति चन्द्रदेव ने गणपति की स्तुति में निवेदन किया—

कृपानिधे ब्रह्ममयाय देव
विश्वात्मने विश्वविधानदक्ष ।
विश्वस्य बीजाय जगन्मयाय
त्रैलोक्य संहारकृते नमस्ते ।।

(गणेशपुराण १।६१।४२)

'हे कृपानिधे ! हे देव !! आप विश्व का निर्माण करने में दक्ष हैं, आप

7563

विश्वमय तथा ब्रह्ममय ही हैं। आप ही इस विश्व के बीज रूप हैं, यह विश्व आपका ही स्वरूप है। तीनों लोकों का संहार करने वाले भी आप ही हैं, आपको नमस्कार है।'

गणेशपुराण के उपासना विषय में गणेशजी का अध्यात्मक स्वरूप वर्णन करते हुए बतालाया गया है—

अजं निर्विकल्पं निराकारमेकं
निरानन्दमद्वैतमानन्द पूर्णम् ।
परं निर्गुणं निर्विशेषं निरीहं
परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम ।।

(गणेशपुराण उपा. १३।३)

'भगवान् गणेशजी आध्यात्मिक रूप में अजन्मा (अनादि) हैं, वे निराकार, निर्विकल्प, आनन्द रहित, अद्वितीय तथा पूर्णानन्द हैं। वे निर्गुण, निर्विशेष, विरक्त, अनन्त (पर ब्रह्म स्वरूप) हैं। मैं उनका भजन करता हूँ।' गणेशपुराण में गणपति का नामकरण संस्कार करते समय विश्व विधाता ब्रह्माजी ने गणेश को कहा—

त्वन्नाम बीजं प्रथमं.........ओंकाररूपं श्रुतिमूलभूतम् ।
यतो गणानां त्वमसीह ईशो गणेश इत्येव तवास्तु नाम ।।

(गणेशपुराण)

'प्रथम बीज रूप में आपके नाम में वेदों का जड़भूत ओंकार रूप है, और आप गणों के स्वामी (ईश्वर) हैं, अतएव आपका नाम गणेश होगा।' इसी प्रकार से मुद्गलपुराण में देवर्षियों ने भी भगवान् गणपति की स्तुति करते हुए कहा—

अमेयरूपं हृदि संस्थितं तं ब्रह्माहमेकं भ्रमनाशकारम् ।
अनादिमध्यान्तमपररूपं गजाननं भक्तियुतं भजामः ।।
जगत्प्रमाणं जगदीशमेवमगम्यामाद्यं जगदादिहीनम् ।
अनात्मनां मोहप्रदं पुराणं गजाननं भक्तियुत भजामः ।।

(मुद्गलपुराण)

'जिनका स्वरूप अमेय है, जो हृदय में विराजमान हैं, 'मैं एक मात्र अद्वितीय ब्रह्म हूँ,—यह बोध जिनका स्वरूप है, जो भ्रम का नाश करने वाले हैं, जिनका आदि मध्य और अन्त नहीं है तथा जो अपार रूप हैं, उन गजानन का हम भक्ति भाव से भजन करते हैं। जिनका स्वरूप जगत् को मापने वाला अर्थात् विश्वव्यापी है, इस प्रकार जो जगदीश्वर अगम्य सबके आदि तथा जगत् आदि से हीन हैं, तथा जो अनात्मा (अज्ञानी) पुरुषों को मोह में डालने वाले हैं, उन पुराण पुरुष गजानन का हम भक्ति भाव से भजन करते हैं।' मुद्गलपुराणान्तर्गत भक्त मनोरथ सिद्ध प्रद गणेश स्तोत्र में लिखा है—

जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः ।
तयोर्योगे गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः ।।

(मुद्गलपुराण भक्त मनोरथ सिद्धप्रद स्तोत्र ४)

'गकार जगत्स्वरूप है और णकार ब्रह्म का वाचक है। उन दोनों के योग में विद्यमान आप गणेश देवता को बारंबार नमस्कार है।' श्रीमद्भागवत में श्री शुकदेवजी महाराज का कथन है—

'ब्रह्मवर्चसकामस्तु यजेत ब्रह्मणस्पतिम्।'

(श्रीमद्भागवत २।३।२)

'ब्रह्मतेज प्राप्त करने की कामना वाले उपासकों को ब्रह्मणस्पति की उपासना करनी चाहिये।' यह ब्रह्मणस्पति ही वेदपति, बृहस्पति, गणपति हैं।

इस विश्वप्रपञ्च में किसी भी जड़-चेतन वस्तु का प्रादुर्भाव अथवा लय का कारण पञ्चतत्त्व ही हैं। सनातन धर्म में इन पञ्चतत्त्वों के पाँच देवता माने गए हैं—

आकाश स्याधिपो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी।
वायोः सूर्यः क्षितेरीशो जीवनस्य गणाधिपः॥

'पृथ्वी तत्त्व के देवता शिव, जल तत्त्व के देवता गणेश, अग्नितत्त्व की देवी महेश्वरी, वायु तत्त्व के देवता सूर्य, और आकाश तत्त्व के देवता विष्णु हैं।'

सनातन धर्म में इन पाँचों देवताओं की उपासना का विधान है—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्॥

'सभी कार्यों की सिद्धि के लिए सूर्य, गणेश, देवी, शिव तथा विष्णु की पूजा करनी चाहिए।'

भगवान् गणेशजी ने भक्त वरेण्य को अपने स्वरूप का परिचय देते हुए कहा है—

शिवे विष्णौ च शक्तौ च सूर्ये मयि नराधिप।
या भेदबुद्धिर्योगः स सम्यग्योगो मतो मम॥
अहमेव जगद्यस्मात् सृजामि पालयामि च।
कृत्वा नानाविधं वेषं संहरामि स्वलीलया॥
अहमेव महाविष्णुरहमेव सदाशिवः।
अहमेव महाशक्तिरहमेवार्यमा प्रिय॥
अहमेको नृणां नाथे जातः पञ्चविधः पुरा।
अज्ञानान्मां न जानन्ति जगत्कारणकारणम्॥
मत्तोऽग्निरापो धरणी मत्त आकाशमारुतौ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च लोकपाला दिशोदश॥
वसवो मनवो गावो मनवः पशवोऽपि च।
सरितः सागरा यक्षा वृक्षाः पक्षिगणा अपि॥
तथैकविंशतिः स्वर्गा नागाः सप्त बनानि च।
मनुष्याःपर्वताः साध्याः सिद्धा रक्षोगणास्तथा॥
अहं साक्षी जगच्चक्षुरलिप्तः सर्वकर्मभिः।
अविकारोऽप्रमेयोऽहमव्यक्तो विश्वगोऽव्ययः॥

अहमेव परं ब्रह्माव्ययानन्दात्मकं नृप।
मोहयत्यखिलान् माया श्रेष्ठान् मम नरानमून्॥
(गणेशपुराण गणेशगीता १।२१-२९)

भगवान् गणेशजी ने भक्त वरेण्य को कहा—

'नरेश्वर वरेण्य ! श्री शिव, विष्णु, शक्ति, सूर्य और मुझ गणेश में जो अभेद बुद्धि रूप योग है, उसी को मैं सम्यक् योग मानता हूँ, क्योंकि मैं ही नाना प्रकार के वेष धारण करके अपनी लीला से जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करता हूँ। प्रिय नरेश मैं ही महाविष्णु हूँ, मैं ही सदाशिव हूँ, मैं ही महाशक्ति हूँ और मैं ही सूर्य हूँ। मैं अकेला ही समस्त प्राणियों का स्वामी हूँ और पूर्व काल में पाँच रूप धारण करके प्रकट हुआ था। मैं ही जगत् के कारणों का भी कारण हूँ, किन्तु लोग अज्ञानवश मुझे इस रूप में नहीं जानते। मुझसे अग्नि, जल, पृथ्वी, आकाश, वायु, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, लोकपाल, दसों दिशाएँ, वसु, मनु, मनुपुत्र, गौ, पशु, नदियाँ, समुद्र, यक्ष, वृक्ष, पक्षीगण, इक्कीस स्वर्ग, नाग, सात वन, मनुष्य, पर्वत, साध्यगण, सिद्धगण तथा राक्षसगण उत्पन्न हुए है। मैं ही सबका साथी जगच्चक्षु (सूर्य) हूँ। मैं सम्पूर्ण कर्मों से कभी लिप्त नहीं होता। मैं निर्विकार, अप्रमेय, अव्यक्त, विश्वव्यापी और अविनाशी हूँ। नरेश्वर ! मैं ही अव्यय एवं आनन्दस्वरूप पर ब्रह्म हूँ। मेरी माया उन सम्पूर्ण श्रेष्ठ मानवों को भी मोह में डाल देती है।' इसी भाँति गणेशजी ने फिर और भी कहा—

अजोऽव्ययोऽहं भूतात्मानादीश्वर एव च।
आस्थाय त्रिगुणां मायां भवामि बहुयोनिषु॥
अधर्मोपचयो धर्मापचयो हि यदा भवेत्।
साधन् संरक्षितुं दुष्टांस्ताडितुं सम्भवाम्यहम्॥
उच्छिद्याधर्मनिचयं धर्मं संस्थापयामि च।
हन्मि दुष्टांश्च दैत्यांश्च नानालीलाकरो मुदा॥
(गणेशपुराण ३।९-११)

'मैं ही अजन्मा, अविनाशी, सर्वभूतात्मा, अनादि ईश्वर हूँ और मैं ही त्रिगुणमयी माया का आश्रय लेकर अनेक योनियों में प्रकट होता हूँ। जब अधर्म की वृद्धि होती है और धर्म का ह्रास होता है, तब साधुजनों की रक्षा और दुष्टों का वध करने के लिए मैं अवतार लेता हूँ। अधर्म-राशि का नाश करकर धर्म की स्थापना करता हूँ। दुष्ट दैत्यों को मारता हूँ। और सानन्द नाना प्रकार की लीलाएँ करता हूँ।' गणेशस्तव में लिखा है—

यं सदा मुनयो देवाः स्मरन्तीन्द्रादयोहृदि।
यं पूजयन्ति सततं ब्रह्मेशानेन्द्रविष्णवः॥

'बड़े-बड़े नारदादि ऋषि, इन्द्रादिदेव अपने हृदय में जिनका ध्यान करते हैं, इसीलिए जो सत्र ही देवताओं के देवता और ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के भी पूज्य है।'

यदाज्ञया सृष्टिकरो विधाता
यदाज्ञया पालक एव विष्णुः।

यदाज्ञया संहरको हरोऽपि
ओंकाररूपी स गणेश ईरितः ।।

'जिनकी आज्ञा से ब्रह्मा सृष्टि-रचना करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और महादेव संहार करते हैं, इन तीनों देवताओं की उत्पति श्री गणेश स्वरूप प्रणव के अ, उ म्- इन ती अक्षरों से हुई है।'

अकारो वासुदेवः स्यादुकारो विधिरुच्यते ।
मकारस्तु महादेवः प्रणवाय नमोऽस्तु ते ।।

' 'अ' सत्वगुण प्रधान विष्णु, 'उ' रजोगुण प्रधान ब्रह्मा और 'म' तमोगुण प्रधान महादेव—ये तीनों देवता जिससे प्रकट हुए हैं, वह प्रणव सभी देवताओं तथा वेदों से भी सनातन है। उस प्रणव रूप आप (गणेश) को प्रणाम है।'

यतश्चाविरासीज्जगत्सर्वमेत-
त्तथाब्जासना विश्वगो विश्वगोप्ता ।
तथेन्द्रादयो देवसंघा मनुष्याः
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ।।
(गणेशपुराण उपा० खण्ड गणेशाष्टक श्लोक)

'यह समस्त जगत् ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र आदि देवताओं का सङ्घ तथा मनुष्यादि जिनसे उत्पन्न हुए हैं, हम सर्वदा उन भगवान् गणेशजी को नमस्कार और उन्हीं का भजन करते हैं।' गणेश महिम्न स्तोत्र में पुष्पदन्त निवेदन किया—

गणेशं गणेशाः शिवमिति च शैवाश्च विबुधा
रविं सौरा विष्णुं प्रथम पुरुषं विष्णुभजकाः ।
वदन्त्येकं शाक्ता जगदुदयमूलां परशिवां
न जाने किं तस्मै नम इति परं ब्रह्म सकलम् ।।
(गणेशमहिम्नस्तोत्र श्लोक २)

'उस एक तत्त्व को गणपति के उपासक 'गणेश', शैव विद्वान् 'शिव' सूर्योपासक 'सूर्य,' विष्णुभक्त आदि पुरुष 'विष्णु', तथा शक्ति के उपासक जगत् की उत्पत्ति की मूल कारणभूता 'पराशिवा' कहते हैं, वह वास्तव में क्या है ? यह मैं नहीं जानता; किन्तु ये सब कुछ परब्रह्मस्वरूप हैं; इसलिए ब्रह्मभाव से ही उस अद्वितीय तत्त्व के प्रति मैं नमस्कार करता हूँ।'

समस्त देवता भी जिनकी सर्व प्रथम पूजा करते आए हैं, उन भगवान् गणपति के चरणों में बारम्बार प्रणाम है।

नोट—इस पुस्तक में गणेश सहस्त्रनाम महात्म्य हिन्दी भाषार्थ सहित लिखा गया है, उसमें भी गणेशजी का तात्विक वर्णन प्रचुर मात्रा में प्राप्त है।

(इस सोपान में कई एक ग्रन्थ संदर्भ प्रमाण कल्याण में प्रकाशित श्रीराम लालजी के लेख से साभार संगृहीत किए गए हैं।)

卐

सोपान ८

श्री महागणपति सहस्रनाम स्तोत्रम्

व्यास उवाच

कथं नाम्नां सहस्रं स्वं गणेश उपदिष्टवान् ।
शिवायैतन्ममाचक्ष्व लोकानुग्रहतत्पर ।।१।।

व्यासजी ने पूछा—सम्पूर्ण लोकों के ऊपर अनुग्रह में तत्पर रहने वाले पितामह ! गणेश जी ने भगवान् शिव के प्रति अपने सहस्रनामों का उपदेश किस प्रकार किया, यह मुझे बतलाइए ।।१।।

ब्रह्मोवाच

देव एवं पुराराति: पुरत्रयजयोद्यमे ।
अनर्चनाद् गणेशस्य जातो विघ्नाकुल: किल ।।२।।

ब्रह्माजी ने कहा—ब्रह्मन् ! कहते हैं, पूर्व समय में त्रिपुरारि महादेवजी ने जब त्रिपुर विजय के लिए उद्योग किया, उस समय पहले गणेशजी की अर्चना न करने के कारण वे विघ्नों से घिर गए ।।२।।

मनसा स विनिर्धार्य ततस्तद्विघ्नकारणम् ।
महागणपतिं भक्त्या समभ्यर्च्य यथा विधि: ।३।
विघ्नप्रशमनोपायमपृच्छदपराजित: ।
सतुष्ट: पूजया शम्भोर्महागणपति: स्वयम् ।४।
सर्वविघ्नैकहरणं सर्वकामफलप्रदम् ।
ततस्तस्मै स्वक नाम्नां सहस्रमिदमब्रवीत् ।५।

तदनन्तर विघ्न का क्या कारण है, यह मन ही मन निश्चय करके शिवजी ने भक्ति-भाव से महागणपति की विधिपूर्वक पूजा की और उन अपराजित देवने उनसे विघ्न-शान्ति का उपाय पूछा। भगवान् शिव द्वारा की गई उस पूजा से सन्तुष्ट होकर महागणपति ने स्वयं उनसे अपने इस सहस्रनाम का वर्णन किया। यह समस्त विघ्नों का एकमात्र हरण करने वाला तथा सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलों को देने वाला है ।३-५।

विनियोग

अस्य श्रीमहागणपति सहस्रनाम स्तोत्रमन्त्रस्य महागणपतिर्ऋषि: । अनुष्टुप् छन्द: । महागणपतिर्देवता । ग बीजम् । हुँ शक्ति: । स्वाहा कीलकम् । चतुर्विध पुरुषार्थसिद्धयर्थे जपादौ विनियोग: । इस 'श्रीमहागणपति सहस्रनाम स्तोत्र--मन्त्र' के महागणपति ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द हैं, महागणपति देवता

हैं, गं बीज है, 'हुं' शक्ति है एवं 'स्वाहा' कीलक है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चार पुरुषार्थों की सिद्धि के लिए जप आदि में इसका विनियोग होता है।

ऋष्यादिन्यास

ॐ महागणपतये ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्—छन्द से नमः मुखे। महागणपतिदेवतायैनमः हृदि। गं बीजाय नमः गुह्ये। शक्तये नमः दापयोः। स्वाहा कीलकाय नमः नाभौ।

इन छः वाक्यों को पृथक-पृथक पढ़कर क्रमशः मस्तक, मुख, हृदय, गुदाभाग, दोनों चरण तथा नाभि का स्पर्श दाहिने हाथ से करे।

ध्यान (१)

हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया संततम्।
बीजापूर गदाधनुस्त्रिशिखयुक्चक्रब्जपाशोत्पल-
व्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे॥

'जिनका गजराज के समान मुख है, जिनके मस्तक पर चन्द्रमा का मुकट है, जिनकी अङ्गकान्ति अरुण है, जो तीन नेत्रों से सुशोभित हैं, जिन्हें हाथ में कमल धारण करने वाली अङ्कगत प्रिया (सिद्धि-लक्ष्मी) का परिष्वङ्ग-सदा प्राप्त है तथा जो अपने दस हाथों में क्रमशः बीजापुर (बिजौरा नीबू या अनार), गदा, धनुष, त्रिशूल, चक्र, कमल, पाश, उत्पल, धान की बाल तथा अपना ही टूटा दांत धारण कर रखा है एवं शुण्ड में रत्नमय कलश लिए हुए हैं, उन गणपति का मैं भजन (ध्यान) करता हूँ।"

ध्यान (२)

गण्डपालीगलद्दानपूरलालसमानसान्।
द्विरेफान् कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः॥
कराग्रधृत माणिक्यकुम्भवक्त्रविनिर्गतैः।
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकान् मदविह्वलम्।
माणिक्यमुकुटोपेतं सर्वाभरणभूषितम्॥

"गणेशजी के गण्ड स्थल से मद की धारा बह रही है। उनका आस्वादन करने के लिये भ्रमरों की भीड़ टूटी पड़ रही है। उन भ्रमरों के समूह को वे अपने ताड़पत्र के समान कानों को हिलाकर बारंबार हटा रहे हैं। वे अपने शुण्ड-दण्ड के अग्रभाग में माणिक्य निर्मित कलश लिये हुए हैं, उस कलश के मुखभाग से रत्नों की वर्षा हो रही है और उसके द्वारा वे अपने धन के इच्छुक साधक भक्तों को तृप्ति प्रदान कर रहे हैं। वे कपोलों पर झरते हुए मद से विह्वल हो रहे हैं। उनके मस्तक पर मणिमय मुकुट शोभा दे रहा है और वे सम्पूर्ण आभूषणों से विभूषित हैं। ऐसे महागणपति का मैं ध्यान करता हूँ।"

श्री महागणपति का उपर्युक्त ध्यान करने के पश्चात् जिस प्रकार से हो

सके पञ्चोपचार, द्वादशोपचार, षोडशोपचार पूजन करके 'श्री महागणपति सहस्रनाम स्तोत्र' का पाठ करना चाहिये। यदि ऐसा नहीं कर सकें तो श्री गणपति महाराज की मानसिक पूजा करके ही 'श्री महागणपति सहस्रनाम स्तोत्र' का पाठ करना चाहिये।

।।श्री महा गणपति सहस्रनाम स्तोत्रम्।।

ॐ गणेश्वरो गणक्रीडो गणनाथो गणाधिपः।
एकदंष्ट्रो वक्रतुण्डो गजवक्त्रो महोदरः ।।१

'ॐ सच्चिदानन्दस्वरूप, १ गणेश्वरः-आकाशादि प्रपञ्च-के समूह को 'गण' कहते हैं, वह गण उनका स्वरूप है और वे उस गण के ईश्वर है, इसलिए उनको गणेश्वर कहा गया है वे श्रीगणेश: २ गणंक्रीड:-गणक्रीड-नाम का गुरुस्वरूपा अथवा आकाशादि गण के भीतर प्रवेश करके क्रीडा करने के कारण 'गणक्रीड' नाम से प्रसिद्ध ३ गणनाथ:-जिनका गुणन गुणों की गणना करना अथः-मङ्गलमय है, वे भगवान् गणपति, ४ गणाधिप:-आदित्यादि गणदेवताओं के अधिपति, ५ एकदंष्ट्र:-भूमिका उद्धार अथवा जगत् का नाश करने के निमित्त जिनकी एक ही दंष्ट्रा (दाढ़) है, वे भगवान् गणेश, ६ वक्रतुण्डा:-वक्र-टेडे तुण्ड-शुण्ड दण्ड से युक्त, ७ गजवक्त्र:-गज, अर्थात् हाथी के समान मुखवाले, ८ महोदर:-अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड को अपने भीतर रखने के कारण महान् उदर वाले ।।१

लम्बोदरो धूम्रवर्णो विकटो विघ्ननायकः ।
सुमुखो दुर्मुखो बुद्धो विघ्नराजो गजाननः ।।२

९-लम्बोदर:-ब्रह्माण्ड के आलम्बन रूप उदर वाले, १० धूम्रवर्ण:-धूम्र के समान वर्ण वाले, अथवा वायु का बीज धूम्र वर्ण का है, तत्स्वरूप होने के कारण गणेशजी भी 'धूम्रवर्ण' कहे गये हैं, ११ विकट:-विकट अर्थात् आवरण से रहित विभस्वरूप, १२ विघ्ननायक:-प्रभक्त समुदाय के प्रति विघ्नों का नयन करने वाले; या विघ्नों के अधिपति: अथवा प्राणियों का विहनन एवं नयन करने वाले, १३ सुमुख:-मुख का अर्थ है-आरम्भ: जिनसे सम्पूर्ण आरम्भ सुन्दर या शोभन होते हैं वे; अथवा सुन्दर मुख वाले; १४, दुर्मुख:-जिनके मुख का स्पर्श करना दुष्कर है; अथवा अग्नि और सूर्य के रूप में जिनकी ओर देखना अत्यन्त कठिन है वे, १५ बुद्ध:-नित्य बुद्ध स्वरूप अविद्या वृत्ति के नाशक; अथवा बुद्धावतार स्वरूप, १६ विघ्नराज:-विघ्नों के साथ विराजमान, अथवा विघ्नों के राजा किंवा जो विघ्न-भक्ताधीन तथा राजा हैं, वे भगवान् गणेश, १७ गजानन:-गजों-हाथियों को अनुप्राणित-प्राण शक्ति से सम्पन्न करने वाले ।।२

भीमः प्रमोद आमोदः सुरानन्दो मदोत्कटः।
हेरम्बः शम्बरः शम्भुर्लम्बकर्णो महाबलः ।।३

१८ भीम:-दुष्टों के लिये भयदायक होने से 'भीम' नाम से प्रसिद्ध, १९ प्रमोद:-अभीष्ट वस्तु के लाभ से होने वाले सुख का नाम है-'प्रमोद' तत्स्वरूपः,

*गणेश के शिष्य गणक्रीड है, जो विकट के गुरु हैं, विकट के शिष्य विघ्ननायक हैं। यह तीनों गुरु एवं गणेशरूप कहे गये हैं। (खद्योत भाष्य)

२० ग्रामोद:-प्रमोद से पहले ग्रभीष्ट वस्तु की प्राप्ति के निश्चय से जो सुख होता है, उसे 'ग्रामोद' कहते हैं, ऐसे ग्रामोद-स्वरूप, २१ सुरानन्द:-देवताग्रों के लिये ग्रानन्दप्रद, २२ मदोत्कट:-गण्ड स्थल से झरने वाले मद के कारण उत्कट; ग्रथवा मद से ग्रावरण का उत्क्रमण करने वाले, २३ हेरम्ब:-'हे' का ग्रर्थ है-शंकर तथा 'रम्ब' का ग्रर्थ है-शब्द। शैवागम के प्रवर्तक होने से 'हेरम्ब' नाम वाले ग्रथवा उद्यमशौर्य से युक्त होने के कारण उक्त नाम से प्रसिद्ध, २४ शम्बर:-'शम्' ग्रर्थात् सुख है वर-श्रेष्ठ जिनमें वे, २५ शम्भु:-जिनमें 'शम्' ग्रर्थात् कल्याण का उद्भव होता है, वे, २६ लम्बकर्ण:-भक्तजन जहां कहीं भी गणेशजी का ग्रावाहन या स्तवन, ग्रादि करते हैं वहीं वे जैसे दूर न हों, इस भाँति सुन लेते हैं। इसलिये लम्बे-सुदूर तक सुनने वाले कान हैं जिनके, वे, २७ महाबल:-जिनके, ग्रनुग्रह से बलासुर महान् हो गया। वे, ग्रथवा महान् बलशाली ।।३

नन्दनोऽलम्पटोऽभीरूर्मेघनादो गणंजय:।
विनायको विरूपाक्षी धीरशूरी वरप्रद: ।।४

२८ नन्दन:-समृद्धि के हेतुभूत, २९ ग्रलम्पट:-पर्याप्तपट-वस्त्रों से समृद्ध ग्रथवा पट ही जिनका ग्रलंकार है, वे, ३० ग्रभीरु:-भयशून्य, ग्रथवा भीरु स्वभाव वाली स्त्री से रहित, ३१ मेघनाद:-मेघगर्जना के समान नाद या सिंह नाद करने वाले; ग्रथवा मेघों के नाशक, ३२ गणंजय:-शत्रु समूहों पर ग्रनायास विजय पाने वाले, ३३ विनायक:-'वि' ग्रर्थात् पक्षिरूप जीव समुदाय के नेता या नायक, ३४ विरुपाक्ष:-विरूप-विकट दिखने वाले ग्रग्नि, सूर्य तथा चन्द्र रूप नेत्रों से युक्त, ३५ धीरशूर:-धैर्य ग्रौर शौर्य से सम्पन्न, ३६ वरप्रद:-ग्रपने भक्तजनों की उत्तम एवं मनोवाञ्छित वर प्रदान करने वाला ।।४

महागणपतिर्बुद्धिप्रिय: क्षिप्रप्रसादन:।
रुद्रप्रियो गणाध्यक्ष उमापुत्रोऽघनाशन: ।।५

३७ महागणपति;-गुल्म ग्रादि सेनाभेदों को 'गण' कहते हैं, वे जिनकी ग्रधीनता में महान्-बहुसंख्यक हैं, वे; ग्रथवा महागणों के ग्रधिपति, ३८ बुद्धिप्रिय:-निश्चयात्मिका बुद्धि जिनको प्रिय है, वे; ग्रर्थात् संशय निवारक, ३९ क्षिप्रप्रसादन:-भक्तों द्वारा ध्यान किये जाने पर उनके ऊपर शीघ्र प्रसन्न होने वाले, ४० रुद्रप्रिय:-ग्यारहों रुद्रों के प्रिय, ४१ गणाध्यक्ष:-छत्तीस तत्त्वरूप गण समुदाय के पालक; ४२ उमापुत्र:-पार्वती के पुत्र (उमाका पुन्नामक नरक लोक से उद्धार करने वाले), ४३ ग्रघनाशन:-लम्बोदर या महोदर होने पर भी स्वल्प मात्र नैवेद्य से तृप्त होने वाले (ग्रघन-स्वल्प है ग्रशन-भोजन जिनका वे ग्रथवा ग्रघके फलस्वरूप दु:खों का नाश करने वाले ।।५

कुमारगुरुरीशानपुत्रो मूषकवाहन:।
सिद्धिप्रिय: सिद्धिपति: सिद्ध सिद्धिविनायक: ।।६

४४ कुमारगुरु:—सनत्कुमार-स्वरूप होते हुए विद्या का उपदेश करने के कारण गुरु; ग्रथवा कुमार कार्तिकेय से भी पहले उत्पन्न होने के कारण उनके ज्येष्ठ भ्राता, ४५ ईशानपुत्र:—भगवान् शंकर के ग्रात्मज; ४६ मूषकवाहन:—मूषक

(चूहे) को वाहन बनाने वाले होने के कारण उक्त नाम से प्रसिद्ध, ४७ सिद्धिप्रियः-अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ जिन्हें प्रिय हैं, वे, ४८ सिद्धिपतिः-अणिमा आदि आठ सिद्धियों के पालक, ४९ सिद्धः-गोरक्षनाथ आदि सिद्ध स्वरूप, ५० सिद्धि विनायकः-भक्तों तक सिद्ध का नयन करने वाले (भक्तों को सिद्धि प्राप्त कराने वाले) ॥६

अविघ्नस्तुम्बरुः सिंहवाहनो मोहिनीप्रियः ।
कटंकटो राजपुत्रः शालकः सम्मितोऽमितः ॥७

५१ अविघ्नः-अविभाव; अर्थात् पशुता का हनन (हरण) करने वाले; अथवा विघ्नों में रहित, ५२ तुम्बुरुः-तुम्ब (अलाबू या लौकी) के द्वारा जोख करता है, वह 'तुम्बुरु' है। तुम्बुरु नाम है-वीणा का। वीणापर गणपति का यशोगान होने से वे 'तुम्बुरु' नाम से प्रसिद्ध हैं, ५३ सिंह वाहनः-मोर और मूषक की भाँति सिंह को भी वाहन बनाने वाले, अथवा सिंह-वाहिनी देवी मे अभिन्न होने के कारण सिंह वाहन; ५४ मोहिनी प्रियः-मोहिनी पति शिव से अभिन्न, ५५ कटंकटः-'कट' का अर्थ है-आवरण या अज्ञान; गणेशजी ज्ञान प्रदान करके उस अज्ञान को भी ढक देते या मिटा देते हैं। इसलिए कटंकट नाम से प्रसिद्ध हैं, ५६ राजपुत्रः-राजा वरेण्य के यहाँ पुत्रवत् आचरण करने वाले, अथवा राजा-चन्द्रमा को पुत्रवत् मानने वाले; ५७ शालकः-'श' 'परोक्ष' अर्थ में है और 'अलक' शब्द 'केश' या अंश का वाचक है। जिनका एक अंश भी प्रत्यक्ष नहीं है, जो अतीन्द्रिय है, वे 'शालक' हैं: अथवा शालित-शोभित होते हैं, इसलिए 'शालक' हैं; ५८ सम्मितः-सर्वव्यापी होते हुए भी अंगुष्ट मात्र से मित, ५९ अमितः-अणु, स्थूल, ह्रस्व और दीर्घ चारों प्रकार के प्रमाणों से मित न होने वाले ॥७

कूष्माण्डसामसम्भूतिर्दुर्जयो धूर्जयो जयः ।
भूपतिर्भुवनपतिर्भूतानां पतिरव्ययः ॥८

६० कूष्माण्डसामसम्भूतिः-'कुष्माण्डैर्जुहूयात्।'-इस कुष्माण्डहोमविधि में जो प्रसिद्ध मन्त्र या साम हैं, वे गणेशजी की विभूति हैं। अतएव वे उक्त नाम से प्रसिद्ध हैं, ६१ दुर्जयः-बलवान् दैत्य जिन्हें मान से भी जीत नहीं सकते, ऐसे, ६२ धूर्जयः-जगच्चक्र की धूरी को अनायास वहन करने वाले, ६३ जयः-जयस्वरूप; अथवा जय-महाभारत आदि इतिहास-पुराण जिनके रूप हैं, वे, ६४ भूपतिः-पृथ्वी के पालक, अथवा भूपति-नाम से प्रसिद्ध अग्नि भ्राता, ६५ भुवनपतिः-समस्त भुवनों के स्वामी; अथवा उक्त नाम वाले अग्नि भ्राता, ६६ भूतानाम्पतिः-समस्त भूतों के पालक अथवा भूतपति-नामक अग्नि भ्राता, ६७ अव्ययः-अविनाशी ॥८

विश्वकर्ता विश्वमुखो विश्वरूपो निधिघृणिः ।
कविः कवीनामृषभो ब्रह्मण्स्पतिः ॥९

६८ विश्वकर्ताः-संसार के स्रष्टा, ६९ विश्वमुखः-जिनसे विश्व का मुख-आरम्भ हुआ है, वे; अथवा विश्व जिनके मुख में है; या जो मुख की भाँति विश्व की वृत्ति के हेतु हैं, वे गणेश, ७० विश्वरूपः-सम्पूर्ण दृश्य-प्रपञ्च जिनका रूप है, वे; अथवा त्वष्टा-प्रजापति के पुत्र देव पुरोहित विश्व रूप से अभिन्न, ७१ निधिः-

आकाश आदि सम्पूर्ण जगत्समूह जिनमें नितरां आहित या धृत है, वे, अथवा महापद्म आदि नव-निधि-स्वरूप, ७२ घृणि-सूर्य स्वरूप, ७३ कवि-सृष्टि रूप काव्य के कर्ता; ७४ कविनामृषभ-कवियों में श्रेष्ठ, ७५ ब्रह्मण्य-ब्राह्मण, वेद, तप तथा ब्रह्मा के प्रति सद्भाव रखने वाले, ७६ ब्रह्मण स्पति-ब्रह्म अर्थात् वाणी के अधिपति ॥९

ज्येष्टराजो निधिपतिर्निधिप्रियपतिप्रिय: ।
हिरण्मयपुरान्त:स्थ: सूर्यमण्डलमध्यग: ॥१०

७७ ज्येष्ठराज-'ज्येष्ठ' संज्ञक साम में राजमान; ७८ निधिपति-नव निधियों के परिपालक, ७९ निधिप्रियपतिप्रिय-निधियों को प्रिय मानने वाले जो कुवेर आदि राजा हैं, उनके द्वारा भी उपास्य, ८० हिरण्मय पुरान्त:स्थ-हिरण्यपुर दहरा काश के मध्य में विराजमान; (चिन्मय ब्रह्म के निवास स्थान अन्त: हृदय में विद्यमान), ८१ सूर्य मण्डल-मध्यग-सूर्य मण्डल के भीतर स्थित ॥१०

कराहतिध्वस्तसिन्धुसलिल: पूषदन्तमित् ।
उमाङ्ककेलिकुतुकी मुक्तिद: कुलपालन: ॥११

८२ कराहाति ध्वस्त सिन्धु सलिल-जिन्होंने अपने शुण्डदण्ड के आघात से समुद्र के जल को विध्वस्त (निष्कासित) कर दिया था, वे, ८३ पूषदन्तभित्-वीर भद्र रूप से दक्षयज्ञ में पूषा के दाँत को तोड़ने वाले, ८४ उमाङ्क केलिकुतुकी-उमा के अङ्क में बैठकर वालोचित क्रीड़ा करने का कोतूहल रखने वाले, ८५ मुक्तिद-कारागार की वेड़ी से छुड़ाने वाले; तथा मोक्षदाता, ८६ कुल पालन-वंश के तथा कौल तन्त्र के भी पालक ॥११

किरीटी कुण्डली हारी वनमालो मनोमय ।
वैमुख्यहतदैत्यश्री: पादाहतिजितक्षिति: ॥१२

८७ किरीटी-मस्तक पर मुकट धारण करने वाले; अथवा अर्जुन स्वरूप, ८८ कुण्डली:-कानों में कुण्डल पहनने वाले; अथवा शेष नाग रुपधारी, ८९ हारी:-मुक्ता आदि मणियों की माला धारण करने वाले; अथवा अत्यन्त मनोहर, ९० वनमाली:-कंधे से लेकर पैरों तक लटकने वाली वनमाला' धारण करने वाले, ९१ मनोमय:-अपने संकल्प द्वारा निर्मित एक शरीर धारण करने वाले, ९२ वैमुख्यहतदैत्यश्री:-जिनके विमुख हो जाने के कारण दैत्यों की लक्ष्मी नष्ट हो गयी, वे, ९३ पादाहतिजितक्षिति:-अपने पैरों के आघात से पृथ्वी को नीचे झुका देने वाले ॥१२

सद्योजातस्वर्णमुञ्जमेखली दुर्निमित्तहृत् ।
दु:स्वप्नहृत् प्रसहनो गुणी नादप्रतिष्ठित: ।१३।

९४ सद्योजातस्वर्णमुञ्जमेखली:-तत्काल तैयार की गयी स्वर्णमय मुञ्ज की मेखला से मण्डित, ९५ दुर्निमित्तहृत्:-देवमूर्तियों के फूटने, भूकम्प होने तथा महान् उल्कापात आदि के द्वारा सूचित जो दुर्निमित्त (अपशकुन) हैं, उनका हनन करने वाले, ९६ दु:स्वप्नहृत्:-बुरे सपनों के दुष्प्रभाव को दूर करके उन्हें सुस्वप्नो में परिणत करदेनेवाले, ९७ प्रसहन:-भक्तों के अपराध को सहन करने वाले

भगवान्, ९८ गुणी:-अनेक सद्गुणों से सम्पन्न, ९९ नादप्रतिष्ठित:-प्रणवनाद के वाच्यार्थरूप से प्रतिष्ठित ।।१३

सुरूप: सर्वनेत्राधिवासो वीरासना श्रय: ।
पीताम्बर: खण्डरद: खण्डेन्दुकृत शेखर: ।।१४

१०० सुरूप:-अधिक लावण्य से युक्त: अथवा उत्तम तत्त्व का निरूपण करने वाले, १०१ सर्वनेत्राधिवास:-सबके नेत्रों में द्रष्टा पुरुष के रूप में निवास करने वाले, १०२ वीरासनाश्रय:-बाएं घुटने पर दायाँ पैर रखकर बैठना 'वीरासन' कहलाता है, ऐसे वीरासन से बैठने वाले, १०३ पीताम्बर:-आकाश को पी जाने वाले; अथवा पीतवस्त्र धारण करने वाले, १०४ खण्डरद:-खण्डित दायाँ दांत धारण करने वाले, १०५ खण्डेन्दुकृतशेखर:-भालदेश में आधे चन्द्रमा को धारण करने वाले ।।१४

चित्राङ्कश्यामदशनो भालचन्द्रश्चतुर्भुज: ।
योगाधिपस्तारकस्थ: पुरुषो गजकर्णक: ।।१५

१०६ चित्राङ्कश्यामदशनो:-जिनमें श्यामरंग की अधिकता है, ऐसे, चित्रों से अङ्कित या अलंकृत श्यामदन्त वाले, १०७ भालचन्द्र:-भालदेश में चन्द्रमा को धारण करने वाले, अथवा अष्टमी के चन्द्रमा की भाँति ललाट वाले, १०८ चतुर्भुज.-चारभुजा वाले, १०९ योगाधिप:-'लिङ्गपुराण' में वर्णित जो लकुलीशादि अट्ठाईस योगाचार्यावतार हैं, उनसे अभिन्न रूप वाले; अथवा योगेश्वर, ११० तारकस्थ:-तारक अर्थात् प्रणव-मन्त्र के अभिधेय, १११ पुरुष:-समस्तपुरो-शरीरों में शयन करने वाले साक्षी आत्मा, ११२ गजकर्णक:-हाथी के समान विशाल कानवाले ।।१५

गणाधिराजो विजयस्थिरो गजपतिध्वजी ।
देवदेव: स्मरप्राणदीपको वायुकीलक: ।।१६

११३ गणाधिराज:-काव्य के पद्यों में जो मगण, यगण, रगण, और सगण आदिगण आते हैं, उनसे राजमान-शोभायमान; अथवा गणों के अधिपति, ११४ विजयस्थिर:-भक्तों की विजय में स्थिर रूप से प्रवृत्त, ११५ गजपतिध्वजी:-अपने ध्वज में गजराज का चिह्न धारण करने वाले, ११६ देवदेव:-देवताओं के भी देवता-इन्द्र आदि देवताओं के उपास्य, ११७ स्मरप्राणदीपक:-रुद्रद्वारा कामदेव के शरीर के दग्ध कर दिए जाने पर भी उसके प्राणों को उज्जीवित करने वाले, ११८ वायुकीलक:-नवद्वार वाले शरीर में प्राणों का स्तम्भन करने वाले ।।१६

विपश्चिद्वरदो नादोन्नादभिन्नबलाहक:
वराहरदनो मृत्युञ्जयो व्याघ्राजिनाम्बर: ।१७।

११९ विपश्चिद्वरद:-राजा विपश्चित् को वर देने वाले, १२० नादोन्नाद:-भिन्न-बलाहक-अपने मन्द या उच्चनाद (घोष) से मेघों को छिन्न-भिन्न कर देने-वाले, १२१ वराहरदन:-महावराहकी दंष्ट्रा (दाढ़) की शोभा को तिरस्कृत करने वाले एक दांत से सुशोभित, १२२ मृत्युञ्जय:-काल, मृत्यु अथवा प्रमाद पर

विजय पाने वाले, १२३ व्याघ्राजिनाम्बरः-वस्त्र के स्थान में व्याघ्रचर्म को धारण करने वाले ।।१७

इच्छाशक्तिधरो देवत्राता दैत्यविमर्दनः ।
शम्भुवक्त्रोद्भवः शम्भुकोपहा शम्भुहास्यभूः ।।१८

१२४ इच्छाशक्तिधरः-जगत् की सृष्टि की इच्छा धारण करने वाले होने से इच्छा शक्ति धारी १२५ देवत्राताः-दैत्यों के भय से देवताओं को रक्षा करने वाले, १२६ दैत्यविमर्दनः-दैत्यों का संहार करने वाले, १२७ शम्भुः-वक्त्रोद्भव-शिव के मुख से प्रकट होने वाले, ११८ शम्भुकोपहः।-अपनी बाल-लीलाओं से भगवान् शिव के क्रोध को हर लेने वाले, १२९ शम्भुहास्यभूः-नादान बालक की भांति चेष्टा करके शिव को हँसा देने वाले ।।१८

शम्भुतेजाः शिवाशोकहारी गौरीसुखावहः ।
उमाङ्गमलजो गौरीतेजोभूः स्वर्धुनीभवः ।।१६

१३० शम्भुतेजाः-शिव के तेज से सम्पन्न, १३१ शिवशोकहारीः महिषासुर आदि के मर्दन काल में शिवा (पार्वती) के बल एवं उत्साह को बनाकर उनके शोक को हर लेने वाले, १३२ गौरीसुखावहः-पार्वतीजी को सुख पहुँचाने वाले; १३३ उमाङ्गमलजः-गिरिराजनन्दिनी उमा के अङ्गों में लगे हुए उबटन के मैल से प्रकट हुए शरीर में प्रवेश करके उसे सप्राण बनाने वाले, १३४ गौरीतेजोभूः-गौरी के तेज से उत्पन्न; अथवा पार्वती के तेज की आधार भूमि, १३५ स्वर्धुनीभवः-गङ्गाजी से उत्पन्न स्वामिकार्तिकेय से अभिन्न; अथवा गङ्गाजी की उत्पत्ति के हेतुभूत ।।१९

यज्ञकायो महानादो गिरिवर्ष्मा शुभाननः ।
सर्वात्मा सर्वदेवात्मा ब्रह्ममूर्धाककुप्श्रुतिः ।।२०

१३६ यज्ञकायः-अश्वमेधादि यज्ञस्वरूप, १३७ महानादः-उच्चस्वर से गर्जना करने वाले: १३८ गिरिवर्ष्माः-विराट्स्वरूप से पर्वतों को शरीर के अवयव रूप में धारण करने वाले, १३९ शुभाननः-शुभदायक मुखवाले, अथवा मङ्गल-नाम वाले प्राण के जनक, १४० सर्वात्माः-सर्वस्वरूप, १४१ सर्वदेवात्माः-सकल देव रूप, १४२ ब्रह्ममूर्धाः-ब्रह्म ही जिनका मस्तक है, वे, १४३ ककुप्श्रुतिः-दिशाओं को कान के रूप में धारण करने वाले ।।२०

ब्रह्माण्डकुम्भश्चिद्व्योमभालः सत्यशिरोरुहः ।
जगज्जन्मलयोन्मेषनिमेषोऽग्न्यर्कसोमदृक् ।।२१

१४४ ब्रह्माण्ड कुम्भः-विशाल ब्रह्माण्ड, कपालद्वय औंधा होकर जिनके लिए घट के समान प्रतीत होता होता है, वे; १४५ चिद्व्योमभालः-चिन्मय आकाश-रूपभाल (ब्रह्मरन्ध्र वाले; १४६ सत्यशिरोरुहः-सत्यलोक रूपी केश वाले, १४७ जगज्जन्मलयोन्मेषनिमेषः—जिनके नेत्र के खुलने पर जगत् का जन्म होता है और बंद होने पर उसका संहार; वे परमेश्वर; १४८ अग्न्यर्कसोमदृक् अग्निः – सूर्य और चन्द्ररूपी नेत्र वाले ।।२१

गिरीन्द्रैकरदो धर्माधर्मोष्टः सामबृंहितः।
ग्रहर्क्षदशनो वाणीजिह्वो वासवनासिकः ॥२२

१४९ गिरीन्द्रैकरदः—गिरिराजमेरु जिनका एक दांत है, वे विराट् पुरुष; १५० धर्माधर्मोष्टः—धर्म और अधर्मरूप ओष्टवाले, १५१ सामबृंहितः-सामवेदरूप गर्जनावाले, १५२ ग्रहर्क्षदशनः-सूर्य आदि ग्रहों और कृतिका आदि नक्षत्रों को अपने मुख दांतों के रूप में धारण करने वाले, १५३ वाणीजिह्वः-वाणीस्वरूप जिह्वावाले, वासवनासिकः-इन्द्ररूप नासिकावाले ॥२२

कुलाचलांसः सोमार्कघण्टो रुद्रशिरोधरः।
नदीनदभुजः सर्पाङ्गुलीकस्तारकानखः ॥२३

१५५ कुलाचलांसः-विन्ध्य आदि कुल पर्वतरूप कंधों वाले, १५६ सोमार्कघण्टः-चन्द्रमा और सूर्यरूप घण्टा वाले, १५७ रुद्रशिरोधरः-रुद्ररूपी गर्दन वाले, १५८ नदीनदभुजः-गंगा आदि नदियां और शोणभद्र आदि नद जिनकी भुजाएँ हैं वे, १५९ सर्पाङ्गुलीक-शेष आदि नाग जिनकी अगुलियों में हैं, वे; १६० तारकानखः—ध्रुव आदि तारों को नख के रूप में धारण करने वाले ॥२३

भ्रूमध्यसंस्थितकरो ब्रह्मविद्यामदोत्कटः।
व्योमनाभिः श्रीहृदयो मेरुपृष्ठोऽर्णवोदरः ॥२४

१६१ भ्रूमध्यसंस्थितकरः-भौंहों के मध्य भाग में स्थित शुण्डदण्ड वाले; १६२ ब्रह्मविद्यामदोत्कटः-ब्रह्मविद्यारूपी मदसे उद्भिन्नगण्डस्थल वाले, १६३ व्योमनाभिः-आकाशरूपनाभिवाले, १६४ श्रीहृदयः-जिनका, ऐसे, १६५ मेरुपृष्ठः-पर्वतरूपी पृष्ठभाग वाले, १६६ अर्णवोदरः-सारे समुद्र जिनके उदरान्तर्गत हैं, वे।२४

कुक्षिस्थयक्षगन्धर्वरक्षः किंनरमानुषः।
पृथ्वीकटिः सृष्टिलिङ्गः शैलोरुदस्रजानुकः ॥२५

१६७ कुक्षिस्थयक्षगन्धर्वरक्षः किंनरमानुषः-यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, किंनर और मनुष्य जिनकी कुक्षि के अन्तर्गत आंतों के रूप में विराजमान हैं, वे, १६८ पृथ्वीकटिः-विराटरूप में पृथ्वी ही जिनका कटिभाग है, वे, १६९ सृष्टिलिंगः-मैथुनी सृष्टि जिनकी जननेन्द्रिय के स्थान में हैं, वे, १७० शैलोरुः-पर्वत ही जिनके उरु (जांघें) हैं वे, १७१ दस्रजानकः-दोनों अश्विनीकुमार जिनके दो घुटने हैं, वे ॥२५

पातालजङ्घो मुनिपात्कालाङ्गुष्ठस्त्रयीतनुः।
ज्योतिर्मण्डललाङ्गूलोहृदयालाननिश्चलः ॥२६

१७२ पातालजंङ्घः-सातों पाताल जिनकी पिंडलियों के स्थान में हैं, वे, १७३ मुनिपातः—चरणों की सेवा में संलग्न मुनि ही जिनके चरण हैं, वे, १७४ कालागुष्ठः-महाकालरुप पादाङ्गुष्ठवाले, १७५ त्रयीतनुः-वेदत्रयीरुप शरीर वाले, १७६ ज्योतिर्मण्डललाङ्गूलः-शिशुमार-संज्ञक ज्योतिमंण्डल (तारों का समूह) जिनकी पूँछ है, वे, १७७ हृदयालाननिश्चलः-भक्तों के हृदयरुपी आलान (खम्भे) में बंधकर निश्चल रुप से रहने वाले ॥२६

हृत्पद्मकर्णिकाशालिवियत्केलिसरोवरः।
सद्भक्तध्याननिगडः पूजावारीनिवारितः ॥२७

१७८ हृत्पद्मकर्णिकाशालिवियत्केलिसरोवर:-हृदय कमल की कर्णिका से सुशोभित दहराकाश जिनका क्रीडा सरोवर है, वे, १७९ सद्भक्तध्याननिगड:-श्रेष्ठजन जिन्हें ध्यानरुपी निगड (बन्धन) से आबद्ध कर लेते हैं, वे, १८० पूजावारीनिवारित: पूजारुपी साकल से अवरुद्ध होने वाले ।।२७

प्रतापी कश्यपसुतो गणपो विष्टपी बली ।
यशस्वी धार्मिक: स्वोजा: प्रथम: प्रथमेश्वर: ।।२८

१८१ प्रतापी:-देवशत्रुओं को ताप देने वाले, अथवा पराक्रम सम्पन्न, १८२ कश्यपसुत:-महोत्कट विनायक नाम से कश्यपमुनि के पुत्र रूप में अवतीर्ण, १८३ गणप-अध्वर्यु और होता आदि गणों के पालक, १८४ विष्टपी:-सम्पूर्ण भुवनों के आधार, १८५ बली:-बलसम्पन्न, १८६ यशस्वी-पुण्य कीर्तिवाले, १८७ धार्मिक-धर्म की वृद्धि करने वाले, १८८ स्वोजा:-श्रेष्ठ ओजवाले, १८९ प्रथम:-सब कार्यों में प्रथम पूज्य देवता, १९९ प्रथमेश्वर:-मुख्य देवता-ब्रह्मा, विष्णु और शिव के भी ईश्वर ।।२८

चिन्तामणिद्वीपपति: कल्पद्रुमवनालय: ।
रत्नमण्डपमध्यस्थो रत्नसिंहासनाश्रय: ।।२९

१९१ चिन्तामणिद्वीपपति:-चिन्तामणि-नामक द्वीप के स्वामी, १९२ कल्पद्रुमवनालय:-कल्पवृक्षों के वन में वास करने वाले, १९३ रत्नमण्डपमध्यस्थ:-रत्नमय मण्डप के मध्य में विराजमान, १९४ रत्नसिंहासनाश्रय:-रत्नसिंहासन पर आसीन ।२९

तीव्राशिरोद्धृतपदो ज्वालिनीमौलिलालित: ।
नन्दानन्दितपीठश्रीर्भोगदाभूषितासन: ।।३०

१९५ तीव्राशिरोद्धृतपद:-तीव्रा-नामक पीठशक्ति ने जिनके चरणों को अपने मस्तक पर धारण कर रखा है, वे भगवान् गणेश, १९६ ज्वालिनीमौलिलालित:-ज्वालिनी नामक शक्ति अपने मुकुट से जिनके चरणों का स्पर्श करके लाड़ लड़ाती है, वे, १९७ नन्दानन्दितपीठश्री:-नन्दा नामक शक्ति जिनके पीठ की शोभा का अभिनन्दन करती है, वे, १९८ भोगदाभूषितासन -जिनका सिंहासन भोगदा नामक पीठ शक्ति से विभूषित है, वे, ।।३०

सकामदायिनीपीठ: स्फुरदुग्रासनाश्रय: ।
तेजोवतीशिरोरत्नं सत्यानित्यावतंसित: ।।३१

१९९ सकामदायिनीपीठ:-जिनका पीठ कामदायिनी शक्ति से समलंकृत है, वे, २०० स्फुरदुग्रासनाश्रय:-तेजस्विनी उग्रा-शक्ति से सुशोभित आसन पर बैठनेवाले २०१ तेजोवती शिरोरत्नं:-तेजोवती-नामक शक्ति के शिर के मणिरत्न, २०२ सत्यानित्यावतंसित:-सत्या नामक शक्ति जिन्हें नित्य अपने मस्तक का आभूषण बनाए रखती है वे, ।।३१

---

१९५ (१) तीव्रा, ज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामदायिनी, उग्रा, तेजोवती, सत्या और विघ्ननाशिनी-ये नौ पीठ शक्तियाँ हैं। पीठगत अष्टदल कमल और उसकी कर्णिका में ये पूजित होती हैं। इन नौ शक्तियों और कमल के सम्बन्ध से यहाँ क्रमशः दस नाम वर्णित हुए हैं।

सविघ्ननाशिनीपीठः सर्वशक्त्यम्बुजाश्रयः ।
लिपिपद्मासनाधारो वह्निधामत्रयाश्रयः ॥३२

२०३ सविनघ्नाशिनीपीठ:-विघ्ननाशिनी-नामक शक्ति से सुशोभित पीठ वाले, २०४ सर्वशक्त्यम्बूजाश्रय:-सम्पूर्ण शक्तियों से युक्त कमल के आसन पर विराजमान, २०५ लिपिपद्मासनाधार※:-अक्षरों से युक्त कमल (मातृका पद्म) के आसन पर बैठने वाले, २०६ वह्निधामत्रयाश्रय:-कमल की कर्णिका के ऊपर विराजमान सूर्य, चन्द्र और अग्निसंज्ञक त्रिविध तेजोमण्डल में स्थित ॥३२

उन्नतप्रपदो गूढगुल्फः संवृतपार्ष्णिकः ।
पीनजङ्घः श्लिष्टजानु स्थूलोरुः प्रोन्नमत्कटिः ॥३३

२०७ उन्नतप्रपद:-जिनके पैरों का अग्रभाग कूर्मपीठ के समान ऊँचा है, वे, २०८ गूढगुल्फ:-जिनके गुल्फ (टखने) मांस से छिपे हुए हैं, वे, २०९ संवृत-पार्ष्णिक: जिनके टखने के नीचे का भाग भी मांसल हैं, वे, २१० पीनजंङ्घ:-पीन (मांसल) पिंडलियों वाले, २११ श्लिष्टजानु:-जिनके दोनों घुटने स्पष्ट नहीं दिखाई देते, वे, २१२ स्थूलोरु:-मोटी जाँघ वाले, २१३ प्रोन्नमत्कटि:-ऊँचे कटिप्रदेश वाले ॥३३

निम्नाभिः स्थूलकुक्षिः पीनवक्षाबृहद्भुजः ।
पीनस्कन्धः कम्बुकण्ठो लम्बोष्ठो लम्बनासिकः ॥३४

२१४ निम्ननाभि:-गहरी नाभि वाले, २१५ स्थूलकुक्षि:-लम्बोदर, २१६ पीनवक्षा:-ऊँची छाती वाले, २१७ बृहद्भुज:-बड़ी बाँह वाले, २१८ पीनस्कन्ध:-मांसल कंधे वाले, २१९ कम्बुकण्ठ:-त्रिवलीयुक्त शंखाकार ग्रीवावाले; २२० लम्बोष्ठ लटकते हुए ओठों वाले, २२१ लम्बनासिक:-लम्बी नासिका (सूँड) वाले ॥३४

भग्नवामरदस्तुङ्गसव्यदन्तो महाहनुः ।
ह्रस्वनेत्रत्रयः शूर्पकर्णो निविडमस्तकः ॥३५

२२२ भग्नवामरद:-जिनके बायें दाँत का अग्रभाग टूट गया है, व, २२३ तुङ्गसव्यदन्त:-जिनका दाहिना दांत ऊँचा है, वे, २२४ महाहनु:-लम्बी ठोढ़ी वाले, २२५ ह्रस्वनेत्रत्रय:-छोटे-छोटे तीन नेत्रों वाले; २२६ शूर्पकर्ण:-सूप के समान विशाल कानवाले, २२७ निविडमस्तक:-घनीभूत कठोर मस्तक वाले ॥३५

स्तबकाकारकुम्भाग्रो रत्नमौलिर्निरङ्कुशः ।
सर्पहारकटीसूत्रः सर्पयज्ञोपवीतवान् ॥३६

२२८ स्तबकाकारकुम्भाग्र:-जिनके कुम्भस्थल (मस्तक) का अग्रभाग गुच्छ के समान दिखायी देता है, वे; २२९ रत्नमौलि:-रत्नमय मुकट से मण्डित; २३० निरङ्कुश:-जिनके कुम्भस्थल पर कभी अंकुश का स्पर्श नहीं होता, वे; अथवा परमस्वतन्त्र; २३१ सर्पहारकटिसूत्र:-जो सर्पाकारहार और कटिसूत्र (मेखला) धारण करते हैं, वे, २३२ सर्पयज्ञोपवीतवान्:-सर्पमय यज्ञोपवीत धारण करने वाले ॥३६

---

२०५ (※) अष्टदल कमल के आठ किञ्जल्कों में क्रमश: दो-दो स्वर, आठ दलों में क्रमश: क. च. ट. त. प. य. श-इन वर्गों को तथा कर्णिका में प्रसाद को अंकित करने पर उसे 'लिपिपद्म' या 'मातृका पद्म' कहते हैं। (खद्योतभाष्य)

सर्पकोटीरकटकः सर्पग्रैवेयकाङ्गदः ।
सपकक्ष्योदराबन्धः सर्पराजोत्तरीयकः ।।३७

२३३ सर्पकोटीरकटक:-मुकुट और बलयकेरूपमें सर्पको धारण करने वाले; २३४ सर्पग्रैवेयकाङ्गद-सर्प के ही कण्ठहार और बाजूबन्द पहनने वाले; २३५ सर्पकक्ष्योदराबन्ध:-करधनी के रूप में सर्प को ही धारण करने वाले; २३६ सर्पराजोत्तरीयक:-नागराज वासुकि को उत्तरीय के रूपमें धारण करने वाले ।।३७

रक्तो रक्ताम्बरधरो रक्तमाल्यविभूषणः ।
रक्तेक्षणो रक्तकरो रक्ततात्वोष्ठपल्लवः ।।३८

२३७ रक्त:-रक्तवर्ण; २३८ रक्ताम्बरधर:-लाल वस्त्र धारण करने वाले; २३९ रक्तमाल्यविभूषण:-लालरंग के ही हार और आभूषण धारण करने वाले; २४० रक्तेक्षण:-लाल नेत्रों वाले; २४१ रक्तकर-लाल हाथोंवाले; २४२ रक्तताल्वोष्ठपल्लव:-रक्तवर्ण के तालु और ओष्ठपल्लवधारण करने वाले ।।३८

श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेतमाल्यविभूषणः ।
श्वेतातपत्ररुचिरः श्वेतचामरवीजितः ।।३९

२४३ श्वेत:-(विद्याकी कामना रखने वाले साधकों को भगवान् गणेश के श्वेतरूपका ध्यान करना चाहिए, इसदृष्टि से श्वेत आदि पाँच नाम दिए जाते हैं-) श्वेतवर्ण; २४४ श्वेताम्बरधर:-श्वेतवस्त्रधारी; २४५ श्वेतमाल्यविभूषण:-श्वेतमाला और आभूषणधारण करने वाले; २४६ श्वेतातपपत्ररुचिर:-श्वेतच्छत्र धारण करने के कारण अत्यन्त सुन्दर दिखायी देने वाले; २४७ श्वेतचामरवीजित:-श्वेत चँवर डुलाकर जिनकी सेवा की जाती है, वे; ।।३९

सर्वावयवसम्पूर्णसर्वलक्षणलक्षितः ।
सर्वाभरणशोभाढ्यः सर्वशोभासमन्वितः ।।४०

२४८ सर्वावयवसम्पूर्णसर्वलक्षणलक्षित:-सम्पूर्ण अङ्गगें में सामुद्रिक शास्त्रोक्त समस्त शुभ लक्षणों से परिपूर्णदिखायीदेनेवाले; २४९ सर्वाभरणशोभाढ्य:-सम्पूर्ण आभूषणों की शोभा से सम्पन्न; २५० सर्वशोभासमन्वित:-लावण्य-नामक सम्पूर्ण अङ्गकान्तिसे शोभायमान ।।४०

सर्वमङ्गलमङ्गल्यः सर्वकारणकारणम् ।
सर्वदैककरः शार्ङ्गी बीजापुरी गदाधरः ।।४१

२५१ सर्वमङ्गलमङ्गल्य:-समस्त मङ्गलों के लिए भी मङ्गलकारी; २५२ सर्वकारणकारणम्:-सम्पूर्ण कारणों के भी कारण; २५३ सर्वदैककर:-जिनका एक मात्र कर (शुण्डदण्ड) सब कुछ देने वाला है, वे; २५४ शार्ङ्गी:-शृङ्ग निर्मित धनुष धारण करने वाले; (यहाँ 'शार्ङ्गी' आदि नामों से उनके दस आयुधों को लक्षित कराया जाता है); २५५ बीजापुरी:-बिजोरा नीबू या अनार धारण करने वाले; २५६ गदाधर-गदाधारी ।।४१।।

(शुक्लाङ्गो लोकसुखदः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।
किरीटी कुण्डली हारी वनमाली शुभाङ्गदः ।।*

* यह श्लोक श्री भास्कर राय के खद्योतभाष्य में नहीं है, अतः इस प श्लोक गणना क्रम नहीं लिखा गया है ।

(क) शुक्लाङ्ग-गौरे शरीर वाले; (ख) लोकसुखद-लोगों को या लोकों को सुख देने वाले; (ग) सुतन्तु-सुन्दर तन्तु (संतति) रूप; (घ) तन्तुवर्धन-संतति-परम्परा की वृद्धि करने वाले; (ङ) किरीटी-किरीटधारी; (च) कुण्डली-कुण्डलधारी; (छ) हारी-हार से विभूषित या मनोहर; (ज) वनमाली-वनमालाधारी; (झ) शुभाङ्गद-सुन्दर बाजूबंद धारण करने वाले।

इक्षुचापधरः शूली चक्रपाणिः सरोजभृत्।
पाशी धृतोत्पलः शालिमञ्जरीभृत्स्वदन्तभृत् ॥४२.

२५७ इक्षुचापधरः-गन्ने का धनुष धारण करने वाले; २५८ शूली-शूलधारी; २५९ चक्रपाणिः-हाथ में चक्र धारण करने वाले; २६० सरोजभृतः-कमलधारी;

२६१ पाशीः-पाशधारी; २६२ धृतोत्पलः-उत्पलधारण करने वाले; २६३ शालिमञ्जरीभृत्:-धानकी बाल धारण करने वाले; २६४ स्वदन्तभृत्:-एक हाथ में अपने दाँत को लिए रहने वाले ॥४२

कल्पवल्लीधरो विश्वाभयदैककरो वशी।
अक्षमालाधरो ज्ञानमुद्रावान् मुद्गरायुधः ॥४३

२६५ कल्पवल्लीधरः-हाथ में कल्पलता ग्रहण करने वाले, २६६ विश्वाभयः-दैककरः-जिनका मुख्य कर सम्पूर्ण विश्वसे अभयदान करने वाला, अथवा एक हाथ में 'अभय' नामक मुद्रा धारण करने वाले, २६७ वशीः-सम्पूर्ण विश्व को वश में रखने वाले, २६८ अक्षमालाधरः-अक्षमालाधारी, २६९ ज्ञानमुद्रावान्:-ज्ञान की मुद्रा से युक्त, २७० मुद्गरायुधः-मुद्गर-नामक शस्त्रधारण करने वाले ॥४३

पूर्णपात्री कम्बुधरो विधृतालिसमुद्गकः।
मातुलिङ्गधरश्चूतकलिकाभृत् कुठारवान् ॥४४

२७१ पूर्णपात्रीः-पूर्णपात्रयुक्त यज्ञस्वरूप, अथवा अमृतसे भरेपात्रवाले, २७२ कम्बुधर-शङ्खधारी, २७३ विधृतालिसमुद्गकः-मदजाल से आई गण्डस्थल पर मँडराते हुए भ्रमर समूह से युक्त, २७४ मातुलिङ्गधरः-विजोरा नीबू लिए रहने वाले, २७५ चूतकलिकाभृत-आम्रमञ्जरीधारी, २७६ कुठारवान्:-कुठारधारी ॥४४

पुष्करस्थ स्वर्णघटीपूर्णरत्नाभिवर्षकः।
भारतीसुन्दरीनाथो विनायकरतिप्रियः ॥४५

२७७ पुष्करस्थस्वर्णघटीपूर्णरत्नाभिवर्षकः-शून्यमें गृहीत सुवर्णमय कलश से पूर्ण रत्नों की वर्षा करने वाले, २७८ भारतीसुन्दरीनाथः-सरस्वती, गौरी तथा लक्ष्मी के स्वामी ब्रह्मा, शिव और विष्णुरूप, २७९ विनायकरतिप्रियः-विनायक नाम वाले अपने गणों के साथ खेलने में रुचि रखने वाले ॥४५

महालक्ष्मी प्रियतमः सिद्धलक्ष्मीमनोरमः।
रमारमेशपूर्वाङ्गो दक्षिणोमामहेश्वरः ॥४६

२८० महालक्ष्मीप्रियतमः-महालक्ष्मी के प्रियतम (ये महालक्ष्मी विष्णु-पत्नी लक्ष्मी से भिन्न हैं, (ये गणेश की अपनी प्रिय बुद्धिरूपा हैं। सिद्धलक्ष्मी इनकी दूसरी पत्नी हैं), २८१ सिद्धलक्ष्मीमनोरमः-सिद्धलक्ष्मी के हृदय वल्लभ, २८२

रमारमेशपूर्वाङ्ग:-आवरण देवताओं में रमा और रमापति (लक्ष्मी तथा विष्णु) गणेशजी के पूर्वभाग में (सम्मुख) विराजमान होते हैं, इस लिए वे उक्त नाम से प्रसिद्ध हैं, २८३ दक्षिणोमामहेश्वर:-आवरण-देवताओं में उमा और महेश्वर को अपने दक्षिण भाग में स्थापित करने वाले ।।४६

महीवराहवामाङ्गो रतिकंदर्पपश्चिमः ।
आमोदमोदजननः संप्रमोदप्रमोदनः ।।४७

२८४ महीवराहवामाङ्ग:-पृथ्वी और वराह भगवान् को अपने वामाङ्ग (उत्तर दिशा) में रखने वाले, २८५ रतिकंदर्पपश्चिम:-रति और कामदेवको पीछे या पश्चिम दिशा में स्थापित करने वाले, २८६ आमोदमोदजननः ※-'आमोद' को मोद प्रदान करने वाले, २८७ सप्रमोदप्रमोदन:-को प्रमोद देने वाले ।।४७

समेधितसमृद्धिश्रीऋद्धिसिद्धिप्रवर्तकः ।
दत्तसौमुख्यसुमुखः कान्तिकंदलिताश्रयः ।।४८

२८८ समेधितसमृद्धिश्री:-समृद्धियुक्त श्री को संवर्धित करने वाले, २८९ ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तक:-ऋद्धि देवी में स्थित सिद्धि के प्रवर्तक, २९० दत्तसौमुख्यसुमुख-सुमुख को सुमुखता प्रदान करने वाले, २९१ कान्तिकंदलिताश्रय:-कान्तिदेवी के आश्रयस्थान को अंकुरित करने वाले, ।।४८

मदनावत्याश्रिताङ्घ्रिः कृत्तदौर्मुख्यदुर्मुखः ।
विघ्नसम्पल्लवोपघ्न सेवोन्निद्रमदद्रवः ।।४५

२९२ मदनावत्याश्रिताङ्घ्रि:-मदनावती देवी से सेवित चरण वाले, २९३ कृत्तदौर्मुख्यदुर्मुख:-दुर्मुखकीदुर्मुखताको काट फेंकने वाले, २९४ विघ्नसम्पल्लवोपघ्न:-विघ्नविस्तार के आश्रय, अथवा विघ्नविस्तार के निवारक, २९५ सेवोन्निद्रमदद्रव:-मदद्रवादेवी आलस्यरहित हो सदा जिनकी सेवा में जागरूक रहती हैं, वे ।।४९

विघ्नकृन्निघ्नचरणो द्राविणीशक्तिसत्कृतः ।
ताव्राप्रसन्ननयनो ज्वालिनोपालितैकदृक ।।५०

२९६ विघ्नकृन्निघ्नचरण:-विघ्नकृतने भक्तिभाव से जिनके चरणों को अपने अधीन करके रखा है, वे, २९७ द्राविणीशक्तिसत्कृत:-द्राविणी नामक शक्ति से सम्मानित, २९८ तीव्राप्रसन्ननयन:-तीव्रा नामक शक्ति के प्रति जिनके नेत्र प्रसन्नता से उत्फुल्ल रहते हैं, वे, २९९ ज्वालिनीपालितैकदृक्:-जिनकी मुख्य दृष्टि ज्वालिनी-शक्ति के सरक्षण में संलग्न है वे, ।।५०

मोहिनीमोहनो भोगदायिनीकान्तिमण्डितः ।
कामिनोकान्तवक्त्र श्रीरधिष्ठित वसुन्धरः ।।५१

३०० मोहिनीमोहन:-मोहिनी-शक्ति को भी मोहित करने वाले, ३०१ भोग दायिनी कान्तिमण्डित:-भोगदायिनीशक्ति की कान्ति से मण्डित चरणपादुका

---

२८६ ※ यहाँ आवरणमें स्थित युगलदेवी-देवों का वर्णन प्रस्तुत है-ऋद्धि और आमोद ये एक दम्पती हैं, समृद्धि और प्रमोद प्रमोद ये द्वितीय दम्पती हैं, सुमुख और कान्ति ये तृतीय दम्पति हैं, दुर्मुख और मदनावली (मदद्रवा)-ये चतुर्थ दम्पती हैं तथा विघ्न (विघ्नकृत) और द्राविणी-ये पञ्चम दम्पति हैं ।

वाले, ३०२ कामिनीकान्तवक्त्रश्री:-कामिनी या कामदायिनीनामक शक्ति सुन्दर मुख की शोभा के संवर्द्धक, ३०३ अधिष्ठितवसुंधर:- वसुंधरादेवी को अपने आधार पर प्रतिष्ठित करने वाले ।।५१

वसुंधरामदोन्नद्धमहाशङ्खनिधिप्रभु: ।
नमद्वसुमतीमौलिमहापद्मनिधिप्रभु: ।।५२

३०४ वसुंधरामदोन्नद्धमहाशङ्खनिधिप्रभु:- वसुंधरा नामक पत्नी के साथ आनन्द मग्न रहने वाले महाशङ्ख-नामक निधि के स्वामी, ३०५ नमद्वसुमतीमौलि-महापद्मनिधिप्रभु:- जिनके चरणों में वसुमती-नामक पत्नी अपना मस्तक झुकाती है, उन महापद्म नामक निधि के अधिपति ।।५२

सर्वसद्गुरुसंसेव्य: शोचिष्यकेशहृदाश्रय: ।
ईशानमूर्धा देवेन्द्रशिखा पवननन्दन: ।।५३

३०६ सर्वसद्गुरुसंसेव्य:-समस्तसद्गुरुओं के द्वारा सम्यकरूप से आराधनीय, ३०७ शोचिष्यकेशहृदाश्रय:-गार्हपत्य आदि पाँच अग्नियों के हृदय में ध्येयरूपसे विराजमान, ३०८ ईशानमुर्धा-भगवान् शंकर के माननीय, ३०९ देवेन्द्रशिखा-देवराज इन्द्र के आराध्य, ३१० पवननन्दन:-वायुको आनन्दित करने वाले, अथवा प्राणों के भी प्राण ।।५३

अग्रप्रत्यग्रनयनो दिव्यास्त्राणां प्रयोगवित् ।
ऐरावतादिसर्वाशावारणावरणप्रिय: ।।५४

३११ अग्रप्रत्यग्रनयन:-सूक्ष्म एवं नूतन दृष्टि वाले, ३१२ दिव्यास्त्राणां प्रयोगवित्-दिव्य अस्त्रों के प्रयोग को जानने वाले, ३१३ ऐरावतादि-सर्वाशावार-णावरणप्रिय:-खेल-खेल में ऐरावत आदि सम्पूर्ण दिग्गजों को ढँक लेना जिन्हें प्रिय लगता है, वे, ।।५४

वज्राद्यस्त्रपरीवारो गजचण्डसमाश्रय:: ।
जयाजयपरीवारो विजयाविजयावह: ।।५५

३१४ वज्राद्यस्त्रपरीवार:-वज्र आदि अस्त्रों तथा इन्द्र आदि दिक्पालों से आवृत, ३१५ गणचण्डसमाश्रय:-चण्ड आदि गणों के आश्रय, अथवा गणों में जो प्रचण्ड हैं, उनको भी बल या आश्रय देने वाले, (इसके पश्चात् आठ नामों द्वारा प्राणशक्तियों से गणेशजी की अभिन्नता बतलाते हैं । वे शक्तियाँ नौ हैं। उनके नाम इस प्रकार बतलाए हैं-जया, विजया, अजया, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, शोण्डी, अनन्ता, और मङ्गला। ये सब पीठ-शक्तियाँ कहलाती हैं। ३१६ जयाजय परिवार:-जया और अजया से घिरे हुये, ३१७ विजयाविजयावह:-विजया को विजय देने वाले ।५५

अजितार्चितपादाब्जो नित्यानित्यावतसित: ।
विलासिनीकृतोल्लास. शौण्डीसौन्दर्यमण्डित: ।।५६

३१८ अजितार्चितपादाब्ज:-अपराजिता शक्ति से पूजित चरणारविन्द वाले, ३१९ नित्यानित्यावतसित:-नित्या शक्ति ने जिनके चरणों को अपना शिरोभूषण बना रखा है, वे, ३२० विलासिनीकृतोल्लास:-विलासिनीकी सेवा से उल्लसित होने

वाले, ३२१ शौण्डीसौन्दर्यमण्डित:-शौण्डी-नामक शक्ति के सौन्दर्य से मण्डित ।।५६

अनन्तानन्तसुखद: सुमङ्गलसुमङ्गल: ।
इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिनिषेवित: ।।५७

३२२ अनन्तानन्तसुखद:-अनन्ता नामक शक्ति को अनन्त सुख देने वाले, ३२३ सुमङ्गलसुमङ्गल:-जिस पीठ पर मङ्गला नामक शक्ति विद्यमान है, उसका नाम 'सुमङ्गल' है। ऐसा सुमङ्गलपीठ जिनके कारण परम मङ्गलमय होता है, वे गणेशजी 'सुमङ्गल-सुमङ्गल' हैं, ३२४ इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिनिषेवित:-इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति तथा क्रिया शक्ति से सेवित ।।५७

सुभगासंश्रितपदो ललिताललिताश्रय: ।
कामिनीकामन: काममालिनीकेलिलालित: ।।५८

३२५ सुभगासंश्रितपद:-सुभगादेवी के द्वारा सेवित चरणकमलवाले, ३२६ ललिताललिताश्रय:-ललितादेवी के मनोरम आश्रय, ३२७ कामिनीकामना:- कामिनी या कामकला-नामक शक्ति की कामना रखने वाले, ३२८ काममालिनीकेलिलालित:-कामेशी अथवा काममालिनी-नामक शक्ति की क्रीडाओं द्वारा प्रसन्न किए गए ।।५८

सरस्वत्याश्रयो गौरीनन्दन: श्रीनिकेतन: ।
गुरुगुप्तपदो वाचासिद्धो वागीश्वरीपति: ।।५९

३२९ सरस्वत्याश्रय:-सरस्वती (वाग्देवता) के आश्रय, ३३० गौरीनन्दन:-पार्वती देवी को आनन्द प्रदान करने वाले, ३३१ श्रीनिकेतन:-लक्ष्मी या शोभा के आगार, ३३२ गुरुगुप्तपद:-गणक्रोड आदि गुरुओं द्वारा गोपित पद वाले, ३३३ वाचासिद्ध:-जिनकी भक्ति से वाक्-सिद्धि प्राप्त होती है, वे, ३३४ वागीश्वरी अर्थात् नकुली-नामक शक्ति के प्रियतम ।।५९

नलिनीकामुको वामारामो ज्येष्ठामनोरम: ।
रौद्रीमुद्रितपादाब्जो हुम्बीजस्तुङ्गशक्तिक: ।।६०

३३५ नलिनीकामुक:-नलिनी अर्थात् सुरापगा नामक शक्ति के प्राणवल्लभ, ३३६ वामाराम:-वामा नामक शक्ति जिनकी रामा अर्थात् प्रिया हैं, वे, ३३७ ज्येष्ठा-मनोरम:-ज्येष्ठा-नामक शक्ति जिनकी मनोरमा हैं, वे, ३३८ रौद्रीमुद्रितपादाब्ज:-रौद्री नामक शक्ति जिनके चरणारविन्दों को अपनी अञ्जलि में बाँधे रखती हैं, वे, ३३९ हुम्बीज:-'वक्रतुण्डाय हुम्':-इस षडक्षर मन्त्र का अन्तिम वर्ण जो 'हुम्' है, वही समस्त पुरुषार्थों का बीज (कारण) है, अतएव भगवान् गणपति 'हुँ बीज' नाम से प्रसिद्ध हैं, ३४० तुङ्गशक्तिक:-उच्चशक्ति से सम्पन्न, अथवा, वक्रतुण्ड मन्त्र में जो 'हुम्' शब्द है, यही उक्त गणेश मन्त्र की शक्ति है। इसलिए वे उक्त नाम से प्रसिद्ध हैं ।।६०

विश्वादिजननत्राण: स्वाहाशक्ति: सकीलक: ।
अमृताब्धिकृतावासो मदघूर्णितलोचन: ।।६१

३४१ विश्वादिजननत्राण:-विश्व के आदिभूत हिरण्यगर्भ के जन्म और पालन जिनसे होते हैं, वे, ३४२ स्वाहाशक्ति:- स्वाहा' जिनकी शक्ति है, वे, ३४३ सकीलक:-कीलक युक्त, ३४४ अमृताब्धिकृतावास:-सुधासिन्धु में निवास करने वाले,

३४५ मदघूर्णितलोचनः-सुधापान के मद से अथवा गण्डस्थल से झरते हुए मदसे घूरते हुए नेत्रवाले ।।६१

उच्छिष्टगण उच्छिष्टगणेशो गणनायकः ।
सार्वकालिकसंसिद्धिर्नित्यशैवो दिगम्बरः ।।६२

३४६ उच्छिष्टगणः-उत्कृष्ट और शिष्ट गणों के स्वामी, ३४७ उच्छिष्ट-गणेशः-(उच्छिष्टे नामरूपं च) इत्यादि अथर्ववेदीय मन्त्रों के समूह से प्रतिपाद्य ईश्वर, अथवा सतत मोदक-भक्षण के कारण उक्त नाम से प्रसिद्ध गणेशः ३४८ गणनायकः-जिनके गुणों की गणना भक्तों द्वारा होती रहती है, वे, ३४९ सार्वकालिकसंसिद्धिः-जिनकी सिद्धियाँ सब समय बनी रहती हैं, वे, ३५० नित्यशैवः-सदाशिव का चिन्तन करने वाले, ३५१ दिगम्बर दिशाओं को ही वस्त्र बनाने वाले, ।।६२

अनपायोऽनन्त दृष्टिरप्रमेयोऽजरामरः ।
अनाविलोऽप्रतिरथो ह्यच्युतोऽमृतमक्षरम् ।।६३

३५२ अनपायः-अविनाशी, ३५३ अनन्तदृष्टिः-असीम ज्ञान-शक्ति से सम्पन्न, ३५४ अप्रमेयः-वाणी, मन एवं ज्ञानेन्द्रियों से अगम्य होने के कारण प्रमाणातीत, ३५५ अजरामरः-जरा और मृत्यु से रहित, ३५६ अनाविलः-कालुष्यरहित, ३५७ अप्रतिरथः-प्रतिद्वन्द्वी से शून्य, ३५८ अच्युतः-मर्यादा से कभी च्युत न होने वाले, अथवा श्रीकृष्ण से अभिन्न, ३५९ अमृतम्-अमृत या मोक्ष स्वरूप, ३६० अक्षरम्-व्यापक अथवा अक्षय ।।६६

अप्रतर्क्योऽक्षयोऽजय्योऽनाधारोऽनामयोऽमलः ।
अमोघसिद्धिरद्वैतमघोरोऽप्रमिताननः ।।६४

३६१ अप्रतर्क्यः-जिसका वेदों द्वारा अनुमोदन न हो, ऐसे तर्क से अगम्य, ३६२ अक्षयः-क्षयरहित ३६३ अजय्यः-जिन्हें जीता न जा सके, ऐसे, ३६४ अनाधारः-स्वयं सबके आधार होने के कारण अपने लिए आधार से रहित, ३६५ अनामयः-रोगरहित, ३६६ अमलः-मलिनता से शून्य, ४६७ अमोघसिद्धिः-अमोघ (अथवा) सिद्धि वाले, ३६८ अद्वैतम्-द्वैत प्रपञ्च से रहित, ३६९ अघोरः-शिवरूप, ३७० अप्रमिताननः-असंख्य मुख वाले ।।६४

अनाकारोऽब्धिभूम्यग्निबलघ्नोऽव्यक्तलक्षणः ।
आधारपीठ आधार आधाराधेयवर्जितः ।।८५

३७१ अनाकारः-निराकार परमात्मा, ३७२ अब्धिभूम्यग्निबलघ्नः-जलधिया जलकी शक्ति क्लेदन, भूमि की शक्ति स्तम्भन तथा अग्नि की शक्ति दहन का जिन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वे भूमि, जल और अग्नि की शक्ति को प्रतिहत कर देने वाले, ३७३ अव्यक्तलक्षणः-वहिर्मुख मानवों की बुद्धि में जिनके स्वरूप-लक्षण तथा तटस्थ-लक्षण की अभिव्यक्ति नहीं होती, वे, ३७४ आधारपीठः-पृथ्वी से लेकर शिवपर्यन्त छत्तीस आधार भूत तत्वों के भी आश्रय, ७५ आधारः-अ-विष्णु तथा आ-ब्रह्मा को भी धारण करने वाले, ३७, आधाराधेयवर्जितः-आधार-आधेय-भाव से रहित, अद्वैतस्वरूप ।।६५

आखुकेतन आशापूरक आखुमहारथः ।
इक्षुसागरमध्यस्थ इक्षुभक्षणलालसः ।।६६

३७७ आखुकेतनः-मूषकचिह्नसेयुक्त ध्वज वाले, ३७८ आशापूरकः-सर्वव्यापीहोनेसे दिशाओं के पूरक अथवा सबकी आशा पूर्ण करने वाले ३७९ आखुमहारथः-मूषकरूपी महान् रथ (वाहन) से युक्त, ३८० इक्षुसागरमध्यस्थ.-ईखके सागर में विराजमान, ३८१ इक्षुभक्षण लालसः-ईख खाने की इच्छा रखने वाले ।।६६

इक्षुचापातिरेकश्रीरिक्षुचापनिषेवितः ।
इन्द्रगोपसमानश्रीरिन्द्रनीलसमद्युतिः ।।६७

३८२ इक्षुचापातिरेकश्रीः-इक्षुधन्वा (कामदेव) से भी अधिक सौन्दर्य श्रीसेसम्पन्न, ३८३ इक्षुचापनिषेवितः-इक्षुमय चाप की अधिष्ठात्री देवी अथवा कामदेव से सेवित, २८४ इन्द्रगोपसमानश्रीः-इन्द्रगोप (बीरबहूटी नामक कीट) के समान अरुण कान्तिवाले, ३८५ ※इन्द्रनीलसमद्युतिः-इन्द्रनील मणि के समान श्यानकान्ति वाले ।।६७

※ कामनाभेद से भिन्न रूप-रंग में गणेशजी का ध्यान होता है। अथवा भिन्न-भिन्न युगों में अवतार लेकर वे अरुण एवं श्यामकान्ति धारण करते हैं। (खद्योत-भाष्य)

इन्दीवरदलश्याम इन्दुमण्डलनिर्मलः ।
इध्मप्रिय इडाभाग इराधामेन्दिराप्रियः ।।६८

३८६ इन्दीवरदलश्यामः-नील-कमल के समाश्याम, ३८७ इन्दुमण्डलनिर्मलः-चन्द्रमण्डल के समान गौर कान्तिवाले ३८८ इध्मप्रियः-अग्निस्वरूपसे काष्ठ या इंधन के प्रेमी, ३८९ इडाभागः-ऋत्विक् और यजमान आदि के रूप में यज्ञकर्म में भाग लेने वाले, ३९० इराधामा-पृथ्वी में अन्तर्यामीरूपसे अवस्थित, ३९१ इन्दिराप्रियः-लक्ष्मी द्वारा पूज्य, अथवा विष्णुरूपसे लक्ष्मी के प्रियतम ।।६८

इक्ष्वाकुविघ्नविध्वंसी इतिकर्तव्यतेप्सितः ।
ईशानमौलिरीशान ईशानसुत ईतिहा ।।६९

३९२ इक्ष्वाकुविघ्नविध्वंसी-राजादूक्ष्वाकुकेविघ्न का नाश करने वाले, ३९३ इतिकर्तव्यतेप्सितः-इति कर्तव्यता (क्रतुकी अङ्गभूत सामग्री) की अपेक्षा रखकर यजमान की मनोवाञ्छा पूर्ण करने वाले, ३९४ ईशानमौलि.-नरेश, भूतेश और सुरेश आदि ईशानों (ईश्वरों) के शिरोमणि, ३९५ ईशानः-ईशों को जीवन देने वाले, ४९६ ईशानसुतः-ईश्वरपुत्र, ३९७ इतिहाअतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक जनित उपद्रव, शलभ, शुक आदि पक्षी, स्वमण्डल तथा परमण्डल-इनसबसे प्राप्त होने वाले भय को 'ईति-भीति' कहते हैं, उस 'ईति-भीति' के नाशक ।।६९

ईषणात्रयकल्पान्त ईहामात्रविवर्जितः ।
उपेन्द्र उडुभृन्मौलिरुण्डेरकबलिप्रियः ।।७०

३९८ ईषणात्रयकल्पान्तः-लोकैषणा, पुत्रैषणा और वित्तैषणा-इन त्रिविध एषणाओं के लिए प्रलयंकर, अथवा वैराग्यदायक, ३९९ ईहामात्रविवर्जिता-चेष्टामात्रसे शून्य, चित्स्वरूप, ४०० उपेन्द्रः-कश्यप और अदितिके यहाँ अवतीर्ण

महोत्कट विनायक, अथवा वामन से अभिन्न, ४०१ उडुभृन्मौलि:-नक्षत्र-पालक चन्द्रमा को भालदेश में धारण करने वाले, ४०२ उण्डेरकबलिप्रिय:-गोल-गोल मिष्टान्न के उपहार को प्रिय मानने वाले ।।७०

उन्नतानन उत्तुङ्ग उदारत्रिदशाग्रणी: ।
ऊर्जस्वानूष्मलमद ऊहापोहदुरासद: ।।७१

४०३ उन्नतानन:-उत्कृष्ट ब्रह्मा आदि देवों को प्राणवान् करने वाले, ४०४ उत्तुङ्ग:-वराह-रूपधारी भगवान् की दाढ़ से तुङ्गा-नामवाली एक नदी प्रकट हुई, जिससे वे भगवान् 'उत्तुङ्ग' कहलाए। उनसे अभिन्न होने के कारण गणेशजी का भी नाम 'उत्तुङ्ग' है, ४०५ उदारत्रिदशाग्रणी:-उदार देवताओं में श्रेष्ठ, ४०६ ऊर्जस्वान्-तेजस्वी, ४०७ ऊष्मलमज:-गण्डस्थल से गर्म-गर्म मदजल बहाने वाले, ४०८ ऊहापोहदुरासद:-ऊह (वितर्क) और अपोह (उसके बाध) से दुष्प्राप्य ।।७१

ऋग्यजुस्सामसम्भूतिर्ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तक: ।
ऋजुचित्तैकसुलभ ऋणत्रयविमोचक: ।।७२

४०९ ऋग्यजुस्सामसम्भूति:-अपने नि:श्वास से ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद को प्रकट करने वाले, ४१० ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तक:-राज्य-सम्पति तथा अणिमा आदि सम्पत्तियों को देने वाले, ४११ ऋजुचित्तैकसुलभ:-सरलचित्त-निर्मल मन से ही एक मात्र सुलभ होने वाले, ४१२ ऋणत्रयविमोचक:-देव-ऋण, ऋषि-ऋण और पितृ-ऋण-इन तीनों से छुटकारा दिलाने वाले ।।७२

लुप्तविघ्न: स्वभक्तानां लुप्तशक्ति: सुरद्विषाम् ।
लुप्तश्रीर्विमुखार्चानां लूता विस्फोटनाशन: ।।७३

४१३ स्वभक्तानां लुप्तविघ्न:-अपने भक्तजनों का विघ्न नष्ट करने वाले, ४१४ सुरद्विषां लुप्तशक्ति:-देवद्रोही दैत्यों की शक्ति नष्ट करने वाले, ४१५ विमुखार्चानां लुप्तश्री-अपनी पूजा से विमुख या विरुद्ध रहने वालों की धन-सम्पित्ति का नाश करने वाले, ४१६ लूताविस्फोटनाशन:-मकड़ी और फोड़े-फुंसी आदि रोगों का नाश करने वाले ।।७३

एकारपीठमध्यस्थएक पादकृतासन: ।
एजिताखिलदैत्यश्रीरेधिताखिलसंश्रय: ।।७४

४१७ एकारपीठमध्यस्थ:–त्रिकोणचक्र के मध्य भाग में विराजमान, ४१८ एकपादकृतासन:-काशी में एक पैर खड़े रहने वाले, ४१९ एजिताखिलदैत्यश्री:-समस्त असुरों की राज्य लक्ष्मी को कम्पित कर देने वाले, ४२० एधिताखिलसंश्रय;-अपनी शरण लेने वाले भक्तों की श्रीवृद्धि करने वाले ।।७४

ऐश्वर्यनिधिरैश्वर्यमैहिकामुष्मिकप्रद: ।
ऐरम्मदसमोन्मेष ऐरावतनिभानन: ।।७५

४२१ ऐश्वर्यनिधि:–ऐश्वर्य के आधार अथवा भक्तों के यहाँ ऐश्वर्य स्थापित करने वाले, ४२२ ऐश्वर्यम्:–ईश्वर कोटि के पुरुषों में ऐश्वर्यरूपा अणिमा आदि विभूतिरूप, ४२३ ऐहिकामुष्मिकप्रद:-लौकिक और पारलौकिक सुख देने वाले, ४२४ ऐरम्मदसमोन्मेष:—जिनकी दृष्टि का उन्मेष (खोलना) विद्युत के समान

प्रकाशमान है, वो, ४२५ ऐरावतनिभानन:-ऐरावत हाथी के समान मुखवाले ।।७५

ओकारवाच्य ओंकार ओजस्वानोषधीपति: ।
औदार्यनिधिरौद्धत्यधुर्य औन्नत्यनिस्स्वन: ।।७६

४२६ ओंकारवाच्य:—ओंकार अर्थात् प्रणव के वाच्यार्थरूप, ४२७ ओंकार:—ओंकार नाम वाले, ४२८ ओजस्वान्—शौर्य और उत्कर्ष के कारणभूत तेज से सम्पन्न, ४२९ ओषधीपति:—ओषधियों के स्वामी चन्द्रमारूप, ४३० औदार्यनिधि:—उदारता के सिन्धु, ४३१ औद्धत्यधुर्य:—अपने भक्तों पर कृपा करने के लिए उनके सामने अपना उत्कर्ष प्रकट करने में श्रेष्ठ, २३२ औन्नत्यनिस्स्वन:—सबकी अपेक्षा उच्चस्वर से गर्जना करने वाले ।।७६

अङ्कुश: सुरनागानामङ्कुश: सुरविद्विषाम् ।
अ: समस्तविसर्गान्तपदेषु परिकीर्तित: ।।७७

४३३ सुरनागानामंकुश:—देवलोक, मर्त्यलोक और पाताल लोक-तीनों को अपने नियन्त्रण में रखने वाले, ४३४ सुरविद्विषामकुश:-देवताओं और विद्वानों के द्वेषियों को दण्डित करने वाले, ४३५ समस्तविसर्गान्तपदेषु परिकीर्तित, अ:-'अ' से लेकर 'क्ष' पर्यन्त जो ५१ अक्षर हैं, उनके अन्त में विसर्ग लगाने पर जिसका उच्चारण होता है, वह 'अ:' गणेशजी का एक नाम है ।।७७

कमण्डलुधर: कल्प: कपर्दी कलभानन: ।
कर्मसाक्षा कमकर्ता कर्माकर्मफलप्रद: ।।७८

४३६ कमण्डलुधर:—कमण्डलु धारण करने वाले, अथवा सूंड से अमृत कलश धारण करने वाले, ४३७ कल्प:—प्रलयकालस्वरूप, अथवा निर्माण मे समर्थ, ४३८ कपर्दी-कौड़ी अथवा जटाजूट धारण करने वाले, ४३९ कलभानन:-नाद, कान्ति और प्राणन शक्ति से सम्पन्न, ४४० कमसाक्षी-अदृष्टकर्मों के भी साक्षी, ४४१ कर्मकर्त्ता कर्मठ पुरुषों के अन्त:प्रेरक होने के कारण स्वयं ही कर्म करने वाले, ४४२ कर्माकर्मफ़लप्रद:—स्वर्ग और मोक्ष रूप फल देने वाले ।।७८

कदम्बगोलकाकार: कूष्माण्डगणनायक: ।
कारुण्यदेह: कपिल: कथक: कटिसूत्रभृत् ।।७९

४४३ कदम्बगोलकाकार:—समस्त नाडियों का जो उद्गम-स्थान है, वहाँ कदम्ब-पुष्प के समान गोल आकार का कोई देवता है, जो गणेशजी से अभिन्न है, ४४४ कुष्माण्डगणनायक:—दुष्ट ग्रहों के नायक (उन्हें नियन्त्रण में रखने वाले), ४४५ कारुण्यदेह:—करुणामूर्ति, ४४६ कपिल:—कपिलमुनि स्वरूप, ४४७, कथक:—सम्प्रदायप्रवर्तक, ४४८ कटिसूत्रभृत्:—काञ्ची धारण करने वाले ।।७९

खर्व: खड्गप्रिय: खड्गखान्तान्तस्थ: खनिमल: ।
खल्वाटश्रृङ्गनिलय: खटवाङ्गी खदुरासद: ।।८०

४४९ खर्व:—वामनरूप, ४५० खड्गप्रिय: खग (तलवार या गैंडा) जिन्हें प्रिय है, ४५१ खड्गखान्तान्तस्थ:—खड्ग-शब्दगत खकार से परे जो ड का है, उससे परे जो गकार है, वह गणेशजी का बीजाक्षर है, उसमें विद्यमान, ४४२ खनिर्मल:-आकाश की भाँति सर्वगत होते हुए निर्लिप्त, ४४३ खल्वाटश्रृङ्गनिलय:—वृक्ष-

विहीन पर्वत के शिखर पर निवास करने वाले ४५४ खट्वांगी—खटवांग नाम से प्रसिद्ध अस्त्र धारण करने वाले ४५५, खदुरासद:—आकाश की भांति पकड़ में न आ सकने वाले ।।८०

गुणाढ्यो गहनो गस्थो गद्यपद्यसुधार्णव: ।
गद्यगानप्रियो गर्जो गीतगीर्वाणपूर्वज: ।।८१

४५६ गुणाढ्य:—अनन्त कल्याणमय गुणगण से सम्पन्न, ४५७ गहन:—जहाँ जाना या पहुँचना सम्भव न हो सके, वो; ४५८ गस्थ:—अपने बीजस्वरूप गकार मे स्थित, ४५९ गद्यपद्यसुधार्णव:—गद्य-पद्य में काव्य रसामृत के सागर, ४६० गद्यगानप्रिय:—गद्य-सामगान के प्रेमी, ४६१ गर्ज:—मेघगर्जन स्वरूप, ४६२ गीतगीर्वाण पूर्वज:—नाद से गीत आदि शब्द प्रकट हुए हैं और नाद के अर्थ से देवता आदि. अत: नाद और नादार्थ स्वरूप होने के कारण गीत और देवताओं के पूर्वज ।।८१

गुह्याचाररतो गुह्यो गुह्यागमनिरूपति: ।
गुहाशयो गुहाब्धिस्थो गुरुगम्यो गुरोर्गुरु: ।।८२

४६३ गुह्याचाररत:-हृदयगुहा में प्रविष्ट जीवात्मा और परमात्मा के चिन्तन में लगे हुए अन्तर्मुखसाधक पर सन्तुष्ट रहने वाले, ४६४ गुह्य:-एकान्त में जानने योग्य, अथवा गुह—कार्तिकेय के हितकारी ४६५ गुह्यागमनिरूपित:—गुह्य अर्थात् एकान्तवेद्य होने के कारण 'गुह्यागमनिरूपित' के नाम से प्रसिद्ध, ४६६ गुहाशय:—हृदय गुहा में शयन करने वाले अन्तर्यामी पुरुष; ४६७ गुहाब्धिस्थ:-अव्याकृत आकाश गूढ़ और अगाध होने के कारण गुहाब्धि के तुल्य है, उसमें विराजमान, ४६८ गुरुगम्य:-गुरु के बताए हुए योग या उपाय से प्राप्तव्य; ४६९ गुरोर्गुरु:-ब्रह्मा आदि को भी वेद का ज्ञान देने वाले होने के कारण गुरु के भी गुरु ।।८२

घण्टाघर्घरिकामाली घटकुम्भो घटोदर: ।
(ङकारवाच्योङकारोङकाराकारशुण्डभृत् ।।*)
चण्डश्चण्डेश्वरसुहृच्चण्डीशश्चण्डविक्रम: ।।८३

४७० घण्टाघर्घरिकामाली—घण्टा की भांति मनोहर शब्द करने वाली—किंकिणी को 'घर्घरिका' कहते हैं। बालोचित क्रीड़ा के समय उसकी माला धारण करने वाले; ४७१ घटकुम्भ :— उलटे रखे हुए दो घड़ों के समान दो कुम्भस्थल वाले; ४७२ घटोदर : — घटके समान विशाल उदर वाले; ४७३ चण्ड-प्रचण्ड पराक्रमी; ४७४ चण्डेश्वर सुहृत्-शिव-पार्षद् चण्डेश्वर के सखा, ४७५ चण्डीश:—चण्डीनाथ शिव; ४७६ चण्डविक्रम:— प्रत्यन्त क्रोधशील दुष्टों पर आक्रमण करके उन्हें वश में करने वाले; ।८३।

चराचरपतिश्चिन्तामणिचर्वणलालस: ।
छन्दश्छन्दोवपुश्छन्दोदुर्लक्ष्यश्छन्दविग्रह: ।।८४

*१ ङकारवाच्य :— ङकार के वाच्यार्थ स्वरूप; २ ङकार :— ङकार अक्षररूप; ३ ङकाराकार शुण्डभृत् 'ङ' के आकार की सूँड धारण करने वाले ।

४७७ चराचरपति :— स्थावर—जङ्गम जगत् के स्वामी; ४७८ चिन्तामणिचर्वणलालस :— अपनी अतिशय उदारता के कारण चिन्तामणि, कामधेनु और कल्पवृक्ष के गर्व को चूर्ण करने की लालसा वाले; ४७९ छंदः— गायत्री आदि छंदःस्वरूप; ४८० छन्दोवपुः-छन्दोमय शरीर वाले, ४८१ छन्दो दुर्लक्ष्यः— वेद से भी कठिनतापूर्वक लक्षित होने वाले; ४८२ छन्दविग्रहः— अपनी इच्छा के अनुसार या भक्तों की भावना के अनुकूल अवतार-शरीर धारण करने वाले ।।८४

जगद्योनिर्जगत्साक्षी जगदीशो जगन्मयः ।
जपो जपपरो जप्यो जिह्वासिंहासनप्रभुः ।।८५

४८३ जगद्योनिः— जगत् के कारण; ४८४ जगत्साक्षी—जगत् के साक्षी या द्रष्टा; ४८५ जगदीशः— जगत् के स्वामी या रक्षक; ४८६ जगन्मयः— जगत्स्वरूप या जगत् के अधिष्ठान; ४८७ जप :— जपकर्म रूप; ४८८ जपपरः— जपकर्ता; ४८९ जप्यः— जपनीय मन्त्र रूप; ४९० जिह्वासिंहासनप्रभुः— जिनके नाम कीर्तन के समय भक्त की जिह्वारूपी सिंहासन पर विराजमान रहते हैं; वे ।।८५

झलज्झलोल्लसद्दानझङ्कारिभ्रमराकुलः ।
टंकारस्फारसंरावष्टंकारिमणिनपुरः ।।८६

४९१ झलज्झल्लसद्दानझङ्कारिभ्रमराकुल :— कानों के हिलने से उड-उड कर मद जल के आस-पास झङ्कार-रव करने वाले भ्रमरों से व्याप्त; ४९२ टंकार स्फारसंराव :- कांसे की घण्टी या थाली के बजने से होने वाले रण-रणात्मक रव के समान जिनके आभूषण की झनकार होती हैं, वे; ४९३ टंकारिमणिनूपुरः—बजते हुए रत्नमय पाद कटक की ध्वनि फैलाने वाले ।।८६

ठद्वयीपल्लवान्तःस्थसर्वमन्त्रैकसिद्धिदः ।
डिण्डिमुण्डो डाकिनीशो डामरो डिण्डिमप्रियः ।।८७

४९४ ठद्वयीपल्लवान्तःस्थसर्वमन्त्रैकसिद्धिदः— सम्पूर्णस्वाहान्त मन्त्रों के एकमात्र सिद्धिदाता; ४९५ डिण्डिमुण्ड :- उलटकर रखे हुए नगाड़े के समान कुम्भ-स्थल वाले; ४९६ डाकिनीशः- योगिनियों के ईश्वर; ४९७ डामरः- डामर नामक तन्त्र स्वरूप; ४९८ डिण्डिमप्रिय :- डिण्डिम-घोष या दुन्दुभि की ध्वनि से प्रसन्न होने वाले ।।८७

ढक्कानिनादमुदितो ढौको ढुण्ढिविनायकः ।
तत्त्वानां परमं तत्त्वं तत्त्वंपदनिरूपितः ।।८८

४९९ ढक्कानिनादमुदित :- पटहध्वनि से प्रसन्न; ५०० ढौक :- सर्वगत; अथवा सर्वज्ञ; ५०१ ढुण्ढिविनायक :- विशिष्ट नायक के रूप में अन्वेषणीय; ५०२ तत्त्वानां परम तत्त्वम्-तत्त्वों में परम (छब्बीसवें) तत्त्वरूप; ५०३ तत्त्वंपदनिरूपितः- 'तत्पदार्थ' और 'त्वम्-पदार्थ' की एकता द्वारा निरूपित ।।८८

तारकान्तरसंस्थानस्तारकस्तारकान्तकः ।
स्थाणुः स्थाणुप्रियः स्थाता स्थावरं जङ्गमं जगत् ।।८९

५०४ तारकान्तरसंस्थान:- आंख की पुतली में चिन्तन करने योग्य; ५०५ तारकः- प्रणव की भांति भवसागर से पार करने वाले; ५०६ तारकान्तकः-

तारकासुर का संहार करने वाले; ५०७ स्थाणु:- सुस्थिर; सर्वथा अकम्पित; ५०८ स्थाणु प्रिय:- शिव के प्रिय पुत्र; ५०९ स्थाता—युद्ध में दृढ़तापूर्वक डटे रहने वाले; ५१० स्थावरं जङ्गमं जगत्-चराचर जगत्स्वरूप ।।८९

दक्षयज्ञप्रमथनो दाता दानवमोहनः ।
दयावान् दिव्यविभवो दण्डभृद्दण्डनायकः ।।९०

५११ दक्षयज्ञप्रमथन:- दक्षप्रजापति के यज्ञ का विध्वंस करने वाले शिवरूप; ५१२ दाता-दानी अथवा शोधक*-पतितपावन; ५१३ दानव मोहन :- दानवों को मोहित (तत्त्वविमुख) करने वाले; ५१४ दयावान्-दयालु; ५१५ दिव्यविभव:- लक्ष्मी की प्राप्ति कराने वाले; अथवा दिव्य वैभव से सम्पन्न; ५१६ दण्डभृत्-दण्डनीति के पालक; ५१७ दण्डनायक :- दण्ड के प्रवर्तक ।९०।

* शोधनार्थक 'दै' धातु से 'दाता' बनता है।

दन्तप्रभिन्न भ्रमालो दैत्यवारणदारणः ।
दंष्ट्रालग्नद्विपघटों देवार्थनृगजाकृति ।।९१

५१८ दन्तप्रभिन्नाभ्रमाल:-सिर हिलाने मात्र से दन्ताघात के द्वारा बादलों के द्वारा बादलों की पंक्ति को छिन्न-भिन्न कर देने वाले; ५१९ दैत्यवारणदारण:- दैत्यों को रोकने और विदीर्ण करने वाले; ५२० दंष्ट्रालग्नद्विपघट :- जिनके दाढ़ के एक देश में भी शत्रुओं के हाथियों का समुदाय संलग्न है: ऐसे; ५२१ देवार्थ नृगजाकृति :- देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए मनुष्य और हाथी की आकृति स्वीकार करने वाले ।९१।

धनधान्यपतिर्धन्यो धनदो धरणीधरः ।
ध्यानैकप्रकटो ध्येयो ध्यानं ध्यानपरायणः ।।९२

५२२ धनधान्यपति:- धन और धान्य के स्वामी तथा दाता; ५२३ धन्य:- धन से सम्पन्न एवं पुण्यवान्; ४२४ धनद:- धन के दाता; अथवा कुबेर स्वरूप; ५२५ धरणीधर:- शेषनाग तथा आदि वराह के रूप में पृथ्वी को धारण करने वाले; ५२६ ध्यानैक प्रकट:- एक मात्र ध्यान में ही प्रकट होने वाले; ५२७ ध्येय:- ध्यान में द्रष्टव्य; ५२८ ध्यानम्-ध्यान स्वरूप; ५२९ ध्यान परायण:- ध्यान में संलग्न रहने वाले ।।९२

नन्द्यो नन्दिप्रियो नादो नादमध्यप्रतिष्ठितः ।
निष्कलो निर्मलो नित्यो नित्यानित्यो निरामयः ।।९३

५३० नन्द्य:- आनन्दनीय; ५३१ नन्दिप्रिय:- नन्दिकेश्वर के प्रिय; ५३२ नाद:- नादानुसंधान से प्राप्त होने वाले नाद स्वरूप; ५३३ नाद मध्य प्रतिष्ठित:- नाद में प्रतिष्ठित; ५३४ निष्कल:- अवयवरहित; ५३५ निर्मल:- दोषरहित; ५३६ नित्य:- नाशरहित; ४३८ नित्यानित्य:- आकाश और पृथ्वी आदि नित्य एवं अनित्यस्वरूपधारण करने वाले; ५३८ निरामय:- अविद्यारूपी महारोग से शून्य ।।९३

परं व्योम परं धाम परमात्मा परं पदम् ।
परात्परः पशुपतिः पशुपाशविमोचकः ।।९४

५३९ परं व्योम-अव्याकृत आकाश या नित्य धाम स्वरूप, ५४० परं धाम-ज्योति के ज्योति:स्वरूप, ५४१ परमात्मा सम्पूर्ण जीवों से उत्कृष्ट पा॥ पुरुषोतम; ५४२ परं पदम्:-परमपद रूप, ५४३ परात्पर:- पर से भी पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश से भी उत्तम, ५४४ पशुपति:- ब्रह्मा से लेकर कीटपर्यन्त समस्त जीवों के पालक, ५४५ पशुपाश विमोचक:- पशुओं (जीवों) को विविध पाश (बन्धनों) से छुटकारा दिलाने वाले ।८४।

पूर्णानन्द: परानन्द: पुराणपुरुषोत्तम: ।
पद्मप्रसन्ननयन: प्रणताज्ञानमोचन: ।९५।

५४६ पूर्णानन्द :- क्रिया, कर्ता और कर्म के भेद से रहित परिपूर्ण सुख-स्वरूप, ५४७ परानन्द-भूलोक से लेकर शतगुणोत्तर बढ़े ब्रह्मलोक पर्यन्त के सम्पूर्ण आनन्दों को नीचा करके सबसे उत्कृष्ट परमानन्द-महा सुख स्वरूप, ५४८ पुराण पुरुषोत्तम :- क्षर-अक्षर से भी उत्तम एवं अनादि होने के कारण पुरुषोत्तम, ५४९ पद्मप्रसन्ननयन :- प्रफुल्ल कमल के समान उल्लासयुक्त नेत्रोंवाले, ५५० प्रणताज्ञान-मोचन :- शरणागत सेवकों को तत्त्व ज्ञान देकर उनके अज्ञान का निवारण करने वाले ।९५।

प्रमाणप्रत्ययातीत: प्रणतार्तिनिवारण: ।
फलहस्त: फणिपति: फेत्कार: फाणितप्रिय: ।९६।

५५१ प्रमाण प्रत्ययातीत: प्रमाणजनित प्रतीतियों से ऊपर उठे हुए नित्य ज्ञानैकस्वरूप, ५५२ प्रणतार्तिनिवारण :- प्रणतजनों को पीड़ा को दूर करदेने वाले, ५५३ फलहस्त: भक्तजनों को अविलम्ब फल देने के कारण मानों समस्त फलों को हाथ में ही लिये रहने वाले, ५५४ फणिपति :- शेष और वासुकि नाग के भी स्वामी, ५५५ फेत्कार:- फेत्कार-तन्त्र-स्वरूप, ५५६ फाणित प्रिय:- फाणित अर्थात् खाँड (चीनी) के प्रेमी ।९६।

वाणार्चिताङ्घ्रियुगलो बालकेलिकुतूहली ।
ब्रह्म ब्रह्मार्चितपदो ब्रह्मचारी बृहस्पति: ।९७।

५५७ वाणार्चिताङ्घ्रियुगल :- वाणासुरसे पूजित युगल चरण वाले, ५५८ बाल के लिकुतूहली—बालोचित क्रीडा के लिए उत्सुक, ५५९ ब्रह्म पर ब्रह्म स्वरूप, ५६० ब्रह्मार्चितपद :- ब्रह्मा जी से पूजित चरण वाले, अथवा वेद पूजित पदवाले, ५६१ ब्रह्मचारी-ब्रह्मचर्यनिष्ठ, ५६२ बृहस्पति :- देव गुरु बृहस्पति रूप ।९७।

बृहत्तमो ब्रह्मपरो ब्रह्मण्यो ब्रह्मवित्प्रिय: ।
बृहन्नादाग्रचीत्करो ब्रह्माण्डावलिमेखल: ।।९८

५६३ बृहत्तम:-बड़े से भी बड़े, ५६४ ब्रह्मपर:-ब्रह्माजी से भी श्रेष्ठ, अथवा एक मात्र वेद के ही अनुशीलन में तत्पर, ५६५ ब्रह्मण्य:-ब्राह्मणों को मान देने वाले, अथवा उनके हितकारी, ५६६ ब्रह्मवित्प्रिय:-ब्रह्मवेत्ताओ के प्रिय, अथवा ब्रह्मवेत्ताओं को प्रिय मानने वाले, ५६७ बृहन्नादाग्रचचीत्कार:-मेघों की गर्जना और बिजली की गड़गड़ाहट से भी अधिक उच्च स्वर से चीत्कार या गर्जना करने वाले, ५६८

ब्रह्माण्डावलिमेखल:-कटिसूत्र इ किंकिणी की भाँति समस्त ब्रह्माण्डों को ही गूंच लेने वाले अथवा विराट् रूप धारी ।।९८

भ्रूक्षेपदत्तलक्ष्मीक: भर्गो भद्रो भयापहः ।
भगवान्भक्ति सुलभो भूतिदो भूतिभूषण: ।।९९

५६९ भ्रूक्षेपदत्तलक्ष्मीक:-भक्तों को भौहों के संकेत मात्र से लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) प्रदान करने वाले, ५७० भर्ग:-तेज: स्वरूप, ५७१ भद्र:-भद्रजातीय गजरूप, ५७२ भयापहः-भय के नाशक, ५७३ भगवान्:-षड्विध ऐश्वर्य से सम्पन्न, ५७४ भक्तिसुलभ:-भक्ति के द्वारा ही सुगमता से ही प्राप्य, ५७५ भूतिद:-अष्ट सिद्धियों के दाता, ५७६ भूतिभूषण:-भस्म धारण करने वाले ।।९९

भव्यो भूतालयो भोगदाता भ्रूमध्यगोचरा ।
मन्त्रो मन्त्रपतिर्मन्त्री मदमत्तमनोरमः ।।१००

५७७ भव्य:-कल्याण स्वरूप, ५७८ भूतालय:-पञ्चभूतों, भूत-प्रेत आदिक तथा समस्त भूत प्राणियों के अधिष्ठान, ५७९ भोगदाता:-प्राणियों के कर्मानुसार दु:ख और सुख का अनुभव कराने वाले, ५८० भूमध्यगोचर:-भौंहों के मध्य भाग में ध्येय, ५८१ मन्त्र:-विविध मन्त्र स्वरूप, ५८२ मन्त्रपति:-मन्त्रणा के अधिकारी, पालक एवं प्रवर्तक, ५८३ मन्त्री:-राज्य सचालनोपयोगी मन्त्र शक्ति के अधिष्ठता, ५८४ मदमत्तमनोरम:-समाधिजनित आनन्द से मत्त हृदय में ध्येय रूप से रमण करने वाले ।।१००।।

मेखलावान् मन्दगतिर्मतिमत्कमलेक्षण: ।
महाबलो महावीर्यो महाप्राणो महागना: ।।१०१

५८५ मेखलावान्:-करघनी से विभूषित कटि प्रदेश वाले, ५८६ मन्दगति:-मन्द पुरुषों के भी आश्रयदाता, ५८७ मतिमत्कमलेक्षण:-सद्बुद्धि देने वाले कमलोपम नेत्रों से युक्त, ५८८ महाबल:-महाबल से सम्पन्न, ५८९ महावीर्य:-महापराक्रमी, ५९० महाप्राण:-महान् प्राणशक्ति से सम्पन्न, ५८१ महामना:-महामनस्वी ।।१०१।।

यज्ञो यज्ञपतिर्यज्ञगोप्ता यज्ञफलप्रदः ।
यशस्करो योगगम्यो याज्ञिको याजकप्रियः ।।१०२

५९२ यज्ञ:-यज्ञ स्वरूप, ५९३ यज्ञपति:-यज्ञों के स्वामी, ५९४ यज्ञगोप्ता:-यज्ञों के संरक्षक, ५९५ यज्ञ फलप्रद:-यश फल के दाता, ५९६ यशस्कर:-सुयश का विस्तार करने वाले, ५९७ योगगम्य:-योग से प्राप्तव्य, ५९८ याज्ञिक:-यज्ञकर्ता, ५९९ याजकप्रिय:-यज्ञ करने वालों के प्रेमी ।।१०२

रसो रसप्रियो रस्यो रञ्जको रावणार्चितः ।
रक्षो रक्षाकरो रत्नगर्भो राजसुखप्रदः ।।१०३

६०९ रस:-परमानन्द स्वरूप, ६०१ रसप्रिय:-मधुर आदि रस में प्रीति रखने वाले, ६०२ रस्य:-आस्वाद के विषय, ६०३ रञ्जक:-दूसरों के मन का अनुरञ्जन करने वाले, ६०४ रावणार्चित:-दशमुख रावण के द्वारा भी पूजित, ६०५ रक्षोरक्षाकर:-राक्षसों को जलाकर राख कर देने वाले, अथवा अपनी अराधना

करने वाले राक्षसों के रक्षक, ६०६ रत्नगर्भ:-पृथ्वी के आश्रय, ६०७ राज्य सुखप्रद:-राज सम्बन्धी सुख देने वाले ।।१०३

लक्ष्यं लक्ष्यप्रदो लक्ष्यो लयस्थो लड्डुकप्रिय: ।
लानप्रियो लास्यपरो लाभकृल्लोकविश्रुत: ।।१०४

६०८ लक्ष्यम्:-प्रणवरूपी धनुष के द्वारा चित्तरूपी बाण से वेधने योग्य ब्रह्म, ६०९ लक्ष्यप्रद:-निर्विघ्नता पूर्वक लक्ष्य की प्राप्ति करने वाले, ६१० लक्ष्य:-'तत्त्वमसि, इत्यादि महावाक्यगत पदों द्वारा लक्षण शक्ति से बोध्य, ६११ लयस्थ:-प्रलय काल में भी स्थित रहने वाले, अथवा चित्तलय की स्थिति में विद्यमान, ६१२ लड्डुक प्रिय:-लड्डु से प्रसन्न रहने वाले, ६१३ लानप्रिय:-गजशाला में प्रीति रखने वाले, ६१४ लास्यपर:-विलास योग्य परम धाम वाले, ६१५ लाभकृल्लोकविश्रुत:-लाभकारी (भक्तों को शीघ्र वरदान देने वाले) लोगों में श्रेष्ठता के लिये विख्यात ।।१०४।।

वरेण्यो वह्निवदनो वन्द्यो वेदान्तगोचर: ।
विकर्ता विश्वतश्चक्षुर्विधाता विश्वतोमुख: ।।१०५

६१६ वरेण्य:-गणपति-भक्त राजा वरेण्य से अभिन्न, ६१७ वह्निवदन:-अग्निरूप मुखवाले, ६१८ वन्द्य:-वन्दनीय, ६१९ वेदन्तागोचर:-उपनिषद्गम्य, ६२० विकर्ता:-छ: भाव विकारों के प्रवर्तक, ६२१ विश्वतश्चक्षु:- सब ओर नेत्र वाले, ६२२ विधाता:-स्रष्टा, ६२३ विश्वतोमुख:-सब और मुखवाले ।।१०५।।

वामदेवो विश्वनेता वज्रिवज्रनिवारण: ।
विश्वबन्धनविष्कम्भाधारो विश्वेश्वरप्रभु: ।।१०६

६२४ वामदेव:-सुन्दर देवता, अथवा शिव स्वरूप, ६२५ विश्वनेता:-जगत् के नायक, ६२६ वज्रिवज्रनिवारण:-इन्द्र के वज्र को स्तम्भित कर देने वाले, ६२७ विश्वबन्धनविष्कम्भाधार:-विश्व की सृष्टि के लिये पर्याप्त देश को 'विष्कम्भ' कहते है। उसके भी आधार, ६२८ विश्वेश्वर प्रभु:-सम्पूर्ण ब्रह्मान्डों और उनके अधीश्वरों के भी ईश्वर ।।१०६।।

शब्दब्रह्म शमप्राप्य: शम्भुशक्तिगणेश्वर: ।
शास्ता शिखाग्रनिलय: शरण्य: शिखरीश्वर: ।।१०७

६२९ शब्दब्रह्म:-परावाणी से प्रतीत नाद रूप धारी, ६३० शमप्राप्य:-मनोनिग्रह से प्राप्तव्य, ६३१ शम्भुशक्तिगणेश्वर:-शैवों और शाक्तों के समुदाय के ईश्वर, ६३२ शास्ता:-'शास्ता' नाम से प्रसिद्ध केरल देशीय देवता स्वरूप, अथवा बुद्धिरूप, ६३३ शिखाग्रनिलय:- शास्ता के शिखाग्र भाग में निवास करने वाले, ६३४ शरण्य:-रक्षक, ६३५ शिखरीश्वर:-हिमालय स्वरूप ।।१०७।।

षड्ऋतुकुसुमस्रग्वी षडाधार: षडक्षर: ।
संसारवैद्य: सर्वज्ञ: सर्वभेषजभेषजम् ।।१०८

६३६ षड्ऋतुकुसुमस्रग्वी:-छहों ऋतुओं में खिलने वाले पुष्पों की माला से अलंकृत, ६३७ षडाधार:-छहों चक्रों के आधारभूत मूलाधार चक्र स्वरूप, ६३८ षडक्षर:-छ: अक्षरों वाले वक्रतुण्ड-मन्त्र स्वरूप, ६३९ ससार वैद्य:-भवरोग का नाश करने वाले, ६४० सर्वज्ञ:-सब कुछ जानने वाले, अथवा बुद्ध स्वरूप, ६४१ सर्वभेषजभेषजम्:-समस्त रोगों की दवा दिव्य अमृत के भी दोष-निवारक ।।१०८

सृष्टिस्थितिलयक्रीडः सुरकुञ्जरभेदनः।
सिन्दूरितमहाकुम्भः सदसद्व्यक्तिदायकः ॥१०९

६४२ सृष्टिस्थितिलयक्रीडः- जगत् की सृष्टि, पालन और संहार जिनकी लीलाएँ हैं, वे, ६४३ सुरकुञ्जर भेदनः- दानव से पूजित होकर देवश्रेष्ठों में भेद उत्पन्न करने वाले, अथवा देवराज के भेदक, ६४४ सिन्दूरितमहाकुम्भः- सिन्दूर से अरुण मस्तक वाले, ६४५ सदसद्वचति.दायकः- अपने भक्तों को सदसद्विवेक प्रदान करने वाले ॥१०९

साक्षी समुद्रमथनः स्वसंवेद्यः स्वदक्षिणः।
स्वतन्त्रः सत्यसंकल्पः सामगानरतः सुखी ॥११०

६४६ साक्षी-विश्वको साक्षात् देखने वाले, ६४७ समुद्रमन्थनः-काल में देवताओं द्वारा सर्वप्रथम पूजित, ६४८ स्वसवेद्यः- स्वयं ज्योतिरूप, ६४९ स्वदक्षिण :- स्वयं समर्थ, ६५० स्वतन्त्र :- अपराधीन, ६५१ सत्यसंकल्प :- कभी व्यर्थ न जाने वाले संकल्प से युक्त, ६५२ सामगानरत :- साम मन्त्रों के गान में संलग्न, ६५३ सुखी-सुखका अनुभव करने वाले ॥११०

हंसो हस्तिपिशाचोशो हवनं हव्यकव्यभुकः।
हव्यो हुतप्रियो हर्षो हृल्लेखामन्त्रमध्यगः ॥१११

६५४ हंस :- यति-विशेषरूप, अथवा सूर्यरूप, ६५५ हस्तिपिशाचीश-नामक नवाक्षर मन्त्र के देवता, ६५६ हवनम्- आहुतिस्वरूप, ६५७ हव्याकव्यभुक्-हव्य-कव्य के भोक्ता देवता-पितृस्वरूप, ६५८ हव्य :- हविष्यरूप, ६५९ हुतप्रिय :- आहुति में दिए गए द्रव्य के प्रेमी, ६६० हर्ष :- आनन्दस्वरूप, ६६१ हृल्लेखामन्त्रमध्यगः- हृल्लेखा-मन्त्र के मध्यवर्ती-ह्रिकारवाच्य ॥१११

क्षेत्राधिपः क्षमाभर्ता क्षमापरपरायणः।
क्षिप्रक्षेमकरः क्षेमानन्दः क्षोणीसुरद्रुमः ॥११२

६६२ क्षेत्राधिप :- प्रयाग आदिक्षेत्रों अथवा शरीर आदि के स्वामी, ६६३ क्षमाभर्ता-पृथ्वी अथवा क्षमा को धारण करने वाले, ६६४ क्षमापरपरायणः- क्षमाशील मुनियों के प्राप्य, ६६५ क्षिप्रक्षेमकर :- शीघ्रसिद्धि प्रदान करने वाले, ६६६ क्षेमानन्द :- क्षेम और आनन्द स्वरूप, ६६७ क्षोणीसुरद्रुम :- भूतल पर कल्पवृक्ष के समस्त मनोरथों के दाता ।११२।

धर्मप्रदोऽर्थदः कामदाता सौभाग्यवर्धनः।
विद्याप्रदो विभवदो भुक्तिमुक्ति फलप्रदः ॥११३

६६८ धर्मप्रद :—धर्म प्रदान करने वाले, ६६९ अर्थद :—धन देनेवाले; ६७० कामदाता-कामप्रद, ६७१ सौभाग्यवर्धन :—स्त्रियों को सौभाग्य वृद्धि का वर देनेवाले, ६७२ विद्याप्रद :—ज्ञानदाता, ६७३ विभवद :— सम्पत्तिदाता, ६७४ भुक्तिमुक्तिफलप्रद :—भोग और मोक्षरूप फल देने वाले ॥११३

आभिरूप्यकरो वीरश्रीप्रदो विजयप्रदः।
सर्ववश्यकरो गर्भदोषहा पुत्रपोत्रदः ॥११४

६७५ आभिरूप्यकर :—विद्वत्ता एवं सुन्दरता प्राप्त कराने वाले; ६७६ वीरश्रीप्रद :—नाम स्मरण करने वाले भक्तों को वीरोचित लक्ष्मी प्रदान करने वाले, ६७७ विजयप्रद :—विजय देने वाले, ६७८ सर्ववश्यकर :—सबको भक्त के वश में कर देने वाले, ६७९ गर्भदोषहा—गर्भस्राव या गर्भपात आदि बीजदोषों को नष्ट करने वाले, ६८० पुत्रपौत्रद :— पुत्र और पौत्र प्रदान करने वाले ।११४।

मेधादः कीर्तिद शोकहारी दौर्भाग्यनाशनः ।
प्रतिवादिमुखस्तम्भो रुष्टचित्तप्रसादनः ।।११५

६८१ मेधाद :—धारणावती बुद्धि प्रदान करने वाले, ६८२ कीर्तिद :—लोक में कीर्तिदेने वाले, ६८३ शोकहारी:—ज्ञानदान करके शोक—मोह को हरलेने वाले, ६८४ दौर्भाग्यनाशन :- स्त्रियों के विधवापन आदि दुर्भाग्य सूचक दोषों को नष्ट करने वाले, ६८५ प्रतिवादिमुखस्तम्भ :- प्रतिकूल बोलने वाले दुष्टों का मुख बन्द कर देने वाले, ६८६ रुष्टचित्तप्रसादन :- कुपित हुए राजा आदि के चित्त को प्रसन्न (स्नेह युक्त) करने वाले ।।११५

पराभिचारशमनो दुःखभञ्जनकारकः ।
लवस्त्रुटिः कला काष्ठा निमेषस्तत्परः क्षणः ।।११६

६८७ पराभिचारशमन :—दूसरों के द्वारा किए गए मारण आदि उपायों को शान्त करने वाले, ६८८ दु;खभञ्जन कारक :—सब दुःखों को दूर करने वाले, ६८९ लव :—लवस्वरूप, ६९० त्रुटि :—सहस्रलवजनितकाल; (यहां यह परिभाषा समझ लेना चाहिए-सौ त्रुटियों का एक तत्पर होता है, तीसतत्परों का एक निमेष होता है, अठारह निमेषों की एक काष्ठा होती है और तीस काष्ठाओं की एक कला होती है।) ६९१ कला:—तीस काष्ठा का समय, ६९२ काष्ठा:-अठारह निमेष का समय, ६९३ निमेप :—तीसतत्परका काल, ६९४ तत्पर :—सौ त्रुटियों का काल, ६९५ क्षण :—तीस कलाओं का समय, ।।११६

घटीमुहूर्तं प्रहरो दिवानक्तमहर्निशम् ।
पक्षो मासोऽयनं वर्षं युगं कल्पो महालयः ।।११७

६९६ घटी:-छह क्षण का समय, ६९७ मुहूर्तम्:-दो घटी का समय, ६९८ प्रहर :- चार मुहूर्त का समय, ६९९ दिवा:-दिन-चार पहर का समय, ६०० नक्तम्-रात्रि-चार पहर का समय, ६०१ अहर्निशम्:-दिन-रात-आठ पहर का समय, ६०२ पक्ष :- पन्द्रह दिन-रात का समय, ६०३ मासः-दो पक्ष का समय, ६०४ अयनम्:-छह मास का समय, ६०५ वर्षम्-दो अयनों का मानव वर्ष (तीन सौ साठ मानव वर्ष का एक दिव्य वर्ष होता है), ६०६ युगम्-बारह हजार दिव्य वर्षों का चतुर्युग, ६०७ कल्प :-सहस्र चतुर्युग का एक कल्प (जो ब्रह्मा का एक दिन है), ६०८ महालयः- बेहत्तर हजार कल्पों का एक महाप्रलय होता है (जिसमें ब्रह्मा का भी लय हो जाता है।)* ।।११७

---

* 'लय' से लेकर 'महालय' तक सब कालभेद महाकाल स्वरूप गणपति के अवयव हैं।

राशिस्तारा तिथिर्योगो वारः करणमंशकम् ।
लग्नं होरा कालचक्रं मेरुः सप्तर्षयो ध्रुवः ।।११८

७०९ राशिः-मेष आदि द्वादश राशिरूप, ७१० तारा-कृतिका आदि नक्षत्र रूप, ७११ तिथिः-चन्द्रमा की पन्द्रह कलाओं में से एक, ७१२ योगः-अमृत सिद्धि एवं आनन्द आदि योगरूप, ७१३ वारः-रविवार आदि सप्तदिनस्वरूप, ७१४ करणम्-'बव' आदि करणरूप, ७१५ अंशकम्-अंशस्वरूप, ७१६ लग्नम्-मेष आदि राशियों का उदय, ७१७ होरा-अर्धलग्न, ७१८ कालचक्रम्-शिशुमारचक्रस्वरूप, ७१९ मेरुः-सुवर्णमय पर्वतरूप, ७२० सप्तर्षयः-कश्यप आदि सात ऋषिरूप, ७२१ ध्रुवः-उत्तानपादके पुत्ररूप, ।।११८

राहुर्मन्दः कविर्जीवो बुधो भौमः शशी रविः ।
कालःसृष्टिः स्थितिर्विश्वं स्थावरं जङ्गमं च यत् ।।११९

७२२ राहुः-राहु नामक ग्रह, ७२३ मन्दः-शनिश्चर, ७२४ कविः-शुक्र, ७२५ जीवः-बृहस्पति, ७२६ बुधः-बुध, ७२७ भौम :-मङ्गल, ७२८ शशि-सोम, ७२९ रविः-सूर्य, ७३० कालः-जगत् का संहार करने वाले, ७३१ सृष्टिः-सृष्टिक्रियारूप, ७३२ स्थिति पालनकर्मरूप, ७३३ स्थावरं जङ्गमं विश्वम् चराचर जगत्रूप, ।।११९

भूरापोऽग्निमरुद्व्योमाहंकृतिः प्रकृतिः पुमान् ।
ब्रह्मा विष्णुः शिवो रुद्र ईशः शक्तिः सदाशिवः ।।१२०

७३४ भूः-पृथ्वीरूप, आपः-जलरूप, ७३६ अग्निः-तेजःस्वरूप, ७३७ मरुत्-वायुरूप, ७३८ व्योम-आकाशरूप, ७३९ अहंकृतिः-अहंकाररूप, ७४० प्रकृतिः-जगत् का मूलकारण अव्यक्त प्रकृतिरूप, ७४१ पुमान्-पुरुषरूप, ७४२ ब्रह्मा-सृष्टिकर्ता, ७४३ विष्णुः-पालनकर्ता, ७४४ शिवः-शिव, ७४५ रुद्रः-संहारकर्ता, ७४६ ईशः-ईशान, ७४७ शक्तिः-कामेश्वरी, ७४८ सदाशिवः-कामेश्वरशिव, ।।१२०

त्रिदशाः पितरः सिद्धा यक्षा रक्षांसि किंनराः ।
साध्या विद्याधरा भूता मनुष्याः पशवः खगाः ।।१२१

७४९ त्रिदशाः-देव-समुदायरूप, ७५० पितरः-पितृ-समूह, ७५१ सिद्धाः-सिद्ध-समुदाय, ७५२ यक्षाः-यक्षवृन्द, ७५३ रक्षांसि-राक्षससमूह, ७५४ किंनराः-किंनरवर्ग, ७५५ साध्याः-साध्यगणः- ७५६ विद्याधराः-विद्याधरगण, ७५६ भूताः-भूतगण, ७५८ मनुष्याः-मनुष्यगण, ७५९ पशव :-पशुगण; ७६० खगाः-पक्षिगण ।।१२१

समुद्राः सरितः शैला भूतं भव्यं भवोद्भवः ।
सांख्यं पातञ्जलं योगः पुराणानि श्रुतिः स्मृतिः ।।१२२

७६१ समुद्राः-विभिन्नसमुद्र, ७६२ सरितः-नदी समुदाय, ७६३ शैलाः-पर्वतगण, ७६४ भूतम्-अतीतकाल, ७६५ भव्यम्-भविष्यकाल, ७६६ भवोद्भवः-जगत् की उत्पत्ति का कारण, ७६७ सांख्यम्-कपिलमुनिद्वारा प्रतिपादित शास्त्र, ७६८ पातञ्जलम्-पतञ्जलिप्रोक्त योगसूत्र, ७६९ योगः-नागराज शेष द्वारा

प्रतिपादित, ७७० पुराणानि-'ब्राह्म' आदि पुराण-समुदाय, ७७१ श्रुतिः- ऋग्वेद आदि, ७७२ स्मृतिः-मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र ॥१२२

वेदाङ्गानि सदाचारो मीमांसा न्यायविस्तरः ।
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वं काव्यनाटकम् ॥१२३

७७३ वेदाङ्गानि-व्याकरणादि छः वेदाङ्गसमूह, ७७४ सदाचारः-सदाचार-संग्रहात्मकग्रन्थ, ७७५ मीमांसा-सोलह अध्यायों में वर्णित कर्म-मीमांसा-जैमिनीसूत्र तथा चार अध्यायों में कथित ब्रह्ममीमांसा, ७७६ न्याय विस्तरः-कणाद और गौतम मुनियों के द्वारा प्रतिपादित न्यायशास्त्र, ७७७ आयुर्वेदः-धन्वन्तरिप्रोक्त उपवेद, ७७८ धनुर्वेदः-अस्त्रविद्या, ७७९ गान्धर्वम्-संगीतशास्त्र, ७८० काव्यनाटकम्-श्रव्य काव्य और दृश्य नाटक ॥१२३

वैखानसं भागवतं सात्वतं पाञ्चरात्रकम् ।
शैवं पाशुपतं कालामुखं भैरवशासनम् ॥१२४

७८१ वैखानसम्-विष्णुप्रोक्त वैखानस-तन्त्रे, ७८२ भागवतम्-वैष्णव शास्त्र, ७८३ सात्वतम्-सात्वततन्त्र, ७८४ पाञ्चरात्रकम् पाञ्चरात्र आगम (ये चारों वैष्णव तन्त्र हैं), ७८५ शैवम्-शैवतन्त्र, ७८६ पाशुपतम्-पाशुपत-शास्त्र, ७८७ कालामुखम्-कालामुखनामसे प्रसिद्धतन्त्र, ७८८ भैरवशासनम्:-भैरवकथित शास्त्र (ये चारों शैवतन्त्र हैं) ॥१२४

शाक्तं वैनायकं सौरं जैनमार्हतसंहिता ।
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं सचेतनमचेतनम् ॥१२५

७८९ शाक्तम्-शक्तितन्त्र, ७९० वैनायकम्-विनायक-तन्त्र, ७९१ सौरम्-सूर्यप्रोक्ततन्त्र, ७९२ जैनम्-जैनशास्त्र. ७९३ आर्हत संहिता-आर्हत शास्त्र, ७९४ सत्-कारणरूपमें स्थिति, ७९५ असत्-कार्यरूपमें स्थित, ६९६ व्यक्तम्-सर्वकार्यरूप, ७९७ अव्यक्तन्कारणरूप, ७९८ सचेतनम्-सचेतन प्राणीमात्र, ७९९ अचेतनम्-अचेतन आकाश आदि ॥१२५

बन्धो मोक्षः सुखं भोगोऽयोगः सत्यमणुर्महान् ।
स्वस्ति हुं फट् स्वधा स्वाहा श्रौषड्वोषड्वषण्णमः ॥१२६

८०० बन्धः-आत्मामें अनात्मा का और अनात्मा में आत्मा का जो भ्रम है, तादृश् भ्रमात्मक बन्धनरूप, ८०१ मोक्षः-अज्ञान नाशरूप, ८०२ सुखम्-विशुद्धानन्द, ८०३ भोगः-अनुभव, ८०४ अयोगः-अनासक्त, ८०५ सत्यम्-त्रिकाल में अबाधित, ८०६ अणुः-मन-इन्द्रियों के अगोचर, ८०७ महान्-जिससे बढ़कर कोई आनन्द नहीं है, तादृश भूमा, ८०८ स्वस्तिः-सम्यक् सत्तावान्, ८०९ हुम्-अपने से इतर का ८११ स्वधा-श्राद्धरूप, ८१२ स्वाहाः-यज्ञकर्मरूप, ८११ श्रौषड्-श्रोषटकारोपलक्षित कर्मरूप, ८१५ वषट्-वषट्कारोपलक्षित कर्मरूप. ८१६ नमः- नमस्कार स्वरूप ॥१२६

ज्ञानं विज्ञानमानन्दो बोधः संविच्छमो यमः ।
एक एकाक्षराधार एकाक्षरपरायणः ॥१२७

८१७ ज्ञानम्-मोक्षविषयक ज्ञान स्वरूप, ८१८ विज्ञानम्-विज्ञान स्वरूप,

८१९ आनन्द:-आत्मानन्द स्वरूप, ८१० बोध:-अन्तर्बोधरूप, ८२१ संवित्-वाह्य-वृत्तियों को निरस्त करने वाला अन्तर्बोध, ८२२ शम:-मनोनिग्रह, ८२३ मय:-इन्द्रिय संयम, ८२४ एक:-एकमात्र अद्वितीय, ८२५ एकाक्षराधार:-एक अक्षर 'ग' बीज मात्र में स्थित रहने वाले, ८२६ एकाक्षर परायण:-ॐ-इस एकाक्षर मात्र में स्थित ।।१२७

एकाग्रधीरेकवीर एकानेकस्वरूपधृक् ।
द्विरूपो द्विभुजो द्वयक्षो द्विरदो द्वीपरक्षक: ।।१२८

८२७ एकाग्रधी:-अपने आप में एकाग्र रहने वाली बुद्धि रूप, ८२८ एकवीर:-अद्वितीय वीर, ८२९ एकानेक स्वरूपधृक्-एक होते हुए भी अनेक रूप धारण करने वाले, ८३० द्विरूप:-'पर' और 'अपर' ब्रह्मरूप से दो रूप वाले, ८३१ त्रिभुज:-दो वाहों वाले, ८३२ द्वयक्ष:-दो नेत्रों वाले, ८३३ द्विरद -दो दांत वाले, गजरूप, ८३४ द्वीपरक्षक:-सप्तद्वीपाधिपतित्व प्रदान करने के कारण द्वीप के रक्षक ।।८२८।।

द्वैमातुरो द्विवदनो द्वन्द्वातीतो द्वयातिग: ।
त्रिधामा त्रिकरस्त्रेता त्रिवर्गफलदायक ।।१२९

८३५ द्वैमातुर:-उमा और गङ्गा दो माताओं के पुत्र, ८३६ द्विवदन:-अग्नि रूप मुख तथा गजमुख दोनों से युक्त होने के कारण दो मुख वाले, ८३७ द्वन्द्वातीत:-सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्व-दुखों से ऊपर उठे हुए, ८३८ द्वयातिग:-रजोगुण और तमोगुण दोनों को लांघ करके विराजमान, ८४० त्रिकर:-तीनों लोकों के कर्ता, ८४१ त्रेतात्रि-वर्ग फलदायक:-त्रिविध अग्नि के चयन से प्राप्त होने वाले धर्म, काम और अर्थ रूपी फलों के दाता ।।१२९

त्रिगुणात्मा त्रिलोकादिस्त्रिशक्तीशस्त्रिलोचन: ।
चतुर्बाहुश्चतुर्दन्तश्चतुरात्मा चतुर्मुख: ।।१३०

८४२ त्रिगुणात्मा-त्रिगुणमयी मूल प्रकृति के आधार, ८४३ त्रिलोकादि:-तीनों लोकों के आदि कारण, ८४४ त्रिशक्तिश:-'श्री, ह्रीं, क्लीं'-इन त्रिविध शक्ति-मन्त्रों के अथवा प्रभु शक्ति, उत्साह शक्ति और मन्त्र शक्ति-इन तीनों शक्तियों के ईश्वर, ८४५ त्रिलोचन:-तीन नेत्रों वाले, ८४६ चतुर्वाहु:-चार बाँह वाले, ८४७ चतुर्दन्त:-चार दांत वाले, ८४८ चतुरात्मा-आत्मा, अन्तरात्मा, ज्ञानात्मा और परमात्मा के भेद से चार आत्मा वाले, ८४९ चतुर्मुख:- मुख में चार प्रकार के वेद धारण करने से चार मुख वाले ।।१३१।।

चतुर्विधोपायमयश्चतुर्वर्णाश्रमाश्रय: ।
चतुर्विधवचोवृत्तिपरिवृत्तिप्रवर्तक: ।।१३१

८५० चतुर्विधोपायमय:-भेद, दण्ड, साम और दान ये चार उपाय हैं। इन चारों उपायों से उत्पन्न फल के साधक, ८५१ चतुर्वर्गाश्रमाश्रय:- चारों वर्णों और चारों आश्रमों के विहित कर्मों द्वारा प्राप्त होने वाले, अथवा उन वर्णों या आश्रमों के आधार, ८५२ चतुर्विधवचोवृत्तिपरिवृत्तिप्रवर्तक:-अन्त: प्रदेश में पश्यन्ती, मध्यमा तथा परा इन तीन वाणियों के और वाह्य देश में वैखरी नामक चतुर्थी वाणी की वृत्तियों के परिवर्तन के प्रवर्तक ।।१३१।।

चतुर्थीपूजनप्रीतश्चतुर्थीतिथिसम्भवः ।
पञ्चाक्षरात्मा पञ्चात्मा पञ्चास्यः पञ्चकृत्यकृत् ।।१३२

८५३ चतुर्थीपूजनप्रीतः-चतुर्थी-तिथि को पूजन करने से प्रसन्न होने वाले, ८५४ चतुर्थीतिथिसम्भवः-चतुर्थी-नामक तिथि को प्रकट होने वाले, ८५५ पञ्चाक्षरात्मकः-नाद, बिन्दु, मकार, अकार और उकार-ये प्रणव में स्थित जो पांच अक्षर हैं, तत्स्वरूप, ८५६ पञ्चात्मा-ब्रह्मा, विष्णु,रुद्र,ईश्वर और सदाशिव-इन पांच विग्रहों से युक्त, ८५७ पञ्चास्यः-विस्तृत मुख वाले, ८५८ पञ्चकृत्यकृत्-सृष्टि, पालन, संहार, तिरोधान और अनुग्रह-ब्रह्मा आदि रूपों से इन पांच कृत्यों को करने वाले ।।१३२।।

पञ्चाधारः पञ्चवर्णः पञ्चाक्षरपरायणः ।
पञ्चतालः पञ्चकरः पञ्चप्रणवभावितः ।।१३३

८५९ पञ्चाधारः-पाँचों भूतों के आधार या धारक, ८६० पञ्चवर्णः-सदा करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान वर्ण वाले होते हुए भी सत्य युग में चन्द्रमा के समान, त्रेता में अर्जुन वृक्ष के समान, द्वापर में इन्द्रगोप-नामक कीट के समान तथा कलियुग में धुएँ के समान वर्ण वाले होने से पाँच वर्ण वाले, ८६१ पञ्चाक्षरपरायणः-शिव-पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करने वाले, ८६२ पञ्चतालः-हाथ की बिचली अंगुली के अग्र भाग से लेकर अंगुष्ठ तक की लम्बाई को 'ताल' कहते हैं । ऐसे पाँच ताल के बराबरा शरीर वाले, वामनरूप, ८६३, पञ्चकरः-पाँच हाथ ऊँचे होने के कारण 'पञ्चकर' कहे जाने वाले, ८६४ पञ्चप्रणवभावितः-पाँच प्रणवों से प्रतिपादित व अनुभावित ।।१३३

पञ्चब्रह्ममयस्फूर्तिः पञ्चावरणवारितः ।
पञ्चभक्ष्यप्रियः पंचबाणः पंचशिवात्मकः ।।१३४

८६५ पञ्चब्रह्ममयस्फूर्तिः-सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष और ईश्वर-इन पांच ब्रह्म स्वरूपों की स्फूर्ति से युक्त; ८६६ पञ्चावरणवारितः-पांच आवरणों अथवा पांच कोशों से आवृत; ८६७ पञ्चभक्ष्यप्रियः-लड्डू, मण्डक, पूरी, फेणी (सेवई) और वटक (बड़े) नाम वाले पांच के भक्ष्य-पदार्थों के प्रेमी; ८६८ पचबाणः-कामेश्वरी उमा और कामेश्वर शिव के पांच बीजों से युक्त होने के कारण 'पञ्चबाण' नाम से प्रसिद्ध; ८६९ पञ्चशिवात्मकः-पञ्चशिव-बीजस्वरूप ।।१३४

षट्कोणपीठः षट्चक्रधामा षड्ग्रन्थिभेदकः ।
षडध्वध्वान्तविध्वंसी षडङ्गुलमहाह्लदः ।। १३५

८७० षट्कोणपीठः-षट्कोणचक्र से युक्त पूजा पीठ वाले; ८७१ षट्चक्रधामा-मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा-ये छः चक्र जिनके वासस्थान हैं, वे; ८७२ षड्ग्रन्थिभेदकः-मूलाधार, आज्ञा, और मणिपुर इन तीन चक्रों में दो-दो ग्रन्थियों का भेदन करने वाले; ८७३ षडध्वध्वान्तविध्वंसी-पद, भुवन, वर्ण तत्त्व, कला और मन्त्र-इन छहों अध्वाओं को शोधन करने के कारण उनमें व्याप्त अज्ञानान्धकार को नष्ट करने वाले, ८७४ षडङ्गुलमहाह्लदः-छः अङ्गुल गहरे नाभिरूप महान् ह्लदवाले ।।१३५

षण्मुखः षण्मुखभ्राता षट्शक्ति परिवारितः ।
षड्वैरिवर्गविध्वंसी षडूर्मिभयभञ्जनः ।।१३६

८७५ षण्मुखः-छः शास्त्र जिनके मुख में हैं वे, ८७६ षण्मुखभ्राता-षडानन कार्तिकेय के बड़े भाई, ८७७ षट्शक्ति परिवारितः-छः शक्तियों से घिरे हुए, ८७८ षड्वैरिवर्गविध्वंसी-काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर इन छः शत्रुओं के समुदाय का नाश करने वाले, ८७९ षडूर्मिभयभञ्जनः-भूख, प्यास, शोक, मोह, जरा और मृत्यु-इन छः उर्मियों के भय का निवारण करने वाले ।।१३६

षट्तर्कदूरः षटकर्मनिरतः षड्साश्रयः ।
सप्तपातालचरणः सप्तद्वीपोरुमण्डलः ।।१३७

८८० षट्तर्कदूरः-छः दर्शनों में कथित तर्कों के अगोचर-वाणी से अतीत, ८८१ षट्कर्मनिरतः-यजन, याजन, अध्ययन, अध्यापन तथा दान और प्रतिग्रह इन छः कर्मों में तत्पर रहने वाले, ८८२ षड्रसाश्रयः-मधुर अम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त-इन छः रसों के आधार, ८८३ सप्तपातालचरणः-तल, अतल, वितल, सुतल, रसातल और पाताल-ये नीचे के सात लोक जिनके चरणों के आश्रित हैं, वे, ८८४ सप्तद्वीपोरुमण्डलः-जम्बू आदि सात द्वीप जिनके उरुमण्डल के आश्रित हैं, वे, ।।१३७

सप्तस्वर्लोकमुकुटः सप्तसप्तिवरप्रदः ।
सप्ताङ्गराज्यसुखदः सप्तर्षिगणमण्डितः ।।१३८

८८५ सप्तस्वर्लोकमुकुटः-भुवर्लोक से लेकर गोलोक पर्यन्त सात स्वर्लोक जिनके मुकुट हैं, वे, ८८६ सप्तसप्तिवरप्रदः-सूर्य को वर देने वाले, ८८७ सप्ताङ्ग-राज्यसुखदः-स्वामी; अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोष, सेना और सुहृद-इन सातों अङ्गों से युक्त राज्य का सुख देने वाले, ८८८ सप्तर्षिगणमण्डितः-कश्यप आदि सात ऋषियों तथा गण-देवताओं से सेवित एवं सुशोभित ।।१३८

सप्तच्छन्दोनिधिः सप्तहोता सप्तस्वराश्रयः ।
सप्ताब्धिकेलिकासारः सप्तमातृनिषेवितः ।।१३९

८८९ सप्तच्छन्दोनिधिः-गायत्री से लेकर जगती-पर्यन्त सात छन्दों के आश्रय, ८९० सप्तहोता-होता से लेकर उद्गाता पर्यन्त सात होता जिनके स्वरूप हैं, वे, ८९१ सप्तस्वराश्रयः-षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद-इन सात स्वरों के आश्रय, ८९२ सप्ताब्धिकेलिकासारः-सातों समुद्र जिनके क्रीड़ा-सरोवर हैं, वे, ८९३ सप्तमातृनिषेवितः-ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि सात मातृकाओं से सेवित ।।१३९

सप्तच्छन्दोमोदमदः सप्तच्छन्दोमखप्रभुः ।
अष्टमूर्तिध्येयमूर्तिरष्टप्रकृतिकारणम् ।।१४०

८९४ सप्तच्छन्दोमोदमदः-पथ्य-संज्ञक सात छन्दों के मोदजनक मद से युक्त, ८९५ सप्तच्छन्दोमखप्रभुः-सप्त छन्दों के यज्ञ के स्वामी, ८९६ अष्टमूर्तिध्येयमूर्तिः-अष्टमूर्ति शिव से ध्येय मूर्ति वाले, अर्थात् भगवान् शिव भी अपने हृदय में जिनके स्वरूप का चिन्तन करते हैं, वे, ८९७ अष्टप्रकृतिकारणम्-पृथ्वी, जल, तेज, वायु,

आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार-इन आठ प्रकृतियों की उत्पत्ति के कारण ।।१४०

अष्टाङ्गयोगफलभूरष्टपत्राम्बुजासनः ।
अष्टशक्तिसमृद्धश्रीरष्टैश्वर्यप्रदायकः ।।१४१

८९८ अष्टाङ्गयोगफलभूः-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि-इन आठ अंगों से युक्त योग के चित्तवृति निरोधरूप फल देने वाले, ८९९ अष्टपत्राम्बुजासनः-अष्टदल-कमल पर आसीन होने के कारण उक्त नाम से प्रसिद्ध, ९०० अष्टशक्तिसमृद्धश्रीः-आठदलों में निवास करने वाली तीव्रा आदि आठ शक्तियों से सेवित होने के कारण बढ़ी हुई श्री से सम्पन्न, ९०१ अष्टैश्वर्यप्रदायकः-अणिमा आदि आठ सिद्धियों के दाता ।।१४१

अष्टपीठोपपीठश्रीरष्टमातृसमावृतः ।
अष्टभैरवसेव्योऽष्टवसुवन्द्योऽष्टमूर्तिभृत् ।।१४२

९०२ अष्टपीठोपपीठश्रीः-आठ महापीठ और उपपीठों की श्री-सम्पत्ति से युक्त, ९०३ अष्टमातृसमावृतः-ब्राह्मी आदि सात मातृकाओं के साथ जो आठवीं महालक्ष्मी हैं, वे आठों आवरण-देवता के रूप में जिन्हें घेरे रहते हैं, वे, ७०४ अष्टभैरवसेव्यः-बटुक आदि आठ भैरवों से सेव्य, ९०५ अष्टवसुवन्द्यः-धरसे लेकर प्रभास तक आठ वसुओं से वन्दनीय, ९०६ अष्टमूर्तिभृत्-अष्टमूर्तिधारी ।।१४२

अष्टचक्रस्फुरन्मूर्तिरष्टद्रण्यहविः प्रियः ।
नवनागासनाध्यासी नवनिध्यनुशासिता ।।१४३

९०७ अष्टचक्रस्फुरन्मूर्तिः-अष्टचक्रवाले यन्त्र में प्रकाशमान मूर्तिवाले, ९०८ अष्टद्रव्यहविः प्रियः-ईख, सत्तू, चिउड़ा, कदली, मोदक, तिल, नारियल, और घृतपक्व, आदि पदार्थ इन आठ द्रव्यों के हविष्य से प्रसन्न होने वाले, ९०९ नवनागासनाध्यासी-कर्कोटक आदि नवनागों के आसन पर बैठने वाले, ९१० नवनिध्यनुशासिता-नो निधियों पर अनुशासन रखने वाले ।।१४३

नवद्वारपुराधारो नवाधार निकेतनः ।
नवनारायणस्तुत्यो नवदुर्गानिषेवितः ।।१४४

९११ नवद्वारपुराधारः-नवद्वारोंवाले पुर-शरीरको जीवात्मा रूप से धारण करने वाले, ९१२ नवधारनिकेतनः-कुलाकुल, सहस्रनार, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा और लम्बिका इन नो आधारों में निवास करने वाले, ९१३ नवनारायणस्तुत्यः-धर्मनारायण, आदिनारायण, अनन्तनारायण, बद्रीनारायण, रूपनारायण, शकरनारायण, सुन्दरनारायण, लक्ष्मीनारायण, और साध्यनारायण-इन नो नारायणों से स्तुत्य, ९१४ नवदुर्गानिषेवितः-शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कुष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री-इन नो दुर्गाओं से सेवित ।।१४४

नवनाथमहानाथो नवनागविभूषणः ।
नवरत्नविचित्राङ्गो नवशक्तिशिरोधृतः ।।१४५

९१५ नवनाथमहानाथः-ज्ञान, प्रकाश, सत्य, आनन्द, विमर्श, स्वभाव, सुभग, प्रतिभ और पूर्ण-इन नो नाथों के महानाथ, ९१६ नवनागविभूषणः-कर्कोटक आदि

नौ नागों को आभूषण के रूप में धारण करने वाले, ९१७ नवरत्नविचित्राङ्गः-हीरा मोती आदि रत्नों की शोभा से विचित्र अङ्गवाले, ९१८ नवशक्तिशिरोधृतः-तीव्रा आदि नौ शक्तियों द्वारा सिरपर धारित अर्थात् वन्दित ।।१४५

दशात्मको दशभुजो दशदिक्पतिवन्दितः ।
दशाध्यायो दश प्राणो दशेन्द्रियनियामकः ।।१४६

९१९ दशात्मकः-दसों दिशाओं में व्यापक, ९२० दश भुजाओं से युक्त, ९२१ दशदिक्पतिवन्दितः-इन्द्र आदि दस दिक्पालों से स्तुत्य,९२२दशाध्यायः-चार वेद और छः अङ्गों के अध्येता, ९२३ दशप्राणः-प्राण, अपा, समान, उदान और व्यान तथा नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, और धनंजय-इन दस प्राणों से युक्त, ९२४ दशेन्द्रियनियामकः-पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों को वश में रखने वाले ।।१४६

दशाक्षरमहामन्त्रो दशाशाव्यापिविग्रहः ।
एकादशादिभी रुद्रै: स्तुत एकादशाक्षरः ।।१४७

९२५ दशाक्षरमहामन्त्रः-दस अक्षरवाले महामन्त्र-स्वरूप, ९२६ दशाशाव्यापिविग्रहः-दसों दिशाओं में व्याप्त शरीर वाले, ९२७ एकादशादिभीरुद्रै: स्तुतः-ग्यारह से लेकर एक सहस्र तक रुद्र होते हैं, उन सबके द्वारा स्तुत, ९२८ एकादशाक्षरः-एकादश अक्षर वाले मन्त्र स्वरूप ।।१४७।।

द्वादशोद्दण्डदोर्दण्डो द्वादशान्तनिकेतनः ।
त्रयोदशभिदाभिन्नविश्वेदेवाधिदैवतम् ।।१४८।।

९२९ द्वादशोद्द॰ दोर्दण्डो:-बारह उदन्ड (ऊपर उठे हुए) बाहु दण्डो से युक्त, ९३० द्वादशान्तनिकेतनः-ललाट से ऊपर ब्रह्मरन्ध्र तक के स्थान को 'द्वाडशान्त' कहते हैं उसमें निवास करने वाले, ९३१ त्रयोदशभिदाभिन्न विश्वेदेवाधिदैवतम्-तेरह विश्वेदेवों के अधिदेवता ।।१४८।।

चतुर्दशेन्द्रवरदश्चतुर्दशमनु प्रभुः ।
चतुर्दशादि विद्याढ्यश्चतुर्दशजगत्प्रभुः ।।१४९

९३२ चतुर्दशेन्द्रवरदः-चौदह इन्द्रों को वर देने वाले, ९३३ चतुर्दशमनप्रभुः-चौदह मनुओं के अधिपति, ९३४ चतुर्दशादिविद्याढ्यः-चार (आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति), दस (चार वेद और छः वेदाङ्ग) आदि विद्याओं से सम्पन्न, ९३५ चतुर्दशजगत्प्रभुः- चौदह भुवनों के स्वामी ।।१४९।।

सामपञ्चदशः पञ्चदशीशीतांशुनिर्मलः ।
षोडशाधारनिलय षोडषस्वरमातृकः ।।१५०

९३६ सामपञ्चदशः-पन्द्रह स्तोम मन्त्रों के साथ, जो चार आज्य स्तोत्र-सम्बन्धी मन्त्र हैं; वे सामयुक्त होकर गणपति के स्वरूप हैं, अतः वे उक्त नाम से प्रसिद्ध हैं, ९३७ पञ्चदशीशीतांशुनिर्मलः-पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान स्वच्छ, ९३८ षोडशाधारनिलयः-षट्दल, नवदल एवं षोडशदल आदिचक्रों में निवास करने वाले, ९३९ षोडशस्वरमातृकः-सोलह स्वर-अक्षररूप ।।१५०।।

षोडशान्तपदावासः षोडशेन्दुकलात्मकः ।
कलासप्तदशी सप्तदशः सप्तदशाक्षरः ।।१५१

९४० षोडशान्तपदावासः-ब्रह्मरन्ध्र के अन्तर्गत कमल की कर्णिका से लेकर ऊपर के भाग को 'षोडशान्त' कहते हैं। उनमें निवास करने वाले अर्थात् उन्मनी से परे विराजमान, ९४१ षोडशेन्दुकलात्मकः-अमृता और मानिनी आदि षोडषचन्द्र कलास्वरूप, ९४२ कलासप्तदशी 'त्रिपुरागम' में प्रसिद्ध 'सप्तदशी नामक कलास्वरूप, ९४३ सप्तदशः-सामयुक्त सप्तदश स्तोम स्वरूप, ९४४ सप्तदशाक्षरः-वषट् (२), ओश्रावय (४), यज (२), अस्तु श्रौषट् (४), ये यजामहे (५)-इस प्रकार १७ अक्षरों वाले मन्त्रों से यज्ञ में आहुतिग्रहण करने वाले ।।१५१।।

अष्टादशद्वीपतिरष्टादशपुराणकृत् ।
अष्टादशौषधीसृष्टिरष्टादशविधिः स्मृतः ।।१५२

९४५ अष्टादशद्वीपपतिः-'जम्बू' आदि सात द्वीपों और 'सिंहल' आदि ग्यारह उपद्विपों के अधीश्वर, ९४६ अष्टादशपुराणकृत्:-अठारह पुराणों के कर्ता व्यासरूप, ९४७ अष्टादशौषधीसृष्टिः-बारह मुख्य धान्य और छः उपधान्य-इन अठारह औषधियों (अन्नों) की सृष्टि करने वाले, ९४८ अष्टादशविधिस्वरूप, (अपूर्व विधि, नियम-विधि और परिसंख्या-विधि-ये प्रयोग और विनियोग आदि के भेद से नौ प्रकार की होती हैं।फिर गौणी और मुख्य भेद से इनके अठारह प्रकार होते हैं।१५२

अष्टादशलिपिव्यष्टिसमष्टिज्ञानकोविदः ।
एकविंशः पुमानेकविंशत्यङ्गुलिपल्लवः ।।१५३

९४९ अष्टादशलिपिव्यष्टिसमष्टिज्ञानकोविदः-नागरी, द्राविड़ी और आन्ध्री आदि के भेद से भूतल पर विभिन्न अठारह लिपियां हैं। उन भाषाओं को तथा उनके अवान्तर भेदों को पृथक-पृथक एवं समष्टि रूप से जानने में कुशल, ९५० एकविंशःपुमान्-पांच ज्ञानेन्द्रिय; पांच कर्मेन्द्रिय, पांच विषय और पांच भूत-इन बीस तत्त्वों से परे इक्कीसवां तत्त्व आत्मा, ९५१ एकविंशत्यङ्गुलिपल्लवः-दो हाथों की दस अंगुलियां, दो पैरों की दस अंगुलियां और एक शुण्डदण्ड-इस प्रकार इक्कीस अङ्गुलिपल्लवों से युक्त ।।१५३।।

चतुर्विंशतितत्त्वात्मा पञ्चविंशाख्यपुरुषः ।
सप्तविंशतितारेशः सप्तविंशतियोगकृत् ।।१५४

९५२ चतुर्विंशतितत्त्वात्मा:-प्रकृति, महतत्त्व, अहंकार, ग्यारह इन्द्रियाँ, पाँच विषय और पाँच भूत-इस प्रकार चौबीस तत्त्व हैं, चौबीस तत्त्व स्वरूप, ९५३ पञ्चविंशाख्य पुरुष -चौबीस तत्त्वों से परे विद्यमान, पचीसवें तत्त्व स्वरूप, ९५४ सप्तविंशतितारेशः-अश्विनी आदि सत्ताइस नक्षत्रों के स्वामी, ९५५ सप्तविंशतियोगकृतः-सत्ताइस योगों के कर्ता ।।१५४।।

द्वात्रिंशद्भैरवाधीशश्चतुस्त्रिंशन्महाह्लदः ।
षट्त्रिंशत्तत्त्वसम्भूतिरष्टात्रिंशत्कलातनुः ।।१५५

९५६ द्वात्रिंशद्भैरवाधीशः-बत्तीस भैरवों के स्वामी (असिताङ्ग आदि चार भैरव हैं, जो आठ-आठ के समुदाय हैं। इस प्रकार कुल बत्तीस भैरव हैं), ९५७ चतुस्त्रिंशमहाह्लदः-पुष्कर आदि जो देवताओं द्वारा खोदे गये विशाल सरोवर हैं, वे पवित्र महाह्लद कहलाते हैं। उनकी संख्या चौंतीस बतलाई गई है। ये चौंतीस

महाह्लद कहलाते हैं वे, ९५८ षट्त्रिंशतत्त्वसम्भूतिः-शैव-तन्त्रोक्त जो शिव आदि पृथ्वी-पर्यन्त छत्तीस तत्त्व हैं, उनकी उत्पत्ति के कारण, ९५९ अष्टात्रिंशत्कलातनुः-अग्नि की दस, सूर्य की बारह और चन्द्रमा की सोलह कलाएँ हैं, इस प्रकार से कुल अड़तालीस कलाएँ होती है। ये सब जिनके शरीर हैं वे गणपति ॥१५५॥

नमदेकोनपञ्चाशन्मरुद्वर्गनिरर्गलः।
पञ्चाशदक्षरश्रेणी पञ्चाशद्रुद्रविग्रहः ॥१५६

९६० नमदेकोनपञ्चाशन्मरुद्वर्गनिरर्गलः-उन्चासमरुद्गणों से नमस्कृत एवं अप्रतिहत गति वाले, ९६१ पञ्चाशदक्षरश्रेणी-पचास अक्षर मालारूप, ९६२ पञ्चाशद्रुद्रविग्रहः-श्री कण्ठ आदि पचास शिव स्वरूप ॥१५६॥

पंचाशद्विष्णुशक्तीशः पंचाशन्मातृकालयः।
द्विपंचाशद्वपुः श्रेणी त्रिषष्टचक्षरसंश्रयः ॥१५७

९६३ पंचाशद्विष्णुशक्तीशः-केशव आदि विष्णुरूप और कीर्ति आदि उनकी शक्तियां-ये सब पचास की संख्या में हैं, इन सब के स्वामी, ९६४ पंचाशन्मातृकालयः-पचासमातृका वर्णों के आलय अथवा लयस्थान नादस्वरूपः ९६५ द्विपंचाशद्वपुःश्रेणी-लिङ्गपुराण में वर्णित जो बावन पाश हैं, वे नूतन शरीर प्रदान करने वाले हैं, अतः बावन शरीर पङ्क्ति-स्वरूप, ९६६ त्रिषष्टचक्षरसंश्रयः-तिरेसठ अक्षरों के आधार ॥१५७

चतुः षष्टचर्णनिर्णेता चतुः षष्टिकलानिधिः।
चतुः षष्टिमहासिद्धयोगिनीवृन्दवन्दितः ॥१५८

९६७ चतुः षष्टचर्णनिर्णेता-चौसठ अक्षरों के निर्णायक, ९६८ चतुः षष्ट कलानिधिः चौसठ कलाओं के आधार, ९६९ चतुः षष्टिमहासिद्धयोगिनीवृन्दवन्दितः-अक्षोम्य(?) आदि चौसठ महासिद्धों और उतनी ही योगिनियों के समुदाय से वन्दित ॥१५८

(?) वर्णों की संख्या तिरेसठ अथवा चौसठ मानी गयी है। इनमें इक्कीस स्वर पचीस स्पर्श, आठ यादि एवं चार यम कहे गए हैं। अनुस्वार, विसर्ग, दो पराश्रित वर्ण-जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय (≍ क और ≍ प) और दुःस्पष्ट लकार-ये तिरेसठ वर्ण हैं। इनमें प्लुत लकार को और गिन लिया जाय तो वर्णों की संख्या चौसठ हो जाती है।

अष्टषष्टिमहातीर्थक्षेत्रभैरवभावनः।
चतुर्नवतिमन्त्रात्मा षण्णवत्यधिकप्रभुः ॥१५९

९७० अष्टषष्टिमहातीर्थ क्षेत्र भैरव भावनः—काशीखण्ड और पद्मपुराण में शिव-सम्बन्धी अड़सठ महातीर्थ बतलाए गए हैं। उन सभी तीर्थ क्षेत्रों में भैरव शिवकी भावना करने वाले, ९७१ चतुर्नवतिमन्त्रात्मा-अड़तीस कलामन्त्र और पचास मातृका कलाएं-ये अठासी मन्त्र हुए। इनके अतिरिक्त हंस, शुचि, प्रतद्विष्णु, विष्णु, योनि और त्र्यम्बक-ये छः विष्णु की मूलविद्याएं हैं। इन सबका योग चौरानवें हुआ। इस प्रकार चौरानवें मन्त्र स्वरूप. ९७२ षण्णवत्यधिकप्रभुः-तन्त्रराज में श्री चक्र के छियानवें देवता बतलाये गए हैं। विद्या और गणेश के योग से अधिक देवता हो जाते हैं। इस प्रकार छियानवे से अधिक देवताओं के अधिपति।१५९

शतानन्दः शतधृतिः शतपत्रायतेक्षणः ।
शतानीकः शतमस्वः शतधारावरायुधः ।।१६०

९७३ शतानन्दः-मानुषादि शतगुणोत्तर आनन्द-स्वरूप, ९७४ शतधृतिः-अनन्त ब्रह्माण्डों को धारण करने वाले, ९७५ शतपत्रायतेक्षणः-प्रफुल्ल कमल के समान विशाल नेत्रवाले, ९७६ शतानीकः-बहुसंख्यक सैन्यशक्ति से सम्पन्न, ९७७ शतमस्वः-सौयज्ञों का अनुष्ठान करने वाले इन्द्रस्वरूप, ९७८ शतधारावरायुधः-सौधारों अथवा अरों से युक्त 'वज्र' नामक श्रेष्ठ आयुध धारण करने वाले ।।१६०

सहस्रपत्रनिलयः सहस्रफणभूषणः ।
सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।।१६१

९७९ सहस्रपत्रनिलयः-ब्रह्मरन्ध्रगत सहस्रदलकमलमें विराजमान, ९८० सहस्रफणभूषणः-सहस्रफणधारी सर्पों से विभूषित, ९८१ सहस्रशीर्षा पुरुषः-असंख्य मस्तक वाले परमात्मा, ९८२ सहस्राक्षः-सहस्त्रों नेत्रवाले, ९८३ सहस्रपात् सहस्रों पैरोंवाले ।।१६१

सहस्रनामसंस्तुत्यः सहस्राक्षबलापहः ।
दशसाहस्रफणभृत्फणिराजकृतासनः ।।१६२

९८४ सहस्रनामसंस्तुत्यः-सहस्रनामों द्वारा स्तवनीय, ९८५ सहस्राक्षबलापहः-इन्द्रकेबलको भी विध्वस्त करदेनेवाले, ९८६ दशसाहस्रफणभृतफणिराजकृतासनः-दसहजार फणधारण करने वाले नागराज के ऊपर आसीन ।।१६२

अष्टाशीतिसहस्राद्यमहर्षिस्तोत्रयन्त्रितः ।
लक्षाधीशप्रियाधारो लक्षाधारमनोमयः ।।१६३

९८७ अष्टाशीतिसहस्राद्यमहर्षिस्तोत्रयन्त्रितः-अठासीहजार की संख्या वाले आदि महर्षियों के द्वारा किए गए स्तोत्र के द्वारा वशीभूत, ९८८ लक्षाधीशप्रियाधारः-लक्षपतियों के प्रिय आधार, ९८९ लक्षाधारमनोमयः-लक्ष (लक्ष्य) पर एकाग्र किए गए चित्तवाले, अथवा एकाग्रचित सत्पुरुषस्वरूप ।।१६३

चतुर्लक्षजपप्रीतश्चतुर्लक्षप्रकाशितः ।
चतुरशीतिलक्षाणां जीवानां देहसंस्थितः ।।१६४

९९० चतुर्लक्षजपप्रीतः-चारलाख मन्त्र के जपसे प्रसन्न होने वाले, ९९१ चतुर्लक्ष प्रकाशितः-अठारह पुराणों के चार लाख श्लोकों द्वारा प्रकाशित रूपवाले, ९९२ चतुरशीतिलक्षाणां जीवानां देहसंस्थितः-चौरासीलाख प्रकारके जीवोंके शरीर में विराजमान ।।१६४

कोटिसूर्यप्रतीकाशः कोटिचन्द्रांशुनिर्मलः ।
शिवाभवाध्युष्टकोटिविनायकधुरंधरः ।।१६५

९९३ कोटिसूर्यप्रतीकाशः-करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी, ९९४ कोटिचन्द्रांशुनिर्मलः-करोड़ों चन्द्रमाओं की किरणों के समान निर्मल, ९९५ शिवाभवाध्युष्टकोटि विनायक धुरंधरः-पार्वती और शिव के अधीनस्थ करोड़ों विनायकों के संचालन का भार ढोनेवाले ।।१६५

सप्तकोटिमहामन्त्रमन्त्रितावयवद्युतिः ।
त्रयस्त्रिंशत्कोटिसुरश्रेणीप्रणतपादुकः ।।१६६

९९६ सप्तकोटिमहामन्त्रमन्त्रितावयवद्युतिः-सात करोड़ महामन्त्रों से मन्त्रित अवयवों की कान्ति से प्रकाशमान, ९९७ त्रयस्त्रिंशत्कोटिसुरश्रेणीप्रणतपादुकः-जिनकी चरणपादुकाओं में तैंतीस करोड़ देवताओं की पङ्क्ति प्रणाम करती है, वे ।।१६६

(अनन्तदेवतासेव्योह्यनन्तमुनिसंस्तुतः※।)
अनन्तनामानन्त श्रीरनन्तानन्तसौख्यदः ।
ॐइति वैनायकं नाम्नां सहस्रमिदमीरितम्ः ।।१६७

९९८ अनन्तनामा-अनन्तनाम वाले, ९९९ अनन्त श्रीः-अनन्तविद्या, सम्पत्ति और कीर्ति वाले, १००० अनन्तानन्तसौख्यदः-अनन्तानन्त सौख्य प्रदान करने वाले। इस प्रकार गणेशजी के ये सहस्रनाम बतलाए गए ।।१६७

गणेश सहस्रनाम माहात्म्य

इदं ब्राह्मे मुहूर्ते वै यः पठेत् प्रत्यहं नरः ।
करस्थं तस्य सकलमैहिकामुष्मिकं सुखम् ।।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं धैर्यं शौर्यं बलं यशः ।
मेधा प्रज्ञा धृतिः कान्ति सौभाग्यमतिरूपता ।।१६८
सत्यं दया क्षमा शान्तिर्दाक्षिण्यं धर्मशीलता ।
जगत्संयमनं विश्वसंवादो वादपाटवम् ।।१७०
सभापाण्डित्यमौदार्यं गाम्भीर्यं ब्रह्मवर्चसम् ।
औन्नत्यं च कुलं शीलं प्रतापो वीर्यमार्यता ।।१७१
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं स्थैर्यं विश्वातिशायिता ।
धनधान्याभिवृद्धिश्च सकृदस्य जपाद्भवेत् ।।१७२

जो मनुष्य प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्त में इन नामों का पाठ करता है, उसके हाथ में लौकिक और पारलौकिक समग्र सुख आ जाते हैं। इसके एक बार जप करने से आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, धैर्य, शौर्य, बल, यश, धारणावती, बुद्धि, प्रज्ञा, धृति, कांति सौभाग्य, अतिशयरूप-सौन्दर्य, सत्य, दया, क्षमा, शान्ति, उदारता, धर्मशीलता, जगद्-वशीकरण, सबकी अनुकूलता, शास्त्रार्थ में पटुता, सभा पाडित्य, उदारता, गम्भीरता, ब्रह्मतेज, उन्नति, उत्तमकुल, शील, प्रताप, वीर्य, आर्यत्व, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिक्य स्थिरता, विश्व में उत्कर्ष और धन-धान्य की वृद्धि-ये सभी उत्तम फल प्राप्त होते हैं ।।१६८-१७२

वश्यं चतुर्विधं नृणां जपादस्य प्रजायते ।
राज्ञो राजकलत्रस्य राजपुत्रस्य मन्त्रिणः ।।१७३

※ अनन्त देवता सेव्यः-असंख्य देवताओं द्वारा सेवनीय, अनन्तमुनि सस्तुतः-अनन्त मुनिगणों द्वारा संस्तुत ।

जप्यते यस्य वश्यार्थं स दासस्तस्य जायते ।
धर्मार्थकाममोक्षाणामनायासेन साधनम् ।।१७४

इस मन्त्र के जप से मनुष्यों के लिए चार प्रकार का वशीकरण सिद्ध होता है-राजाका, राजा के अन्त:पुरका, राजकुमारका तथा राज्यमन्त्रीका जिसको वशमें करने के लिए इस सहस्र नामका जप किया जाता है, वह उस प्रयोग करनेवाल का दास हो जाता है। इस सहस्रनामके द्वारा बिना किसी प्रयासके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि होती है ।।१७३- ७४

शाकिनीडाकिनीरक्षोयक्षोरगभयापहम् ।
साम्राज्यसुखदं चैव समस्तरिपुमर्दनम् ।।१७५

यह स्तोत्र शाकिनी, डाकिनी, राक्षस, यक्ष और सर्प के भय का नाश करने वाला है। साम्राज्यका सुख देने वाला तथा समस्त शत्रुओं का मर्दन करने वाला है ।।१७५

समस्तकलहध्वंसि दग्धबीजप्ररोहणम् ।
दु:स्वप्नशमनं क्रुद्धस्वामिचित्तप्रसादनम् ।।१७६

इस सहस्रनामसे सब प्रकार के कलह-क्लेश का नाश होता है, इससे जले हुए बीजमें भी अंकुर निकल आते हैं। यह बुरे स्वप्नों के कुफल को दूर करता है और क्रोध में भरे हुए स्वामी के चित्त को भी प्रसन्न करने वाला है ।।१७६

षट्कर्माष्टमहासिद्धि त्रिकालज्ञानसाधनम् ।
परकृत्याप्रशमनं परचक्रविमर्दनम् ।।१७७
संग्रामरङ्गे सर्वेषामिदमेकं जपावहम् ।
सर्ववन्ध्यात्वदोषघ्नं गर्भरक्षैककारणम् ।।१७८

यह सहस्रनाम मोहन-आकर्षण आदि छ: कर्म, आठ महासिद्धि तथा त्रिकाल ज्ञानका साधन करने वा ा है। शत्रुओं द्वारा अपने ऊपर प्रेरित कृत्याको शान्त करने वाला तथा शत्रुमण्डल का मर्दन करने वाला है। संग्राम की रङ्गभूमि में यह अकेला ही सबको विजय प्रदान कराने वाला है। वन्ध्यापन सम्बन्धी सम्पूर्ण दोषों का नाशक तथा गर्भकी रक्षाका मुख्य साधन है ।।१७७-१७८

पठ्यते प्रत्यहं यत्र स्तोत्रं गणपतेरिदम् ।
देशे तत्र न दुर्भिक्षभीतयो दुरितानि च ।।१७९

जहां प्रतिदिन गणपति के इस स्तोत्र का पाठ किया जाता है, उस देश में दुर्भिक्ष, ईतिभय और दुराचार नहीं होते ।।१७९

न तद्गृहं जहाति श्रीर्यत्रायं जप्यते स्तवः ।
क्षयकुष्ठ प्रमेहार्शोभगंदर विषूचिका: ।।१८०
गुल्मं प्लीहानमश्मानमतिसारं महोदरम् ।
कासं श्वासमुदावर्तं शूलं शोफादि सम्भवम् ।।१८१
शिरोरोग वमि हिक्कां गण्डमालामरोचकम् ।
वातपितकफद्वन्द्वत्रिदोषजनितज्वरम् ।।१८२

आगन्तु विषमं शीतमुष्णं चैकाहिकादिकम् ।
इत्यायुक्तमनुक्तं वा रोगं दोषादि सम्भवम् ।।१८३
सर्वं प्रशमयत्याशु स्तोत्रस्यास्य सकृज्जपः ।
सकृत्पाठेन संसिद्धः स्त्रीशूद्रपतितैरपि ।।१८४
सहस्रनाममन्त्रोऽयं जपितव्यः शुभाप्तये ।।

'जहां इस स्तोत्र का पाठ होता है, उस घर को लक्ष्मी कभी नहीं छोड़ती है । क्षय, कोढ, प्रमेह, बवासीर, भगंदर, विषचिका (हैजा), गुल्म, प्लीहा, पथरी अतिसार, उदरवृद्धि, खांसी, दमा, ऊपर की डकार उठना, शूल, शोथ, आदि शिरोरोग, वमन, हिचकी, गण्डमाला (गलसूआ), अरुचि, वात-पित्त-कफ जनित द्वन्द्व, त्रिदोषजनित ज्वर, आगन्तुक ज्वर, विषमज्वर, शीतज्वर, उष्णज्वर, एकाहिक आदिज्वर' यहां कथित या अकथित दोषादि-सम्भव-रोग—इन सबका इस स्तोत्र के एक बार के पाठ करने से ही शीघ्र शमन हो जाता है । यह सहस्रनाम एक बार के पाठ से ही सिद्ध हो जाता है । स्त्री, शूद्र और पतितों को भी शुभ की प्राप्ति के लिए इस सहस्रनाम स्तोत्र का जप (पाठ) करना चाहिये । १८०-१८५½ ।

महागणपतेः स्तोत्रं सकामः प्रजपन्निदम् ।।१८५
उच्छितान् सकलान् भोगानुपभुज्येह पार्थिवान् ।
मनोरथफलैर्दिव्यैर्व्योमियानैर्मनोरमैः ।।१८६
चन्द्रेन्द्रभास्करोपेन्द्रब्रह्मशर्वादिसद्मसु ।
कामरूपः कामगतिः कामतोविचरन्निह ।।१८७
भुक्त्वा यथेप्सितान् भोगानभीष्टान् सहबन्धुभिः ।
गणेशानुचरो भुत्वा महागणपतेः प्रियः ।।१८८
नन्दीश्वरादिसानन्दो नन्दितः सकलैर्गणैः ।
शिवाभ्यां कृपया पुत्रनिर्विशेषं च लालितः ।।१८९
शिवभक्तः पूर्णकामो गणेश्वरवरात् पुनः ।
जातिस्मरो धर्मपरः सार्वभौमोऽभिजायते ।।१९०

महागणपति के इस स्तोत्र का सकाम भाव से जप करने वाला पुरुष इहलोक में पृथ्वीपर सुलभ समस्त मनोवांछित भोगों को भोगकर मनोरथ-फलों की प्राप्ति पूर्वक दिव्य एवं मनोरम व्योम-विमानों पर बैठकर चन्द्र, इन्द्र, सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा और शिव आदि के लोकों में इच्छानुसार रूप धारण करके विचरता है, जहां-जहां इच्छा होती है, वहां-वहां पहुँचता है । अपने बन्धुजनों के साथ अभीष्ठ भोगों को भोगता है, महागणपति का प्रिय अनुचर होता है और नन्दीश्वर आदि के साथ आनन्दित हो सकल शिवगणों के द्वारा अभिनन्दित होता है । पार्वती और शिव ये दोनों पुत्र की भांति उसका लाड-प्यार करते हैं । वह शिवभक्त तथा पूर्णकाम होता है । फिर गणेशजी के वरदान से इहलोक में धर्मपरायण सार्वभौम सम्राट होता है और उसे पूर्वजन्म की बातें स्मरण रहती हैं ।।१८५-१९०

निष्कामस्तु जपन्नित्यं भक्त्या विघ्नेशतत्परः।
योगसिद्धिं परां प्राप्य ज्ञानवैराग्य संस्थितः ।।१९१
निरन्तरोदितानन्दे परमानन्दसंविदि ।
विश्वोतीर्णे परे पारे पुनरावृत्तिवर्जिते ।।१९२
लीनो वैनायके धाम्नि रमते नित्यनिर्वृतः ।।

जो भक्तिभाव से गणेश के भजन में तत्पर हो निष्काम भाव से इस स्तोत्र का नित्य पाठ करता है, वह योगजनित परमसिद्धि को पा लेता है और ज्ञान-वैराग्यनिष्ठ हो जहां निरन्तर आनन्द का उदय होता है, जो परमानन्द संवित्स्वरूप, लोकातीत, पुनरावृत्तिरहित तथा परम पाररूप है, उस गणपतिधाम में नित्यलीन एवं परमानन्द-निमग्न हो रमता रहता है ।१९१-१९२

यो नामभिर्हुनेदेतैरर्चयेत् पूजयेन्नरः ।।१९३
राजानो वश्यतां यान्ति रिपवो यान्ति दासताम् ।
मन्त्राः सिध्यन्ति सर्वेऽपि सुलभास्तस्य सिद्धयः ।।१९४

जो मनुष्य इन सहस्रनामों द्वारा हवन, अर्चन और पूजन करता है, उसके राजा लोग वश में होते और शत्रु दासवत् हो जाते हैं। उसके समस्त मन्त्र सिद्ध होते हैं और उसको सम्पूर्ण सिद्धियां सुलभ होती हैं ।।१९३-१९४

मूलमन्त्रादपि स्तोत्रमिदं प्रियतरं मम ।
नभस्ये मासि शुक्लायां चतुर्थ्यां मम जन्मनि ।।१९५
दुर्वाभिर्नामभिः पूजां तर्पणं विधिवच्चरेत् ।
अष्टद्रव्यैर्विशेषेण जुहुयाद्भक्तिसयुतः ।।१९६
तस्येप्सितानि सर्वाणि सिद्धचन्त्यत्र न संशयः ।
इदं प्रजप्तं पठितं पाठितं श्रावितं श्रुतम् ।।१९७
व्याकृतं चर्चितं ध्यातं विमृष्टमभिनन्दितम् ।
इहामुत्र च सर्वेषां विश्वैश्वर्यप्रदायकम् ।।१९८

श्री गणेशजी कहते हैं—मूलमन्त्र की अपेक्षा भी यह स्तोत्र मुझे अधिक प्रिय है। भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष की चतुर्थी-तिथि को मेरे जन्म-दिवस पर इन सहस्रनामों द्वारा दुर्वार्पण करते हुए विधिवत् मेरा पूजन एवं तर्पण करें। विशेषतः अष्ठगन्ध द्रव्यों द्वारा भक्तिपूर्वक हवन करें। जो ऐसा करता है, उसके सम्पुर्ण अभीष्ट मनोरथ सिद्ध होते है, इनमें संशय नहीं है। इसके जप, पठन, पाठन, सुनना, सुनाना, व्याख्यान, चर्चा, ध्यान, विचार और अभिनन्दन—ये इहलोक और परलोक में सबके लिए सम्पूर्ण ऐश्वर्य को देने वाले हैं ।१९५-१९८

स्वच्छन्दचारिणाप्येष येनायं धार्यते स्तवः ।
स रक्ष्यते शिवोद्भूतैर्गणैरध्युष्टकोटिभिः ।।१९९

जो इस स्तोत्र को धारण करता है, वह स्वच्छन्दता पूर्वक कहीं भी क्यों न विचरता रहे, भगवान् शिव के करोड़ोंगण उसकी रक्षा करते रहते हैं ।१९९

पुस्तके लिखितं यत्र गृहे स्तोत्रं प्रपूजयेत् ।
तत्र सर्वोत्तमा लक्ष्मीः संनिधत्ते निरन्तरम् ।।२००

जिस घर में इस स्तोत्र को पुस्तक रूप में लिखकर कोई इसका पूजन करता है, वहां सर्वोत्कृष्ट लक्ष्मी निवास करती है ।।२००

दानैरशेषैरखिलैर्व्रतैश्च
तीर्थैरशेषैः सकलैर्मखैश्च ।
न तत्फल विन्दति यद्गणेश-
सहस्रनाम्नां स्मरणेन सद्यः ।।२०१

एतन्नाम्ना सहस्रं पठति दिनमणौ प्रत्यहं प्रोज्जिहाने
सायं मध्यंदिन वा त्रिषवणमथवा सततं वा जनो यः ।
स स्यादैश्वर्य धुर्यः प्रभवति च सतां कीर्तिमुच्चैस्तनोति
प्रत्यूह हन्ति विश्व वशयति सुचिर वर्धते पुत्रपौत्रैः ।।२०२

श्रीगणेश सहस्रनाम का स्मरण (जप) करके मनुष्य जिस फल को तत्काल प्राप्त कर लेता है, उसे सब प्रकार के दान, व्रत, तीर्थसेवन और यज्ञों के अनुष्ठान द्वारा नहीं पा सकता । जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदय के समय, मध्याह्न-काल में या सायंकाल में अथवा तीनों समय या सदा ही इन सहस्रनामों का पाठ करता है, वह सत्पुरुषों में ऐश्वर्यशाली होता है, अपनी कीर्ति का अतिशय विस्तार करता है, विघ्नों को नष्ट कर देता है, संसार को वश में कर लेता है तथा वह पुत्र-पौत्रों के साथ सुदीर्घ काल तक निरन्तर वृद्धिशील होता है ।२०१-२०२

अकिंचनोऽपि मत्प्राप्तिचिन्तको नियताशनः ।
जपेत्तु चतुरो मासान् गणेशार्चनतत्परः ।।२०३
दरिद्रतां समुन्मूल्य सप्तजन्मानुगामपि ।
लभते महतीं लक्ष्मीमित्याज्ञा पारमेश्वरी ।।२०४
आयुष्यं वीतरोग कुलमतिविमलं सम्पदश्चार्तदानाः
कीर्तिर्नित्यावदाता भणितिरभिनवा कान्तिरव्याधिभव्या ।
पुत्राः सन्तः कलत्र गुणवदभिमत यद्यदेतच्च सत्यं
नित्यं यः स्तोत्रमेतत् पठति गणपतेस्तस्य हस्ते समस्तम् ।।२०५

जिसके पास कुछ नहीं है, जो दरिद्र है, वह मेरी प्राप्ति के उद्देश्य से नियमित आहार करके मुझ गणेश के पूजन में तत्पर रहकर चार मास तक इस स्तोत्र का जप करे । ऐसा करने से वह सात जन्मों से चली आने वाली दरिद्रता का भी उन्मूलन करके महती लक्ष्मी को प्राप्त कर लेता है, यह मुझ परमेश्वर की आज्ञा है । आयु, आरोग्य, निर्मलकुल, पीड़ितों को दी जा सकने वाली सम्पत्ति, नित्य उज्ज्वल कीर्ति, नयी-नयी सूक्ति, रोगहीनता के साथ भव्य कान्ति, सत्पुत्र, मनोनुकूल गुणवती स्त्री और सत्यसंकल्पलता-ये समस्त वस्तुएं, जो गणपति के इस स्तोत्र का नित्य पाठ करता है, उसके हाथ में आ जाती हैं ।।२०३-२०५

।। गणेशस्यैकविंशतिनामपाठः ।।

ॐ गणंजयो गणपतिर्हेरम्बो धरणीधरः ।
महागणपतिर्लक्षप्रदः क्षिप्रप्रसादनः ।।२०६
अमोघसिद्धिरमितो मन्त्रश्चिन्तामणिर्निधिः ।
सुमङ्गलो बीजमाशापूरको वरदः शिवः ।।२०७
काश्यपो नन्दनो वाचासिद्धो ढुण्ढिविनायकः ।
मोदकैरेभिरत्रैकविंशत्या नामभिः पुमान् ।।२०८
(उपायनं ददेद्भक्त्या मत्प्रसादं चिकीर्षति ।
वत्सरं विघ्नराजस्य तथ्यमिष्टार्थसिद्धये ।।)
यः स्तौति मद्गतमना मदाराधनतत्परः ।
स्तुतो नाम्नां सहस्रेण तेनाहं नात्र संशयः ।।२०९

१ गणंजय, २ गणपति, ३ हेरम्ब, ४ धरणीधर, ५ महागणपति, ६ लक्षप्रद ७ क्षिप्रप्रसादन, ८ अमोघसिद्धि, ९ अमित, १० मन्त्र, ११ चिन्तामणि, १२ निधि, १३ सुमङ्गल, १४ बीज, १५ आशापूरक, १६ वरद, १७ शिव, १८ कश्यप, १९ नन्दन, २० वाचासिद्ध तथा २१ ढुण्ढि विनायक—ये इक्कीस नाम-मोदक हैं। जो पुरुष इन मोदक स्वरूप इक्कीस नामों द्वारा (मुझे भक्तिपूर्वक उपहार अर्पित करता है; मेरा प्रसाद चाहता है और अभीष्ट सिद्धि के लिए एक वर्ष तक मुझ विघ्नराज के इस यथार्थ स्तोत्र का पाठ करता है;) मुझ में मन लगाकर, मेरी आराधना में तत्पर रहकर मेरा स्तवन करता है, उसके द्वारा सहस्रनाम स्तोत्र से मेरी स्तुति हो जाती है, इसमें संशय नहीं है ।।२०६-२०९

नमो नमः सुरवरपूजिताङ्घ्रये
नमो नमो निरुपममङ्गलात्मने ।
नमो नमो विपुलपदैकसिद्धये
नमो नमः करिकलभाननाय ते ।।२१०

श्रेष्ठ देवताओं द्वारा पूजित चरण वाले गणेश को नमस्कार है नमस्कार है। अनुपम मङ्गलस्वरूप गणपति को बारम्बार नमस्कार है। एक मात्र जिनसे विपुलपद-परमधाम की सिद्धि होती है, उन गणाधीश को बारम्बार नमस्कार है। प्रभो ! गजशावक के समान मुखवाले आपको बारम्बार नमस्कार है ।।२१०

।। इति श्री गणेश पुराणे उपासना खण्डे महागणपति प्रोक्तं
गणेश सहस्र नाम स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

सोपान ९

इक्कीस प्रधान गणपति क्षेत्र, अष्ट विनायक क्षेत्र तथा कतिपय अन्य स्थान

इक्कीस प्रधान गणपति क्षेत्र

१ मोरेश्वर—गणपत्ति तीर्थों में यह सर्व प्रधान श्री भूस्वानन्द क्षेत्र है। यहाँ 'मयूरेशगणेश' की मूर्ति स्थापित है। यह स्थान पूना (महाराष्ट्र)से४०मील और जेजूरी स्टेशन से १० मील दूर है।

२ प्रयाग (इलाहाबाद) यह प्रसिद्ध तीर्थ उत्तर प्रदेश में हैं। यह ॐ कार गणपति क्षेत्र है। यहां आदि कल्प के आरम्भ में ॐकार ने वेदों सहित मूर्तिमान होकर होकर गणेशजी की स्थापना करके आराधना की थी।

३ काशी (वाराणसी) यह ढुण्डिराज क्षेत्र है। यहां ढुण्ढिराज गणेशजी का प्रसिद्ध मन्दिर है।

४ कलम्ब—यह चिन्तामणि क्षेत्र है। महर्षि गोतम के शाप से छूटने के लिए इन्द्र ने यहाँ चिन्तामणि गणेश की स्थापना करके पूजन किया था। इस स्थान का प्राचीन नाम कदम्बपुर है। आंध्र प्रान्त में बरार क्षेत्र के यवतमाल नगर से यहां मोटर-बस जाती हैं।

५ अदोष—नागपुर-छिन्दवाडा रेलवे-लाइन पर सामनेर स्टेशन है। वहां से यह स्थान लगभग पांच मील दूर है। इसको शमी-विघ्नेश-क्षेत्र नाम से बतलाया जाता है। महापाप-संकट और शत्रु नामक दैत्यों के संहार के लिए देवताओं तथा ऋषियों ने यहाँ तपस्या की और भगवान् गणेशजी की स्थापना की। वामन भगवान् ने भी बलियज्ञ में जाने से पूर्व यहाँ गणेशजी की आराधना की थी।

६ पाली—इस स्थान का प्राचीन नाम पल्लीपुर है। बल्लाल नामक वैश्य बालक की भक्ति से यहाँ गणेशजी का आविर्भाव हुआ था। इसलिए इसको बल्लाल विनायक क्षेत्र कहा जाता है। यह मूल क्षेत्र तो शास्त्रों में सिन्धु देश में बतलाया गया है किन्तु उसका तो अब पता नहीं चलता। यह स्थान समुद्रतटवर्ती होने से महाराष्ट्र राज्य का ही यहां सिन्धु देश के नाम से उल्लेख किया गया है। एक दूसरी सिन्धु नदी भी इसके पास ही है। अब तो यह स्थान महाराष्ट्र प्रान्त के कुलवा जिले में पाली नामक क्षेत्र ही प्रसिद्ध है। वहाँ तक कुलवा से मोटर-बसें जाती हैं।

७ पारिनेर—यह मङ्गलमूर्ति गणपति क्षेत्र है। मङ्गल ग्रह ने यहाँ तपस्या करके गणेशजी की आराधना की थी, धर्म ग्रन्थों में यह स्थान नर्मदा के किनारे होने का उल्लेख मिलता है। किन्तु इस स्थान का कहीं। पता नहीं लगा है।

८ गङ्गामसले—यह भालचन्द्र गणेश क्षेत्र है। चन्द्रमा ने यहाँ गणेशजी की आराधना की थी। काचोगुड़ा-मनमाड रेलवे-लाइन पर परभनी से छब्बीस मील दूर सैलू स्टेशन है। वहाँ से पन्द्रह मील दूर गोदावरी के मध्य में श्रीभालचन्द्र गणेश मन्दिर है।

९ राक्षस-भुवन—काचीगुडा-मनमाड लाइन पर जालना स्टेशन है। वहाँ से तेतीस मील पर गोदावरी के किनारे यह स्थान है। यह विज्ञान गणेश क्षेत्र है। गुरु दत्तात्रेय ने यहाँ विज्ञान गणेश की स्थापना कर अर्चना तपस्या की थी। यहाँ पर यह विज्ञान गणेश का मन्दिर है।

१० येऊर—पूना से पांच मील दूर विघ्नेश्वर स्थान है। ब्रह्माजी ने सृष्टि कार्य में आने वाले विघ्नों के नाश के लिए यहाँ गणेशजी की स्थापना अर्चना की थी।

११ सिद्धटेक-उम्बई—रायचूर लाइन पर धौंड जंकशन से ६ मील दूर बोरीव्यल स्टेशन है। यहां से लगभग ६ मील दूर भीमा नदी के किनारे यह स्थान है। इसका प्राचीन नाम सिद्धाश्रम है। भगवान् विष्णु ने मधु-कैटभ दैत्यों को मारने के लिए यहां पर गणेशजी का पूजन किया था। द्वापर के अन्त में व्यासजी ने वेदों का विभाजन निर्विघ्न सम्पन्न करने के लिए भगवान् विष्णु द्वारा स्थापित इस गणपति मूर्ति का पूजन किया था।

१२ राजनगाँव—इस को मणिपुर-क्षेत्र कहते हैं। शंकर भगवान् त्रिपुरासुरयुद्ध में प्रथम भग्न-मनोरथ हो गए। उस समय इस स्थान पर उन्होंने श्रीगणेशजी की स्थापना कर स्तवन किया, तब त्रिपुर विध्वंस में सफल हुए। यहां यह शिवजी द्वारा स्थापित गणेशजी की मूर्ति है। पूना से राजन गाँव मोटर-बस जाती है।

१३ विजयपुर—अनलासुर के नाशार्थ यहाँ गणेशजी का आविर्भाव हुआ था। पुराण ग्रन्थों में यह क्षेत्र तेलंगदेश में होना बतलाया गया है। किन्तु स्थान का सही पता नहीं चला। (मद्रास-मंगलोर लाइन पर ईरोड़ से १६ मील दूर विजयमंगलम् स्टेशन है।) वहाँ पर श्रीगणपतिजी का प्रख्यात मन्दिर है, किन्तु निश्चय यह नहीं कहा जा सकता कि यह वही क्षेत्र है क्या ?

१३ कश्यपाश्रम—यह क्षेत्र भी शास्त्र वर्णित है, किन्तु स्थान का सही पता नहीं ज्ञात हो सका। महर्षि कश्यपजी ने अपने आश्रम में गणेशजी की स्थापना करके अर्चना की थी।

१५ जलेशपुर—मयदानव द्वारा निर्मित त्रिपुर के असुरों ने इस नाम के स्थान पर गणेशजी की स्थापना करके पूजन किया था। यह क्षेत्र व स्थान भी अज्ञात ही है।

१६ लेह्याद्रि—पूना जिले में जुन्नर तालुका है। वहाँ से लगभग पाँच मील दूर पर यह स्थान है। पार्वती जी ने यहाँ पर गणेशजी को पुत्र रूप में पाने के लिए तपस्या की थी।

१७ वेरोल—इसका प्राचीन नाम ऐलापुर क्षेत्र है। औरंगाबाद से वेरोल (इलोरा) मोटर-बस जाती है। यहाँ घृष्णेश्वर (घुश्मेश्वर) ज्योतिर्लिङ्ग है। उसी मन्दिर में गणेशजी की मूर्ति भी हैं। तारकासुर से युद्ध में स्कन्द विजय लाभ करने में पहले सफल नहीं हुए। इसके पश्चात् शंकर जी के आदेश से उन्होंने इस

स्थान पर गणेशजी की स्थापना की और उनका अर्चन किया, तब तारकासुर को युद्ध में मारा। स्कन्द द्वारा स्थापित इस गणेश मूर्ति का नाम लक्ष-विनायक है।

१८ पद्मालय—यह प्राचीन प्रवाल क्षेत्र है। बम्बई-भुसावल रेलवे लाइन पर पाचोरा जकशन है, वहाँ से १६ मील दूर महसावद स्टेशन है। वहाँ से लगभग पाँच मील दूर यह पद्मालय तीर्थ है। यहां कार्तवीर्य (सहस्राजुन) तथा शेषजी ने श्रीगणेशजी की आराधना की थी। दोनों के द्वारा दो गणपति-मूर्तियाँ यहाँ स्थापित हैं। मन्दिर के सामने ही 'उगम' सरोवर है।

१९ नामलगाँव – काचीगुड़ा-मनमाड़ लाइन पर जालना स्टेशन है। जालना से बीड़ जानेवाली मोटर-बस से घोसापुरी गाँव तक पहुँचा जा सकता है। वहाँ से बैलगाड़ी अथवा पैदल नामलगाँव जाना पड़ता था। सम्भव है आजकल वहाँ सड़क होगयी हों और बस भी चलने लग गयी हो। इस स्थान का प्राचीन नाम अमलाकम क्षेत्र है। यम-धर्मराज ने माता के शाप से छूटने के लिए यहाँ गणेशजी की आराधना की थी। यहाँ पर यमराज द्वारा स्थापित आशापूरक श्रीगणेशजी की मूर्ति है। यहाँ पर 'सुबुद्धिप्रद तीर्थ' नामक कुण्ड भी है। भुशुण्डि योगीन्द्र की भी यहाँ मूर्ति है।

२० राजूर—काचीगुड़ा-मनमाड रेलवे लाइन पर जालना स्टेशन है। जालना स्टेशन से यह स्थान चौदह मील दूर है। इसको राजसदन-क्षेत्र कहते हैं। सिन्दूरासुर का वध करने के पश्चात् श्रीगणेशजी ने यहाँ वरेण्य राजा को 'गणेशगीता' का उपदेश किया था। यह स्थान अब 'गणपति का राजूर' के नाम से प्रख्यात है।

२१ कुम्भकोणम्—दक्षिण भारत के प्रसिद्ध तीर्थों में इस तीर्थ की गणना होती है। यह श्वेत विश्वेश्वर क्षेत्र है। यहां कावेरी तट पर 'श्री सुधा-गणेश' की मूर्ति स्थापित है। अमृत-मंथन के समय जब पर्याप्त श्रम होने पर भी अमृत नहीं निकला, तब देवताओं ने यहां गणेशजी की स्थापना करके पूजा की थी। तत्पश्चात् अमृत प्राप्त हो सका था।

(साभार-कल्याण में प्रकाशित श्री हेरम्बराज बाल शास्त्री के लेख से संगृहीत)

प्रमुख अष्ट विनायक क्षेत्र

भारत के महाराष्ट्र प्रान्त में गणेशोपासना अन्य प्रान्तों से सर्वाधिक प्रचलित है। महाराष्ट्र-प्रान्त में गणेशजी के सैकड़ों ही प्राचीन अर्वाचीन छोटे-बड़े प्रख्यात मन्दिर हैं। गणेशजी के प्रख्यात माने हुए अष्ट गणपति-क्षेत्र भी महाराष्ट्र में ही पाये जाते हैं। इनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

(१) मोर गांव (जिला-पूना)—पूना से चालीस मील दूर यह स्थान है। यह गाणपत्य-सम्प्रदाय का आद्यपीठ माना जाता है। यहाँ के गणेशजी का नाम 'मयूरेश्वर' है। इस स्थान की गणना अष्ट विनायकों में भी प्रमुख रूप में मानी जाती है। यहाँ गणेशजी के आगे एक बहुत बड़े चूहे की मूर्ति है जो पैरों में लड्डू पकड़े हुए हैं। भीतर के आंगन में मुद्गलपुराण के अनुसार आठों कोनों में आठ गणपति प्रतिमाएं स्थापित हैं। प्रतिमा के अगल-बगल सिद्धि-बुद्धि की धातु की

प्रतिमाएं हैं। मूर्ति के सामने मूषक तथा मयूर वाहन के रूप में स्थापित हैं। यह स्थान महान् सिद्धिप्रद माना जाता है। यहाँ सिद्धि दाता मयूरेश्वर गणपति की साधना करके अनेक भक्तों ने कार्य सिद्धियां प्राप्त की हैं।

(२) थेवर (जिला-पूना)—यह स्थान थेऊर पूना से चौदह मील दूर है। यहां के गणपति का नाम 'चिन्तामणि गणेश' है। यहां श्री मोरया गोसावी ने उग्र तपश्चर्या की थी। गणेशजी ने प्रसन्न होकर व्याघ्र के रूप में दर्शन दिये। उस व्याघ्र के प्रतीक रूप में यहाँ एक पाषाण खण्ड स्थापित है। यहाँ गणेशजी की सूंड बायीं ओर एवं पूर्वाभिमुख है।

(३) लेह्याद्रि (जिला-पूना)—यह लेह्याद्रि स्थान पूना से साठ मील दूर है। यह स्थान पहाड़ को खोदकर बनाया गया है। इसके पास प्राचीन बौद्ध गुफाएं हैं। इस स्थान का गणेश पुराण में भी उल्लेख है। यहां पर गणेशजी की प्रतिमा एक आले (ताखे) के भीतर है। यहां के गणेशजी का नाम 'गिरिजात्मज' प्रख्यात है।

(४) ओझर—यह स्थान लेह्याद्रि के पास ही अत्यन्त रमणीक स्थान है। अष्ट-विनायकों में यहां के 'श्री विघ्नेश्वरजी' की बड़ी प्रतिष्ठा है। गणेशजी की मूर्ति की सूंड बांयीं ओर है। मन्दिर अत्यन्त भव्य एवं सुन्दर है।

(५) राजन गांव (जिला-पूना)—यह राजन गांव पूना से इकतीस मील दूर है। यहां के गणेशजी को 'महागणपति' कहते हैं। मन्दिर पूर्वाभिमुख है। प्रतिमा की स्थापना ऐसी कला से की गई है कि सूर्य उत्तरायण तथा दक्षिणायन के मध्य काल में सूर्य की किरणें निश्चित रूप से मूर्ति पर पड़ती हैं उसी के नीचे तहखाने में एक छोटी मूर्ति और है, वही असली मूर्ति बतलाई जाती है। इन गणेशजी का नाम 'महोत्कट' बतलाया जाता है। मुसलमान-शासन के समय में आक्रमणकारियों के भय से यह प्रतिमा इस प्रकार से यहां छिपाकर रखी गयी थी।

(६) पाली (जिला-कुलावा)—यहां के गणेशजी का नाम 'बल्लालेश्वर' है। प्राचीन समय से ही यह स्थान प्रसिद्ध तथा जनता द्वारा अधिक मान्य रहा है। मुद्गल पुराण में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है। इस मन्दिर की कला स्थापना भी इस प्रकार से की गई है कि सूर्योदय के समय में सूर्य की सीधी किरणें स्थापित मूर्ति पर पड़ती हैं। इस मन्दिर के पीछे की ओर श्री धुण्डी विनायक की स्वयभू मूर्ति स्थापित किया हुआ एक और भी मन्दिर है। (नोट—इस स्थान की गणना इक्कीस प्रधान गणपति क्षेत्रों में भी की गई है।)

(७) महड़ (जिला-कुलावा)—यहां के गणेशजी का नाम 'श्रीवरद विनायक' है। यहां के लोगों की मान्यता है कि इस मन्दिर की स्थापना वेद के प्रसिद्ध महर्षि गृत्समद द्वारा की हुई है। गृत्समद महामुनि गणेश के परम प्रखर उपासक हुए और उन्होंने गणेशजी की कृपा का प्रत्यक्ष अनुभव किया था। गृत्समद महर्षि गाणपत्य सम्प्रदाय के आद्य-प्रवर्तक माने जाते हैं। इससे भी यह स्थान अधिक सिद्धपीठ और महत्वपूर्ण माना जाता है।

(८) सिद्धटेक (जिला-अहमदनगर)—यहां के गणेशजी का नाम 'सिद्ध विनायक' है यह स्थान भी अत्यन्त प्रसिद्ध, सिद्ध स्थान तथा ऐतिहासिक महत्त्वपूर्ण है। यहां की गणेश प्रतिमा भी स्वयंभू है। इसकी सूंड दाहिनी ओर झुकी हुई है।
(साभार-कल्याण में प्रकाशित श्री माधव अनन्त फड़के महोदय के लेख से संगृहीत)

कतिपय प्रख्यात मान्यता वाले गणेशजी के स्थान

(१) उज्जैन (अवन्तिका)—मध्य प्रदेश, पुण्यप्रदा क्षिप्रा नदी के तट पर अवन्तिका (उज्जैन) अनादि तीर्थ है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों से अत्यन्त प्रसिद्ध महाकाल शिवलिङ्ग यहां ही है। महाकाल शिव मन्दिर के पास ही बड़े गणेश का मन्दिर है। यहां उनकी अच्छी मान्यता है। वैसे उज्जैन में गणेशजी के अनेक मन्दिर हैं। किन्तु उज्जैन में विभिन्न स्थानों पर षट-विनायकों की स्थापना भी है। और महाकाल मन्दिर के शिवजी की सपरिवार पूजा के क्रम एवं महत्त्व के साथ ही उन छह विनायकों की पूजा का भी विशेष महत्त्व एव मान्यता तथा माहात्म्य है।

(२) चिन्तामणि गणेश (उज्जैन) यह स्थान उज्जैन से लगभग चार मील दूर है।

यहाँ गणेशजीका प्राचीन मन्दिर है। यहाँ पर चैत्र महीने के प्रति बुधवार को विशेष यात्रा होती है।

(३) नवगढ (गोड़वानी) मध्य प्रदेश, यहाँ पर गणेशजी का प्राचीन मन्दिर है जिसमें गणेशजी की अत्यन्त भव्य सिद्धि प्रदान करने वाली मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर के सामने एक बड़ा प्राचीन शमी-वृक्ष (खेजड़ा) का वृक्ष है। जिसकी पत्तियाँ गणेशजी की पूजा में प्रयुक्त होती हैं।

(४) अमर कण्टक (मध्य प्रदेश) नर्मदा का यह उद्गम स्थान है। यहाँ महान् गहन वन है। इस वन में महर्षि भृगुजी का आश्रम है। इस आश्रम में ही सिद्धिविनायक की अत्यन्त भव्य चमत्कृत दो भुजा वाली मूर्ति विराजमान है। और दायें-बायें ऋद्धि-सिद्धि की मूर्तियाँ भी हैं। यह गणेशजी का स्थान भी अत्यन सिद्धप्रद है। बहुत मान्यता है।

(५) इन्दौर (मध्य प्रदेश) यहाँ वड़े गणेश के नाम से बारह फुट ऊँची विशाल सुन्दर गणेशजी की मूर्ति अत्यन्त भव्य एवं आकर्षक है। इसकी इन्दौर में अच्छी मान्यता है।

(६) विरलाग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश, शिव मन्दिर में ही एक मण्डप में श्रीगणेशजी महाराज की बीस फुट ऊँची और बायें-दायें ऋद्धि-सिद्धि की पन्द्रह-पन्द्रह फुट ऊँची तथा एक महीने का गाय का बछड़ा हो, इतनी बड़ी मूषक की मूर्ति अत्यन्त भव्य एवं सुन्दर आकर्षक दर्शनीय है। यहाँ उनकी अच्छी मान्यता है।

(७) सिद्ध-गणेश-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)—सवाईमाधोपुर स्टेशन से पाँच मील दूर पूर्व-दक्षिण की ओर पहाड़ों की ऊँची चोटियों की शृङ्खला से घिरा हुआ, भारतीय इतिहास प्रसिद्ध वीर राणा हमीर का रणथम्भोर नामक किला पर्वत की चोटियों पर बना हुआ है। यह इधर के लाखों जन समुह निवासियों के आराध्य सिद्धिप्रदगणेश का स्थान है। यह भगवान् गणेशजी राजस्थान निवासियों के ही नहीं बल्कि बहुत दूर-दूर के निवासियों के भी आराध्य है। और अत्यन्त सिद्ध दाता के रूप में प्रतिष्ठित हैं। यहां अनेक प्रकार के मंगल कामना अनुष्ठान होते रहते हैं। और कामनाएँ सिद्ध होती हैं। खरीफ-रबी की खेती की बोनी होने के

समय तो कृषकगण गणपति को निमन्त्रण देने आते हैं, उनकी संख्या तो प्रतिदिन सहस्रों की होती है। विवाहादि माङ्गलिक कार्यों के भी निमन्त्रण देने वाले का सर्वदा ही तांता लगा रहता है।

(८) मोतीडूंगरी (जयपुर) के गणेशजी की जयपुर में ही नहीं बल्कि आसपास कितने ही जिलों में भी बड़ी मान्यता है। यहाँ के गणेशजी की मूर्ति एवं मन्दिर भी सुन्दर है। बुधवार को तो दर्शनार्थियों की भीड़ ही लगी रहती है। किसी भी कार्य को आरम्भ करने वाले सब ही प्रथम यहां आकर पूजा अर्चना कर जाने पर ही कार्यों का शुभारम्भ करते हैं। यहाँ की ऐसी ही मान्यता है।

(९) रायपुर (पाली) जोधपुर (राजस्थान) यहाँ पर गणेशजी महाराज का प्राचीन मन्दिर है। यहाँ के गणेश की मूर्ति अत्यन्त चमत्कारी होने से हजारों स्त्री-पुरुष यहाँ दर्शनार्थी आते हैं। भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी का उत्सव बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है।

(१०) मंगलूर (कर्नाटक)—'शरउ-गणपति'– इस गणपति की स्थापना एक तंत्रशास्त्र के महान् विद्वान द्वारा की हुई है। यहाँ पर 'गण-हवन' करने के लिए अनेक कुटम्बी गृहस्थी लोग दूर-दूर से आते हैं। इनकी इधर बहुत मान्यता है। गणेश चतुर्थी को यहाँ एक हजार नारियल फोड़े जाते हैं।

(११) पुद्दुचेरी (पांडिचेरी) इस स्थान के समुद्र तट पर श्रीगणेशजी का मन्दिर है। इन गणेशजी की बहुत मान्यता है। सर्वदा दर्शनार्थी आते ही रहते हैं।

(१२)त्रिचिना पल्ली (दक्षिण भारत)—आजकल इसका नाम (तिरुच्चिरापल्ली) हो गया है। वहाँ की भाषा में (त्रिची) कहते हैं। यहां की पहाड़ी के दूर से तीन शिखर दिखाई देते हैं। उनमें सबसे ऊँची पहाड़ी पर गणेशजी महाराज विराजमान हैं। वहाँ उनको वहाँ की भाषा में 'उचिप्पिलैयार' के नाम से पुकारते हैं। क्योंकि वे सर्वोच्चशिखर पर विराजमान हैं। इस सर्वोच्च देवता गणेशजी का दर्शन करने के लिए बड़े परिश्रम और कठिनाई से पूजा करने वाले ऊपर पहाड़ी पर चढते हैं। इस मन्दिर में जाने की पहाड़ी पर जहाँ से चढना आरम्भ होता है, वहाँ ही एक नवीन विनायक विराजमान हैं। यह गणेशजी शिखर पर स्थापित विनायक की अपेक्षा अधिक पूज्य एवं लोक प्रिय देवता हैं। क्योंकि द्वारमण्डप में ही वह भक्तों को बुलाकर पूजा ग्रहण करते हैं। और जो कोई उनके ऊपर वाले पूजा स्थल पर जाता है, उस पर भी अपनी कृपा दृष्टि करते हैं।

इनके अतिरिक्त भगवान् गणेशजी के भारत में सर्वाधिक गणेश मूर्ति एवं मन्दिर हैं। और उनमें बहुत से मन्दिर व गणेश मूर्ति (प्रतिमाएँ) अत्यन्त सिद्धप्रद प्रख्यात भी हैं यदि उन सबका विवरण संग्रह किया जाए तो एक स्वतंत्र ही बहुत वृहत् ग्रंथ तैयार हो सकता है। भारत में ही नहीं भारत से बाहर विदेशों में भी चीन, चीनी-तुर्किस्तान, तिब्बत, जापान, बर्मा, श्याम, हिन्द-चीन, जावा, बाली, खोतान, मंगोलिया, नैपाल, कम्बोडिया, अमेरिका, वोर्नियो आदि कितने ही देशों में भगनान् गणेशजी की प्राचीन मूर्तियाँ एवं मान्यता पाई जाती है। अब भी कितने ही विदेशों में गणेश प्रतिमा रूप में एवं स्वास्तिक चिह्न 卐 के रूप में तथा अन्य उन देशों की भाषा के किन्ही शब्दों में मान्यता पाई जाती है।

उन सब का वर्णन किया जाना यहाँ संभव नहीं है। यहाँ तो केवल उनका कुछ एक नाम रूपों व स्थानों में स्मरण चिन्तन, दिग्दर्शन मात्र किया गया है।

गजाननाय पूर्णाय सांख्यरूपममायते।
विदेहेन च सर्वत्र संस्थिताय नमो नमः॥

'हे गणेश्वर! आप गज के समान मुखधारण करने वाले, पूर्णपरमात्मा और ज्ञानस्वरूप हैं। आप निराकार रूप से सर्वत्र विद्यमान हैं, आपको बारंबार नमस्कार है।'

卐

सोपान १०

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थीका चन्द्र दर्शन निषेध क्यों?

प्राचीन समय में एक बार कैलासके शिव-सदन में लोक-पितामह ब्रह्मा कर्पूर-गौर शिवके समीप बैठे हुए थे। उसी समय वहाँ देवर्षि नारदजी पहुँचे। उनके पास एक अतिशय सुन्दर और अत्यन्त ही स्वादिष्ठ अपूर्व फल था। उक्त फल देवर्षि ने करुणामय उमानाथ के कर-कमलों में अर्पित कर दिया।

उक्त अद्भुत और सुन्दर फल पिता के हाथमें देखकर गणेश और कुमार (षडानन) दोनों बालक उसे आग्रहपूर्वक मांगने लगे। तब शिवने ब्रह्मा से पूछा-ब्रह्मन! देवर्षि-प्रदत्त यह अपूर्व फल एक ही है और इसे गणेश एवं कुमार दोनों ही लेना चाहते हैं, आप बतायें, इसे किसे दूँ?

चतुर्मुख ब्रह्माने कहा-प्रभो! छोटे होने के कारण इस एक मात्र फल के अधिकारी तो षड़ानन ही हैं।'

गङ्गाधरने फल कुमार षडानन को दे दिया। किंतु पार्वतीनन्दन गणेश सृष्टिकर्ता ब्रह्मा पर कुपित हो गये।

लोक-पितामहने अपने भवन पहुँचकर सृष्टि-रचना का प्रयत्न किया तो गजवक्त्रने अद्भुत विघ्न उत्पन्न कर दिया। वे अत्यन्त उग्ररूप में विधाता के सम्मुख प्रकट हुए विघ्नेश्वर के भयानकतम स्वरूप को देखकर विधाता भयभीत होकर कांपने लगे।

गजानन की विकट मूर्ति एवं ब्रह्माका भय और कम्प देखकर चन्द्रदेव अपने गणों के साथ हँस पड़े।

चन्द्रमाको हँसते हुए देखकर गजमुख को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने चन्द्रमा को तत्काल शाप दे दिया-'चन्द्र! अब तुम किसी के देखने योग्य नहीं रह

जाओगे और यदि किसीने तुम्हें देख लिया तो वह पापका भागी होगा। लिखा है—

अदर्शनीयस्त्रैलोक्ये मद्वाक्यात्त्वं भविष्यसि।
कदाचित्केन दृष्टः स महापातकवान् भवेत्॥

(गणेश पुराण १।६१।७-८)

गजकर्ण वहाँसे चले गए। चन्द्रमा श्रीहत, मलिन एवं दीन होकर अत्यन्त चिन्तापूर्वक मन-ही-मन कहने लगे-'अणिमादिगुणों से युक्त, जगत्कारण परमेश्वर के साथ मैंने मूर्ख की भाँति दुराचरण कैसे किया? मैं सबके लिए अदर्शनीय वर्णहीन और अत्यन्त मलिन हो गया। अब मैं पुनः कलाओंसे युक्त, सुन्दर वन्द्य एवं देवताओं के लिए कैसे हो सकूँगा?

सुधाकरके अदर्शनसे देवगण भी दुःखित हुए। अग्नि और इन्द्र आदि देवगण देवदेव गजानन के समीप पहुँचकर उनकी भक्ति पूर्वक स्तुति करने लगे।

देवताओं के स्तवन से प्रसन्न होकर अजमुख ने कहा-'देवताओ! मैं तुम्हारी स्तुतिसे संतुष्ट हूँ। तुम वर माँगो, मैं उसे अवश्य पूर्ण करूँगा।'

देवताओं ने कहा-'प्रभो! आप चन्द्रमा पर अनुग्रह करें, हमारी यही कामना है।'

गणेश ने कहा-'एक वर्ष, छः मास या तीन मास के लिए चन्द्रमा अदर्शनीय हों या तुम्हें और कुछ अभीष्ट है?

भगवान् गजानन की वाणी सुनते ही देवगण उनके चरण-कमलों में दण्डवत् प्रमाण करने लगे।

'देवताओ! मैं अपना वचन मिथ्या कैसे कर दूँ? किंतु शरणागत का त्याग भी सम्भव नहीं।' महाप्रभु विकट ने ऐसी विकट परिस्थिति में देवताओं से कहा-'सुमेरु अपना स्थान त्याग दे, सूर्य गिर पड़े, अग्नि शीतल हो जाय और सागर अपनी मर्यादा छोड़ दे, पर मेरा वचन असत्य नहीं हो सकता। तथापि तुम लोग मेरी बात सुनो—

भाद्रशुक्लचतुर्थ्यां यो ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा।
अभिशापी भवेच्चन्द्रदर्शनाद् भृशदुःखभाग्॥

(गणेश पुराण १।६१।२५-२६)

'जो जानकर या अनजान में ही भाद्र-शुक्ल चतुर्थी को चन्द्रमा का दर्शन करेगा, वह अभिशप्त होगा। उसे अधिक दुःख उठाना पड़ेगा।'

परम प्रभु वरदाता गणेशजी के यह वचन सुनकर देवगण अत्यन्त मुदित हुए। उन्होंने पुनः प्रभु-चरणोंमें प्रणाम किया। तदनन्तर वे चन्द्रमा के पास पहुँचे।

देवताओंने चन्द्रमा से कहा-'चन्द्रदेव! गजमुख पर हँसकर तुमने अपनी मूढ़ता का ही परिचय दिया है। तुमने प्रभु का अपराध किया और त्रैलोक्य संकटग्रस्त हो गया। हमलोगोंने त्रैलोक्य नायक परब्रह्मस्वरूप सर्वगुरु गजानन प्रभुको बड़े यत्न से संतुष्ट किया है। इस कारण उन दयामयने तुम्हें वर्ष में केवल एक दिन भाद्र-शुक्ल-चतुर्थी को अदर्शनीय रहने का वचन देकर अपना शाप अत्यन्त सीमित कर दिया। तुम भी उन करुणामयकी शरण ग्रहण करो और उनकी कृपा से शुद्ध होकर यश प्राप्त करो।'

देवेन्द्र ने सुधांशु को गजानन के एकाक्षरी ('गं', 'ग्लौ, एवं 'गौ') मन्त्रका उपदेश किया और तत्पश्चात् सब देवगण वहाँ से चले गए ।

चन्द्रदेव शुद्ध हृदयसे परम प्रभु गजानन की शरण हुए और उन्होंने पुण्यतोया जाह्नवी के दक्षिण तटपर उन सर्वसुख प्रदान करने वाले प्रभु गणेशजीका ध्यान करते हुए उनके एकाक्षरी मन्त्र का जप करने लगे । इस प्रकार चन्द्रदेवने गणेशजी को संतुष्ट करने के लिए बारह वर्ष तक कठोर तप किया । इससे आदिदेव गजानन प्रसन्न हुए ।

सिन्दूरारुण, रक्तमाल्याम्बरधर, रक्तचन्दनचर्चित, चतुर्भुज, महाकाय, कोटिसूर्याधिक दीप्तिमान् देवदेव गजानन चन्द्रमाके सम्मुख प्रकट हो गए । निशानाथ ने परम प्रभु के महान् स्वरूप को देखकर आश्चर्य चकित होकर भय से काँपने लगे । किंतु फिर उन्होंने मन-ही-मन विचार किया-'मेरे सम्मुख दयामय आदि देव गजानन ही मुझे कृतार्थ करने के लिए प्रकट हुए हैं ।' तब वे हाथ जोड़कर गद्गद्-कण्ठ से इस प्रकार स्तुति करने लगे—

नमामि देवं द्विरदाननं तं यः सर्वविघ्नं हरते जनानाम् ।
धर्मार्थकामांस्तनुतेऽखिलानां तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ।।
कृपानिधे ब्रह्ममयाय देव विश्वात्मन विश्वविधानदक्ष ।
विश्वस्य बीजाय जगन्मयाय त्रैलोक्यसंहारकृते नमस्ते ।।
त्रयीमयायाखिलबुद्धिदात्रे बुद्धिप्रदीपाय सुराधिपाय ।
नित्याय सत्याय च नित्यबुद्धे नित्यं निरीहाय नमोऽस्तु नित्यम् ।।

(गणेश पुराण १।६१।४१-४३)

'मैं उन गजानन देव को नमस्कार करता हूँ, जो लोगों के समस्त विघ्नों का अपहरण करते हैं । जो सब के लिए धर्थ, अर्म और काम का विस्तार करते हैं, उन विघ्नविनाशक गणेश को नमस्कार है । कृपानिधे ! देव !! आप विश्व की रचना करने में कुशल हैं, विश्वरूप तथा ब्रह्ममय है । इस विश्व के बीज (आदि कारण) हैं । जगत् आपका स्वरूप है । आप ही तीनों लोकों का संहार करने वाले हैं, आपको नमस्कार है । तीनों वेद आपके ही स्वरूप-आपके ही तत्त्व के प्रतिपादक हैं । आप सम्पूर्ण बुद्धियों के दाता, बुद्धि के प्रकाशक और देवताओं के अधिपति हैं । नित्यबोध स्वरूप गणेश ! आप नित्य, सत्य और निरीह हैं, आपको सदा-सर्वदा नमस्कार है ।'

इस प्रकार स्तवन करते हुए सुधांशुने अन्तमें कहा—

अज्ञानदोषेण कृतोऽपराधस्तं
क्षन्तुमर्होऽसि दयाकर त्वम् ।
तवापि दोषः शरणागतस्य
त्यागे महात्मन् कुरु मेऽनुकम्पाम् ।।

(गणेश पुराण १।६१।४४)

'दयानिधान ! मैंने अज्ञान-दोषके कारण आपके प्रति अपराध किया है, उसके लिए आप क्षमा-प्रदान करें । महात्मन ! मैं आपकी शरण में आया हूँ । यदि आप शरणागत का त्याग कर देंगे तो यह आपके लिए भी दोष की बात होगी,

अत: मुझपर कृपा कीजिए।'

चन्द्रमा के गद्गद्-कण्ठ से किए गए स्तवन और दण्डवत् प्रणाम से संतुष्ट होकर परम प्रभु गणेशजी ने कहा-चन्द्र देव ! पहले तुम्हारा जैसा रूप था, वैसा ही हो जाएगा। किन्तु जो मनुष्य भाद्रपद-शुक्ल-चतुर्थी को तुम्हें देख लेगा, वह निश्चय ही अभिशाप का भागी होगा और उसे पाप, हानि एवं मूढ़ता का सामना करना पड़ेगा। उस तिथि को तुम अदर्शनीय रहोगे। ※

भाद्रपद कृष्णपक्ष की चतुर्थी तिथि को जो लोगों द्वारा व्रत किया जाता है, उसमें तुम्हारा उदय होने पर यत्नपूर्वक मेरी और तुम्हारी पूजा होनी चाहिए। उस दिन लोगों को तुम्हारा दर्शन अवश्य करना चाहिए, अन्यथा व्रत का फल नहीं मिलेगा। तुम एक अंश से मेरे ललाट में स्थित रहो, इससे मुझे प्रसन्नता होगी। प्रत्येक मास की द्वितीया तिथि को लोग तुम्हें नमस्कार करेंगे।'

परम प्रभु गजानन के वर-प्रभाव से सुधांशु पूर्ववत् तेजस्वी,सुन्दर एवं पूजनीय हो गए।

त्वदाज्ञया सृष्टिकरो विधाता
त्वदाज्ञया पालक एक विष्णु:।
त्वदाज्ञया संहरको हरोऽपि
त्वमेकदन्तं शरणं व्रजाम:।।

'प्रभो ! आपकी आज्ञा से विधाता सृष्टि-रचना करते हैं, आपकी आज्ञा से अद्वितीय विष्णु सृष्टि का पालन करते हैं और महादेवजी भी आपकी आज्ञा से ही सबका संहार करते हैं। हम उन्हीं आप भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं।'

※ भाद्रपद-शुक्ल-चतुर्थीको चन्द्र-दर्शन हो जाए तो उसका दोष दूर होनेके लिए श्रीमन् भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ५७ में स्यमन्तक मणि हरण की कथा पढ़ना अथवा सुनना चाहिए। ये कथा इस पुस्तक के सोपान-११ में लिखी गई है।

卐

सोपान ११

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी

चन्द्र-दर्शन दोष का परिहार

राजा सत्राजित् की तपस्या से भगवान् सूर्य देव प्रसन्न हुए और सत्राजित् को प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण प्रदान करने वाली अत्यन्त प्रकाशित होने वाली स्यमन्तक-मणि प्रदान की। उस मणि को सत्राजित् हार की भाँति अपने गले (कण्ठ, में धारण करके भगवान् श्री कृष्ण के पास आया करता था। एक दिन भगवान् श्री कृष्ण ने सत्राजित् से कहा कि यह मणि आप महाराज उग्रसेन को दे देवें। सत्राजित् ने स्पष्ट शब्दों में मणि देना अस्वीकार कर दिया।

एक दिन सत्राजित् का भाई प्रसेन उक्त स्यमन्तक-मणि को अपने गले (कण्ठ) में धारण करके आखेट के लिये वन में चला गया। वहां वन में प्रसेन को उसके घोड़े सहित एक सिंह ने मार डाला और उस मणि को छीन लिया। वह मणि सहित गुफा में प्रवेश करने ही जा रहा था कि ऋक्षराज जाम्बवान् ने उसे मार डाला और उस मणि को ऋक्षराज जाम्बवान् ने गुफा में ले जाकर अपने बच्चे को खेलने के लिये दे दी।

प्रसेन के द्वारका में वापस नहीं लौटने से सत्राजित् ने लोगों से कहा—'मैंने श्री कृष्ण के कहने से मणि उग्रसेन महाराज को नहीं दी, स्यमन्तक-मणि लेने के लिये सम्भवतः श्री कृष्ण ने ही मेरे भाई प्रसेन को मार डाला है। तब अपना कलङ्क दूर करने के लिये भगवान् कृष्ण कुछ यदुवंशियों को साथ लेकर वन में गये। वहां उन लोगों ने प्रसेन और उसके घोड़े को मरा हुआ देखा तथा इससे कुछ और थोड़ी दूर जाने पर पर्वत पर सिंह को भी मरा हुआ पाया। लोगों को पूर्ण बात समझ में आ गई कि सिंह ने प्रसेन और घोड़े को तथा बलवान् ऋक्ष ने सिंह को मार डाला है।

भगवान् श्रीं कृष्ण ने अपने साथी यदुवंशियों को बाहर बैठा दिया और आप अकेले ही हाथ में शार्ङ्ग-धनुष और गदा लिये हुए अन्धकारमय ऋक्षराज की गुफा में प्रवेश किया। उस गुफा में आगे जाने पर अनेक मणियों से प्रकाशित अत्यन्त स्वच्छ सुन्दर उत्तम कला पूर्ण भवन निर्माण किया हुआ था। वहां एक धाय ने जाम्बवान् के पुत्र को पालने में सुला रखा था और उनके ऊपरी भाग में मणि को लटका रखा था और उस मनोहर पालने को धीरे-धीरे हिलाती हुई वह बालक को लोरियाँ सुना रही थी और लोरी गाते हुए कहती जा रही थी—

सिंह प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवताहतः।
सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येष स्यमन्तकः॥

(पद्मपुराण, उ. ख. २७६।१९)

'प्रसेन को सिंह ने मारा और सिंह जाम्बवान् के हाथ से मारा गया है। हे सुन्दर कुमार ! रोओ मत ! यह स्यमन्तक-मणि तुम्हारी ही है।'

उसी समय एक अपरिचित पुरुष को भीतर आया देखकर धाय भयभीत होकर चिल्ला उठी। उसका चिल्लाना सुनकर जाम्बवान् अपने कक्ष से (कमरे से) बाहर आया और श्री कृष्ण को सर्वथा अपरिचित देखकर क्रोधित होकर मारने को दौड़ा। फिर तो जाम्बवान और श्री कृष्ण में जोरदार युद्ध होने लगा। कई दिन बीत जाने पर जाम्बवान् की शक्ति क्षीण होने लगी। उनके शरीर का प्रत्येक जोड़ टूटने लगा, तब उन्हें अपने प्रभु दशरथ नन्दन श्रीराम के वचन स्मरण हो आये और उन्होंने समझ लिया कि पृथ्वी का भार उतारने के लिये मेरे प्राणनाथ श्रीराम अवतरित हो गये हैं। और मेरा मनोरथ पूर्ण करने के लिये ही यहाँ पधारे हैं। तब पृथ्वी पर दण्ड की भाँति लौटकर श्री भगवान् कृष्ण के चरणों को पकड़कर ऋक्षराज ने नेत्रों से जल वर्षाते हुए कहा—

'प्रभो ! मेरे पूर्वकाल की युद्ध की अभिलाषा आपने अब पूर्ण कर दी। मैं आपके पहले अवतार से ही आपका भक्त हूँ। मैंने अनजाने में अपने स्वामी से युद्ध किया, एतद्‌र्थ दयामय स्वामी ! आप मुझे कृपा करके क्षमा करें।'

जाम्बवान् ने अनेक भाँति से स्तुति कर भगवान् श्री कृष्ण को रत्नमय सिंहासन पर बैठाया और श्रद्धा-भक्ति पूर्वक उनकी विविध प्रकार से पूजा की और फिर सर्वदा उनकी पूजा के लिये उन्होंने अपनी अत्यन्त लावण्यवती पुत्री जाम्बवती सहित स्यमन्तक-मणि भी भेंट कर दी।

गुफा के बाहर बारह दिनों तक प्रतिक्षा करने के पश्चात् भगवान् श्री कृष्ण के साथ आये हुए यदुवंशी लोग अत्यन्त दुःखी होकर द्वारका को लौट गये। सभी द्वारकावासी अत्यन्त दुःखीत हो सत्राजित् की निन्दा करने लगे और अपने प्राण वल्लभ श्री कृष्ण के सकुशल लौट आने के लिये देवी की आराधना करने लगे। श्रीमद्‌भागवत में लिखा है—

तेषां तु देव्युपस्थानात् प्रत्यादिष्टाशिषा स च।
प्रादुर्बभूव सिद्धार्थः सदारो हर्षयन् हरिः॥

(श्रीमद्‌भागवत १०।५६।३६)

'उनकी उपासना से दुर्गादेवी प्रसन्न हुई और उन्होंने आशीर्वाद दिया। उसी समय उनके बीच में मणि और अपनी नव-वधू जाम्बवती के साथ सफल मनोरथ होकर श्री कृष्ण सबको प्रसन्न करते हुए प्रकट हो गये।'

तत्पश्चात् द्वारकाधाम वासियों की प्रसन्नता की सीमा ही नहीं रही। वह स्यमन्तक-मणि भगवान् श्री कृष्ण ने सत्राजित् को लौटा दी, किन्तु सत्राजित अत्यन्त लज्जित हो मुँह नीचा किये हुए अपने भवन में लौटा। तदनन्तर उसने अपने अपराध को दूर करने के लिये अनेक सोच-विचार करके शील-स्वभाव, अत्यन्त सुन्दरता, उदारता, बुद्धिमत्ता आदि अनेक सद्‌गुणों की खान अपनी पुत्री सत्यभामा के साथ स्यमन्तक-मणि भी भगवान् श्री कृष्ण को विधिवत् विवाह करके समर्पित करदी, किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने स्यमन्तक-मणि सत्राजित् को ही वापस लौटा दी।

भगवान् श्रीकृष्ण और बलराम ने जब कुन्ती सहित पाण्डवों के जलकर मर जाने का समाचार सुना तो वे व्यथित हो गये और कुलोचित व्यवहार का पालन करने के लिये भीष्म पितामह, कृपाचार्य, विदुर, गान्धारी और द्रोणाचार्य से मिलकर समवेदना सहानुभूति प्रकट करने के लिये हस्तिनापुर गये और इधर उनकी अनुपस्थिति में अक्रूर और कृतवर्मा ने शतधन्वा को बहकाकर सत्राजित् की हत्या करादी तथा शतधन्वा ने उक्त स्यमन्तक-मणि ले ली।

अपने पिता की मृत देह को औषधियों सहित कड़ाहे में रखवाकर रोती हुई सत्यभामा हस्तिनापुर पहुँची और भगवान् श्री कृष्ण को अपने पिता की हत्या का समाचार कह सुनाया। श्री कृष्ण और बलराम तुरन्त ही द्वारकापुरी को लौट आये। जब शतधन्वा को ज्ञात हुआ कि श्री कृष्ण मुझे मारना चाहते हैं, तब उसने कृतवर्मा और अक्रूर से सहायता मांगी. किन्तु इनकी ओर से निराशा पूर्ण उत्तर पाकर अपने प्राण जाने के भय से घोड़े पर सवार होकर भाग पड़ा। भगवान् श्री कृष्ण और बलराम भी रथ पर चढ़कर उसके पीछे लग गये। मिथिला के निकट एक उपवन के समीप शतधन्वा का घोड़ा गिर पड़ा, तब वह पैदल ही भागा। श्री कृष्ण भी रथ से कूदकर पैदल ही उसके पीछे-पीछे दौड़े और अपने तीक्ष्ण चक्र से उसका मस्तक काट दिया, किन्तु उसके पास भी स्यमन्तक-मणि नहीं मिली। तब उन्होंने लौटकर यह बात बलरामजी को बतलादी। बलरामजी विदेहराज जनकजी से मिलने चले गये और श्री कृष्ण को उन्होंने द्वारकापुरी लौटा दिया। इधर अक्रूर और कृतवर्मा भी भय के मारे द्वारका से भाग गये।

भगवान् श्री कृष्ण ने अपना दूत भेजकर अक्रूर को बुलवाया और उनका बड़ा स्वागत-सत्कार किया। तदनन्तर श्री कृष्ण ने अक्रूर से कहा—'चाचाजी मैं जानता हूँ, स्यमन्तक-मणि आपके पास है। यद्यपि अब उस मणि पर मेरे पुत्रों का ही अधिकार होना चाहिये, फिर भी वह आपके पास ही रखिये। बलराम सत्यभामा और जाम्बवती आदि मेरी बात का निश्वास नहीं करते। अतः आप केवल वह मणि इन लोगों को दिखलाकर इनका सन्देह-निवारण कर दीजिये।

भगवान् श्री कृष्ण के इस कथन से आश्वस्त होकर वस्त्र में लपेटी हुई सूर्यदीप्ति-तुल्य वह मणि निकाल कर उन्हें दे दी। भगवान् श्री कृष्ण ने उक्त मणि अपने सभी यदुवंशियों, सत्यभामा, जाम्बवती आदि को दिखलाकर अपना कलंक दूर कर दिया और समर्थ होने पर भी उन्होंने अपने वचन के अनुसार उक्त स्यमन्तक-मणि अक्रूर को ही लौटा दी।*

भगवान् गणपति, सत्यभामा सहित भगवान् श्री कृष्ण तथा चन्द्रदेव को नमस्कार है।

---

* भगवान् श्री कृष्ण को यह मिथ्या कलङ्क क्यों लगा ?

चाँद चोथ को देखियो मोहन भादू मास।
ताहि लग्यो कलङ्क यह, अति मन भयो उदास॥

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को चन्द्र दर्शन करने से मिथ्या कलङ्क लगता है। अतएव उस दिन चन्द्र दर्शन नहीं करना चाहिये। और कदाचित् उस दिन चन्द्रमा दिखाई दे जाये तो, इस स्यमन्तक-मणि हरण की कथा पढ़ने-सुनने से दोष निवारण हो जाता है।

सोपान १२

गणेश प्रिय चतुर्थी [चौथ माता] की उत्पत्ति,

व्रत में कैसी तिथि ग्रहण करें, चौथमाता मन्दिर का परिचय

सृष्टि निर्माता ब्रह्माजी ने सृष्टि-रचना के पश्चात् अनेक कार्यों की सिद्धि के लिए अपने हृदय में श्रीगणेशजी का ध्यान किया। और उसी समय अनेक शरीर से परा प्रकृति महामाया, तिथियों की जननी काम रूपिणी देवी प्रकट हुई। उन परम लावण्यवती के चार पैर, चार हाथ और चार सुन्दर मुख थे। उनको देखकर ब्रह्माजी अत्यन्त प्रसन्न हुए।

उस महादेवी ने विश्व सृष्टि-निर्माता के चरणों में प्रणाम किया और अनेक स्तोत्रों द्वारा उनका स्तवन करने के अन्तर निवेदन किया—'ब्रह्माण्ड नायक! मैं आपके शुभ अंगसे उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे पिता हैं। आप मुझे आज्ञा प्रदान करें, मैं क्या करूँ? प्रभो! आपके पावन पद-पद्मों में मेरा बारंबार प्रणाम है। आप मुझे कृपा पूर्वक रहने के लिए स्थान और विविध प्रकार के भोग्य पदार्थ प्रदान करें।

लोकस्रष्टाने श्रीगणेशजी का ध्यान व स्मरण करने के पश्चात् उत्तर दिया —तुम अद्भुत सृष्टि करो।' फिर प्रसन्न होते हुए ब्रह्माजी ने उन्हें श्रीगणेशजी का मन्त्र 'वक्रतुण्डाय हुम्' प्रदान किया।

महामहिमामयी देवीने उसी समय भगवान् ब्रह्माजी के चरणों में भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और उन्होंने वनमें जाकर श्रीगणेशजी का ध्यान करते हुए विधिपूर्वक उग्र तप करने लगीं। वे अत्यन्त श्रद्धाभक्तिपूर्वक दिव्य सहस्र वर्षों तक तप करती रही। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर देवदेव गजानन प्रकट हुए और उन्होंने कहा— 'महाभागे! मैं तुम्हारे इस प्रकार से निराहार तपश्चरण से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम इच्छित वर माँगों।'

परम प्रभु की सुखदवाणी सुनकर महिमामयी उस माताने प्रसन्न होकर गद्गद् कण्ठसे उनका स्तवन किया।

इससे अत्यन्त संतुष्ट हुए मूषकवाहन ने पुनः कहा—'देवी! मैं तुम्हारे तप एवं स्तवन से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम अपनी इच्छा बतलाओ।

देवीने परम प्रभु गजानन के पावनतम चरणों में प्रणाम कर निवेदन किया— करुणानिधे! आप मुझे अपनी सुदृढ़ भक्ति प्रदान करें। मुझे सृष्टि-सर्जन की सामर्थ्य प्राप्त हो। मैं आपको सर्वदा प्रिय रहूँ और मुझसे आपका कभी वियोग न हो।'

स्वीकृति सूचक 'ओम' शब्द का उच्चारण कर परम प्रभु गजानन ने वर प्रदान किया—'चतुर्विध फल-प्रदायिनी देवी! तुम मुझे सर्वदा प्रिय रहोगी। तुम समस्त तिथियों की माता होओगी और तुम्हारा नाम चतुर्थी (चौथ) होगा।

तुम्हारा वाम भाग 'कृष्ण' एवं दक्षिण भाग 'शुक्ल' होगा। निस्सन्देह तुम मेरी जन्म तिथि होओगी। तुम्हारा व्रत करने वाले का मैं विशेष रूप से पालन करूँगा और इस व्रत के समान अन्य कोई व्रत नहीं होगा।'

यह कहने के पश्चात् भगवान् गजानन अन्तर्धान हो गए।

तिथियों की माता चतुर्थी भगवान् गणेशजी का ध्यान करते हुए सृष्टि-रचना करने लगी। उनका वाम भाग कृष्ण और दक्षिण भाग शुक्ल हो गया। महाभाग्यवती शुक्लवर्णा अत्यन्त विस्मित हुई। उन्होंने पुनः गणाध्यक्ष का ध्यान करते हुए सृष्टि-रचना का कार्यारम्भ किया ही था कि उनके मुखारविन्द से प्रतिपदा तिथि उत्पन्न हो गयी। इसी प्रकार नासिका से द्वितीया, वक्ष से तृतीया, अंगुली से पंचमी, हृदय से षष्ठी, नेत्र से सप्तमी, बाहु से अष्टमी, उदर से नवमी, कान से दशमी, कण्ठ से एकादशी, पैर से द्वादशी, स्तन से त्रयोदशी, अंहकार से चतुर्दशी, और मन से पूर्णिमा तथा जिह्वा से अमावस्या, तिथि प्रकट हुई।

सभी तिथियों सहित दोनों चतुर्थियों ने प्रभु गजमुख के ध्यान और नाम जपके साथ तपश्चरण प्रारम्भ किया। इस प्रकार उनके एक वर्ष तक तप करने पर भक्त वत्सल प्रभु विघ्नेश्वर प्रकट हुए। वे मध्याह्न में शुक्ल चतुर्थी के समीप पहुँचे और कहा—'वर माँगो !

शुक्ल चतुर्थी ने आदिदेव गजमुख के चरणों में प्रणाम कर उनकी और स्तुति की। तत्पश्चात् उन्होंने कहा—'परम प्रभु गजमुख ! मैं आपका वासस्थान होऊँ और आप मुझे अपनी शाश्वती भक्ति प्रदान करें।'

दयामय भगवान् गणेशजी ने वर प्रदान किया—'तुम्हें मध्याह्न काल में मेरा दर्शन हुआ है, अतएव मध्याह्न काल में शिवादि देवगण मेरा भजन करेंगे। शुक्लपक्ष की चतुर्थी को मेरे भक्तजन सदा तुम्हारा व्रत करेंगे। जो निराहार रहकर मेरे साथ तुम्हारी उपासना करेंगे, उनका संचित कर्म-भोग समाप्त हो जाएगा। उन्हें मैं सब कुछ प्रदान करूँगा। तुम्हारा नाम 'वरदा' होगा।

इतना कहने के पश्चात् श्रीगणेशजी अन्तर्धान हो गए और भगवती शुक्ल चतुर्थी का 'वरदा' नाम प्रख्यात हो गया। वे श्रीगणेशजी को अत्यन्त प्रिय हुई। उस दिन व्रत के साथ श्रीगणेशजी की उपासना कर पञ्चमी को सविधि पारण करने से निश्चय ही मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-सब कुछ प्राप्त कर लेते हैं। व्रती की प्रत्येक कामना पूर्ण होती है और अन्त में वह अतिशय सुखदायक गणेश-धर्म को प्राप्त होता है।

इसके अनन्तर भगवान् गणपति ने रात्रि के प्रथम प्रहर में चन्द्रमा के उदित होने पर कृष्ण चतुर्थी के समीप पहुँच कर कहा—'महाभाग्यवती ! तुम वर माँगो। मैं तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण करूँगा।'

विघ्न विनाशन प्रभु गणेशजी के दर्शन एवं उनके वचन से प्रसन्न होकर भगवती कृष्णा चतुर्थी ने उनके मंगलमय चरणों में प्रणाम कर उनकी विधि पूर्वक पूजा की। फिर उनका स्तवन कर निवेदन किया—'मंगलमय लम्बोदर ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो कृपापूर्वक मुझे अपनी सुदृढ़ भक्ति प्रदान करें। मैं

आपको सदा प्रिय रहूँ और मुझ से आपका वियोग कभी न हो। आप मुझे सर्वमान्य कर दें।'

कृष्णा चतुर्थी की श्रद्धा-भक्तिपूर्ण वाणी से प्रसन्न होकर महोदर ने वर-प्रदान करते हुए कहा—'महातिथे! तुम मुझे सदा प्रिय रहोगी और तुमसे मेरा कभी वियोग नहीं होगा। चन्द्रोदय होने पर तुमने मुझे प्राप्त किया है, अतएव चन्द्रोदय व्यापिनी होने पर तुम मुझे अत्यधिक प्रिय होओगी। मेरे प्रसाद से तुम उस समय अन्न-जल त्यागकर उपासना करने वालों का संकट हरण करोगी। उस दिन व्रतोपवास करने वालों को तुम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-सब कुछ प्रदान करोगी। उनकी समस्त कर्म-राशि ध्वस्त हो जाएगी और वे निश्चय ही इस लोक में समस्त सुखों को भोगकर अन्त में जन्म मृत्यु के पाश से मुक्त हो मेरे दुर्लभ धाम में पहुँच जायेंगे। संकट हरिणी देवी! निस्संदेह मेरी कृपा से तुम सर्वदा लोगों को आनन्द प्रदान करने वाली होओगी।'

उस दिन यतिको मेरा व्रत निराहार रहकर ही करना चाहिए। दूसरे लोगों को रात्रि में चन्द्रोदय होने पर मेरा पूजन करने के पश्चात् ब्राह्मण की साक्षीता में (उन्हें भोजन कराकर) तदनन्तर स्वयं को भोजन करना चाहिए। पूजन के पश्चात् उस दिन श्रावण में लड्डू और भाद्रपद में दधि का भोजन करना चाहिए। आश्विन में व्रती निराहार ही रहे। कार्तिक में दुग्ध-पान, मार्ग शीर्ष में जलाहार और पौष में गोमूत्र लेना चाहिए। माघ में श्वेत तिल, फाल्गुन में शर्करा (चीनी अथवा मिश्री), चैत्र में पञ्चगव्य, वैशाख में पद्मबीज (कमलगट्टा), ज्येष्ठ में गोघृत और आषाढ में मधु (शहद) तथा श्रावण में बिल्वफल भक्षण करना चाहिए।

महिमामयी चतुर्थी व्रत करने वालों की समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली है। इस व्रत के प्रभाव से धन-धान्य और आरोग्य की प्राप्ति होती है। समस्त आपदाएँ नष्ट हो जाती हैं तथा भगवान् गणेशजी की कृपा से परमार्थ की भी सिद्धि होती है। अतएव यदि संभव हो तो प्रत्येक मास की दोनों चतुर्थी तिथियों को व्रत और उपवास सहित श्रीगणेशजी का पूजन करें और यदि यह संभव न हो तो भाद्रपद कृष्णा-चतुर्थी बहुला' कार्तिक कृष्णा-चतुर्थी 'करवा' (कर्कका) और माघ-कृष्ण-चतुर्थी 'तिलका' का व्रत अवश्य कर लेवें। रविवार अथवा मंगलवार से युक्त चतुर्थी तिथि का व्रत व पूजन करने का अमित माहात्म्य है। इस प्रकार की एक चतुर्थी व्रत का भी सविधि पूर्ण रूप से पालन कर लेने से एक वर्ष भर की सभी चतुर्थी व्रतों के करलेने का फल प्राप्त हो जाता है।

(मुद्गल पुराण के आधार से)

गणेश पुराण में लिखा है—

चतुर्थ्या महिमानं नो न शक्यं सुनिरूपितुम्।

(गणेशपुराण २।८२।३४)

'इस चतुर्थी व्रत का निरूपण एवं माहात्म्य-गान शक्य नहीं है।'

व्रत करते समय कैसी तिथि ग्रहण करें

धर्मशास्त्रों में लिखा है—कृष्ण पक्ष की प्रायः सभी चतुर्थी तिथियां कष्ट निवारण करने वाली हैं, और उनमें चन्द्रोदय व्यापिनी चतुर्थी में व्रत की पूजा

का विधान किया गया है। यदि दोनों ही दिन चतुर्थी चन्द्रोदय-व्यापिनी हों तो तृतीया से विद्धा पूर्वा का ही ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि लिखा है—'मातृविद्धा गणेश्वरे—गणेश्वर के व्रत में मातृतिथि (तृतीया) से विद्धा चतुर्थी ग्रहण की जाती है।' यदि दोनों ही दिन चन्द्रोदय व्यापिनी न हों तो परा-चतुर्थी लेना चाहिए।

कई एक विद्वानों का ऐसा मत भी है कि 'तृतीयायुक्त चतुर्थी इस व्रत के लिए श्रेष्ठ अवश्य मानी गई है, किन्तु जब सूर्यास्त होने के पहले तृतीया में छह घड़ी चतुर्थी का प्रवेश होता हो और यदि पहले दिन चन्द्रोदय-काल में तिथि का अभाव हो तो दूसरे दिन ही व्रत करना चाहिए।'

इस विषय में सारांश निर्णय इस प्रकार समझना चाहिए—'संकट-चतुर्थी चन्द्रोदय-व्यापिनी ग्राह्य है। यदि दो दिन चतुर्थी हो और दूसरे दिन की ही चतुर्थी चन्द्रोदय व्यापिनी हो तो दूसरे दिन ही व्रत करना चाहिए। यदि दोनों दिन चन्द्रोदय-व्यापिनी तिथि हो तो पहले दिन की तृतीयायुक्त चतुर्थी को ही व्रत के ि ए ग्रहण करना चाहिए। यदि दोनों ही दिनों की चन्द्रोदय व्यापिनी न हों तो दूसरे दिन ही व्रत का पालन करना चाहिये।' (गणेश कोश)

भगवान् गणेशजी, चतुर्थी माता तथा चन्द्रदेव को बारम्बार नमस्कार है।

चतुर्थी (चौथ) माता के मन्दिरों का परिचय

चतुर्थी (चौथमाता) मन्दिर अजमेर (राजस्थान)—अजमेर राजस्थान के प्रमुख नगरों की गणना में हैं। अजमेर से पुष्कर जाने वाला सड़क जो स्वामी दयानन्द ऋषि-उद्यान के पास से जाती है। ऋषि उद्यान से कुछ ही थोड़ी-दूर पर ही दायीं ओर चौथमाताजी का सुन्दर बृहत् मन्दिर है। चौथमाता की संग-मरमर की सुन्दर प्रभावशाली प्रतिमा उच्च सिंहासन पर विराजमान् हैं।

चौथ का बरवाड़ा मन्दिर (राजस्थान)—सवाई माधोपुर से जयपुर जाने वाली रेलवे-लाइन पर सवाई माधोपुर से दूसरा ही स्टेशन चौथ का बरवाड़ा है। स्टेशन के पास धर्मशाला भी है। वहां से थोड़ी दूर एक ऊँची पहाड़ी पर छह सौ सीढ़ियाँ चढ़ने पर मन्दिर में पहुँचा जाता है। माताजी के समीप ही भगवान् गणेशजी की मूर्ति भी स्थापित है। गणेशजी के पास कई शताब्दियों से अखण्ड-ज्योति जल रही है। मन्दिर के पास गौरे और काले भैरव की मूर्तियाँ स्थापित हैं। माघ कृष्ण चतुर्थी को यहां मेला भी लगता है।

卐

सोपान १३

वर्ष के सब ही महिनों में गणेशप्रिय चतुर्थी

होने वाले व्रतों की संक्षिप्त विधि और उनका माहात्म्य

भगवान् गणेशजी की कृपा प्रसन्नता प्राप्त करने हेतु गणेशप्रिय चतुर्थी तिथि को व्रत करके गणेशजी का पूजन करना चाहिए। पूजन के पश्चात् गणेशजी की कथा-कहानी पढ़ना कहना सुनना चाहिए। तदनन्तर गणेशजी को अर्घ्य प्रदान करें।

शान्तचित्त हो कर भक्ति-नमनपूर्वक श्रीगणेशजी के मन्त्र 'श्रीगणेशाय नमः' का इक्कीस बार जप करें और भगवान् गणेशजी को अर्घ्य प्रदान करें। अर्घ्य प्रदान करने का मन्त्र इस प्रकार है—

गणेशाय नमस्तुभ्यं सर्वसिद्धिप्रदायक।
संकटहर मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते॥
कृष्णपक्षे चतुर्थ्यां तु सम्पूजित विधूदये।
क्षिप्रं प्रसीद देवेश गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते॥

'समस्त सिद्धियों के दाता गणेश! आपको नमस्कार है। संकटों को हरण करने वाले देव! आप अर्घ्य ग्रहण कीजिए, आपको नमस्कार है। कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को चन्द्रोदय होने पर पूजित देवेश! आप अर्घ्य ग्रहण कीजिए, आपको नमस्कार है।'

इन श्लोकों के साथ 'संकट हरण गणपतये नमः' (संकटहरण गणपति के लिए नमस्कार है) दो बार बोल कर दो अर्घ्य देने चाहिए। यदि श्लोक पढ़-बोल नहीं सकें तो श्लोकों का जो ऊपर हिन्दी अर्थ लिखा है, वह ही बोल लेवें और दो बार बोल कर दो अर्घ्य देने चाहिए।

इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से, यदि मन्त्र नहीं पढ़ बोल सकें तो उसके नीचे लिखे हुए हिन्दी अर्थ को ही बोल कर चतुर्थी तिथि की अधिष्ठात्री देवी (चौथ माता) को अर्घ्य प्रदान करें।

तिथिनामुत्तमे देवि गणेशप्रिय वल्लभे।
सर्वसंकटनाशाय गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते॥
'चतुर्थ्यै नमः' इदमर्घ्यं समर्पयामि।

'तिथियों में उत्तम गणेशजी की प्यारी देवी! आपके लिए नमस्कार है। आप मेरे समस्त संकटों को नष्ट करने के लिए अर्घ्य ग्रहण करें। चतुर्थी तिथि की अधिष्ठात्री देवी के लिए नमस्कार है। मैं उन्हें यह अर्घ्य प्रदान करता हूँ।'

(व्रतराज)

तदनन्तर भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी के अतिरिक्त अन्य सभी गणेशजी के चतुर्थी व्रतों में चन्द्रोदय होने पर व्रत करने वाले को चन्द्रमा का दर्शन कर नमस्कार करके विधिवत् चन्द्रमा की पूजा करके ताम्बे के पात्र में लाल चन्दन, कुश, दूर्वा, लाल-फूल, अक्षत (साबूत चावल), शमीपत्र, दधि और जलपात्र के साथ ही निम्नांकित मन्त्र का अथवा मन्त्र के हिन्दी अर्थ का उच्चारण करते हुए चन्द्रमा को भी अर्घ्य देना चाहिए ।

गगनार्णवमाणिक्य चन्द्र दाक्षायणीपते ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं गणेशप्रतिरूपक ।।
(नारद पुराण पूर्व. ११३।७७)

'आकाशरूपी समुद्र के माणिक्य, दक्षकन्या रोहिणी के प्रियतम और गणेश के प्रतिरूप चन्द्रमा ! आप मेरा यह प्रस्तुत किया हुआ अर्घ्य स्वीकार करें ।'

उपर्युक्त भाँति से गणेशजी, चतुर्थी माता तथा चन्द्रमा देवता को प्रत्येक गणेश चतुर्थी के व्रत करने वालों को अर्घ्य देना चाहिए और इन तीनों देवताओं की नम्रतापूर्वक विनय भाव से पूजा नमस्कार भी करना चाहिए । तदनन्तर यथा-शक्ति ब्राह्मण एवं अपने पूज्यों को लड्डू, चूरमा, खीर आदि मिष्ठान्न, नैवेद्य, प्रसाद आदि से प्रेमपूर्वक भोजन करा के उन्हें दक्षिणा, वस्त्रालंकारादि से सन्तुष्ट कर आशीर्वाद ग्रहण करें । तत्पश्चात् उनकी अनुमति से अपने कुटुम्ब-परिवार सहित प्रसन्नतापूर्वक स्वयं भी भोजन करें ।

इस प्रकार से गणपति महाराज के चतुर्थी व्रत करने वालों के सभी कार्यों में विघ्न नहीं होते और उनके सभी शुभ-उत्तम कार्य निर्विघ्न सम्पन्न होते हैं । कष्टों का निवारण होता है । व्रत करने वालों का घर-धान्य, पुत्र सुख आदि सभी प्रकार की समृद्धियों से सम्पन्न होता है ।

प्रत्येक मास के चतुर्थी व्रतों की संक्षिप्त पूजा-विधि माहात्म्य फल निम्न प्रकार हैं । यथा साध्य गणेशजी की एवं चतुर्थी माता की प्रतिमा मूर्ति हो तो उनकी पूजा करें । यदि प्रतिमा मूर्ति न हो तो पीले रंग की चिकनी मिट्टी की गोल डली (कंकर के रूप में) मूर्ति के रूप में किसी पट्टे पर लाल वस्त्र बिछा कर स्थापित कर लें अथवा किसी पात्र (बर्तन) में स्थापित कर के षोड़शोपचार (सोलह प्रकार की) पूजा सामग्रियों द्वारा पूजन करना चाहिए । ऐसा न हो सके तो द्वादशोपचार (बारह प्रकार की) पूजा सामग्री से अथवा पंचोपचार (पांच प्रकार की) पूजा सामग्री से करना चाहिए ।

।। कृष्णपक्ष के चतुर्थी व्रत ।।

१. चैत्र कृष्णपक्ष चतुर्थी को वासुदेव स्वरूप गणेशजी की विधिवत् पूजा कर के ब्राह्मणों को लड्डुओं का भोजन करा के सुवर्ण की दक्षिणा देने से व्रत करने वाला सम्पूर्ण देवताओं से वन्दित हो क्षीराब्धिशायी श्री भगवान् विष्णु के सुख प्रदान करने वाले लोक में जाता हैं ।

२. वैशाख कृष्णपक्ष चतुर्थी को संकर्षण स्वरूप गणेश की पूजा कर के ब्राह्मण को भोजनोपरान्त दक्षिणा सहित शङ्ख का दान करने से व्रत करने वाला संकर्षण-लोक में कल्पों तक सुख प्राप्त करता है ।

३. ज्येष्ठ कृष्णपक्ष चतुर्थी को प्रद्युम्न रूपी गणेश की पूजा कर ब्राह्मण को भोजन कराने के पश्चात् दक्षिणा, फल-मूल का दान करने वाला व्रती स्वर्ग लोक प्राप्त कर लेता है।

४. आषाढ़ कृष्णपक्ष की चतुर्थी को अनिरुद्ध स्वरूप गणेश की प्रीतिपूर्वक पूजा कर के संन्यासियों को भोजन करा के वस्त्रों सहित तूम्बी पात्र का दान करने से व्रती मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है।

५. श्रावण कृष्णपक्ष की चतुर्थी को चन्द्रोदय होने पर मङ्गलमय गणेश स्वरूप का ध्यान करते हुए चन्द्रमा में अर्घ्य प्रदान करें और आवाहन आदि सभी प्रकार के उपचारों से उनकी भक्तिपूर्वक पूजा कर के लड्डुओं का नैवेद्य अर्पित करें। व्रत पूर्ण होने पर ब्राह्मणों को भोजन व दक्षिणा देकर उनकी अनुमति से लड्डूओं का प्रसाद भोजन करें। तत्पश्चात् रात्रि में गणेशजी का पुन: पूजन करें और पृथ्वी पर ही शयन करें। ऐसा करने से व्रती की सभी कामना पूर्ण होती हैं और अन्त में गणेश पद प्राप्त होता है। त्रैलोक्य में इसके समान अन्य कोई व्रत नहीं है।

६. भाद्रपद कृष्णपक्ष की चतुर्थी को बहुला गौ सहित गणेश की गन्ध, पुष्प, दूर्वादि सभी प्रकारों के द्वारा पूजा कर उनकी एक सौ आठ परिक्रमा करें और ब्राह्मण भोजन करा के सामर्थ्य के अनुसार दान करें। दान करने योग्य स्थिति न हो तो बहुला गौ को प्रणाम कर विसर्जन कर दें. इस भांति पांच सात, दस अथवा सोलह वर्षों तक इस व्रत का पालन कर के उद्यापन करना चाहिए। उस समय व्रती की शक्ति हो तो दूध देने वाली स्वस्थ उत्तम गौ का दान भी करना चाहिए। इस व्रत को करने वाले को सुख देने वाले भोगों की प्राप्ति होती है। देवता भी उसका सम्मान करते हैं और अन्त में गोलोक धाम की प्राप्ति होती हैं।

७. आश्विन कृष्णपक्ष की चतुर्थी को भगवान् गणपति की विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। इससे व्रत करने वाले पर गणेशजी ही नहीं बल्कि पितृगणों की भी प्रसन्नता है और वे व्रती को आशीर्वाद प्रदान करते हैं। इससे व्रत-पूजा करने वाला पुत्र-पुत्रादि का उत्तम सुख प्राप्त करता है।

८ कार्तिक कृष्णा चतुर्थी को 'करक चतुर्थी' (करवा चौथ) का व्रत किया जाता है। यह व्रत स्त्रियां विशेष रूप से करती हैं। इस दिन व्रत करने वाले को प्रात: काल स्नानादि से निवृत्त हो कर अपने नित्यकर्म पूजादि करने के पश्चात् शुद्ध, साफ, सुन्दर वस्त्राभूषणों से विभूषित हो गणेशजी की भक्ति पूर्वक बहुत से उपचारों द्वारा पूजा करने की विधि है। इस पूजा विधि में पवित्र चित्त से अत्यन्त श्रद्धा व विनयपूर्वक दस करवे, हो सके तो चीनी (सर्करा) द्वारा निर्मित करवों (पात्रों) में यदि कहीं ऐसा नहीं हो सके तो मिट्टी द्वारा निर्मित करवों (पात्रों) में ही उत्तम प्रकार के मिष्टान्न (पकवान) भर कर उनमें अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा रख कर परम प्रभु गजानन के सम्मुख नैवेद्य के रूप में प्रस्तुत कर समर्पण करें। समर्पण करते समय मन-ही-मन प्रार्थना करें कि 'हे करुणासिन्धु ! कपर्दिगणेश ! आप मुझ पर प्रसन्न हों।' तदनन्तर उन करवों को ब्राह्मणों को सुवासिनी स्त्रियों को अपनी इच्छानुसार आदरपूर्वक बांट देना चाहिए। पूजा

समापन के पश्चात् समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाले भगवान् गणेशजी का स्मरण, चिन्तन, स्तोत्र, स्तुति एवं नाम मंत्र का जप भी करना चाहिए। रात्रि में चन्द्रोदय होने पर चन्द्रमा को विधिपूर्वक अर्घ्य प्रदान करें। ब्राह्मण भोजन व अपने पूज्यों को भोजन करा कर उनकी अनुमति लेकर व्रतपूर्ति के लिए स्वयं भी मिष्टान्न-भोजन करना चाहिए।

इस व्रत का बारह, सोलह वर्षों तक करने का विधान भी है। तदनन्तर इसका उद्यापन किया जाता है। इसके पश्चात् स्त्री चाहे तो इस व्रत को छोड़ सकती है। अन्यथा सुख-सौभाग्य प्राप्ति के लिए इस व्रत को स्त्रियाँ जीवनपर्यन्त कर सकती हैं। स्त्रियों के लिए इसके समान सौभाग्य प्रदान करने वाला अन्य व्रत नहीं है।

९. मार्गशीर्ष कृष्णा चतुर्थी को व्रत करने वाले को भगवान् गणेशजी की पूजा करने का विधान है। पूजा के अतिरिक्त भगवान् गणेश, चौथ माता को अर्घ्य प्रदान करें। रात्रि में चन्द्रोदय होने पर उसे भी अर्घ्य प्रदान कर ब्राह्मण और अपने पूज्यवर्यों को भोजन करा कर स्वयं भी व्रतपूर्ति हेतु भोजन करें।

१०. पौष कृष्णा चतुर्थी को भक्तिपूर्वक विघ्नेश्वर गणेशजी की पूजा प्रार्थना स्तवनादि करने के पश्चात् एक ब्राह्मण को लड्डुओं का भोजन करा कर दक्षिणा देना चाहिए। इस प्रकार विधिवत् पूजा-व्रत करने वाले के यहाँ धन-धान्य सम्पत्ति का अभाव नहीं होता।

११. माघ कृष्णा चतुर्थी को 'संकष्ट व्रत' कहते हैं। कई जगह संकट हरण चतुर्थी व्रत अथवा संकट हरण गणपति व्रत भी कहते हैं। इस दिन प्रात: काल स्नान करके देवदेव गजमुख गणेशजी महाराज की प्रसन्नता के लिए व्रतोपवास का संकल्प कर के दिन भर संयम से रहते हुए भगवान् गणेशजी का स्मरण, चिन्तन, एवं भजन स्तवन जपादि करना चाहिए।

इसके व्रतविधान में चन्द्रोदय होने के समय मिट्टी की गणेश मूर्ति बना कर उसे पीढ़े पर स्थापित करें। उसके साथ उनके आयुध वाहन भी स्थापित कर षोडशोपचारों द्वारा भक्तिपूर्वक पूजन करना लिखा है। नैवेद्य में मोदक (लड्डू) और गुड़ मिश्रित तिल के लड्डू अर्पित करना बतलाया है। आचमन कराने के पश्चात् प्रदक्षिणा, नमस्कार, पुष्पांजलि अर्पित करना चाहिए। इस व्रत में गणेशजी, चौथ माता, चन्द्रमा को अर्घ्य अवश्य ही देने की विधि है। गणेशजी को नमस्कार करते समय व अर्घ्य देते समय 'संकटहरणगणपतये नमः' दो-दो बार बोल कर ही नमस्कार व अर्घ्य देना चाहिए। तत्पश्चात् यथाशक्ति उत्तम ब्राह्मणों को व अपने पूज्यवर्यों को सप्रेम भोजन व दक्षिणा से संतुष्ट कर के उनसे आशीर्वाद व अनुमति प्राप्त कर स्वयं को भोजन करना चाहिए। यह व्रत करने के प्रभाव से व्रत करने वाला धन-धान्य सम्पन्न होता है और उसे कभी कष्ट नहीं होता है। इस व्रत को 'भविष्योत्तर पुराण' में वक्रतुण्ड चतुर्थी नाम से भी कहा गया है। माघ मास से आरम्भ करके प्रत्येक महीने करते हुए एक वर्ष तक कर के पूर्ण करने का विधान भी है-इससे सब प्रकार के संकटों का नाश हो जाता है। माघ कृष्णा चतुर्थी को अङ्गारक-चतुर्थी भी कहा गया हैं।

अङ्गारक-चतुर्थी-माहात्म्य कथा

गणेश पुराण उपासना खण्ड अध्याय ६० में इसकी कथा प्राप्त होती है। यह कथा संक्षेप में इस प्रकार है—

पृथ्वी देवी ने महामुनि भारद्वाज के जयाकुसुम पुष्प के तुल्य अरुण पुत्र का पालन किया। सात वर्ष के पश्चात् उन्होंने उसको महर्षि के पास पहुँचा दिया। महर्षि ने अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने पुत्र का आलिङ्गन किया और उसका उपनयन संस्कार करा कर उसे वेद-शास्त्रादि का अध्ययन कराया। तदनन्तर उन्होंने अपने उस प्रिय पुत्र को गणपति मन्त्र देकर उसे गणेशजी को प्रसन्न करने के लिए आराधना करने की आज्ञा दी।

मुनि-पुत्र ने पिता के चरणों में प्रणाम किया और वे पुण्यतोया गङ्गाजी के तट पर चले गए। वहाँ वे परमप्रभु गणेशजी का ध्यान करते हुए भक्तिपूर्वक उनका मन्त्र-जप करने लगे। उन्होंने एक हजार वर्षों तक निराहार रहते हुए गणेशजी का ध्यान किया और उन्हीं का मन्त्र जपते रहे।

माघ-कृष्णा चतुर्थी को चन्द्रोदय होने पर दिव्य वस्त्राभूषण धारण किए हुए अष्टभुज चन्द्रभाल प्रसन्न होकर प्रकट हुए। वे अनेक शस्त्र धारण किए हुए थे। वे अनेक सूर्यों के समान प्रकाशित हो रहे थे। तपस्वी मुनि-पुत्र ने भगवान् गणेशजी का अद्भुत स्वरूपमय मङ्गलप्रदायक दर्शन किया और प्रेमपूर्वक गद्गद् कण्ठ से प्रार्थना-स्तवन किया।

वरदायक गणेशजी ने कहा—'मुनिपुत्र! मैं तुम्हारे इस कठोर तप एवं स्तवन प्रार्थनादि से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम अपनी इच्छानुसार वर मांगो।'

मुनि पुत्र ने प्रसन्न होकर अत्यन्त सविनय निवेदन किया—'प्रभो! आपके दुर्लभ दर्शन प्राप्त कर आज में कृतार्थ हो गया। मेरी माता पर्वतमालिनी पृथ्वी, मेरे पिता, मेरा तप, मेरे नेत्र, मेरी वाणी, मेरा जीवन और जन्म सफल हो गए। दयानिधान! में स्वर्ग में देवताओं के साथ रहते हुए अमृतपान करना चाहता हूँ और तीनो लोकों में मेरा नाम कल्याण करने वाला 'मङ्गल' प्रख्यात हो जाए।'

पृथ्वीपुत्र ने फिर निवेदन किया—'करुणासागर! प्रभो! मुझे आपका शुभ पावन दर्शन आज माघ-कृष्ण-चतुर्थी को हुआ है, इस लिए यह चतुर्थी नित्य पुण्य प्रदान करने वाली एवं संकट दूर करने वाली हो। सुरेश्वर! इस दिन जो भी व्रत कर आपका पूजन-स्तवन करे, आप कृपा करके उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण किया करें।'

सद्यः सिद्धि प्रदान करने वाले देवदेव गणेशजी ने वर प्रदान कर दिया-"मेदिनीनन्दन! तुम देवताओं के साथ स्वर्ग में रहते हुए सुधा पान करोगे। सर्वत्र तुम्हारा 'मंगल' नाम प्रख्यात होगा। तुम धरणीपुत्र हो और तुम्हारा रंग लाल है, अतः तुम्हारा एक नाम 'अङ्गारक' भी प्रसिद्ध होगा और यह तिथि भी अङ्गारक चतुर्थी नाम से प्रख्यात होवेगी। पृथ्वी पर इस दिन जो मनुष्य मेरा व्रत पूजन करेंगे, उन लोगों को समग्र एक वर्ष चतुर्थी व्रत करने के सभी फल प्राप्त हो जायेंगे। उनके किसी भी कार्य में कोई भी कमी, विघ्न उपस्थित नहीं होवेगें।"

विघ्नविनाशक भगवान् गणेशजी ने आगे यह भी कहा—'तुमने यह सर्वोत्तम व्रत किया है, इस कारण तुम अवन्तीनगर (उज्जैन) में परंतप नामक नरपाल हो कर सुख प्राप्त करोगे। इस व्रत की अद्भुत महिमा है। इसकी कथा कहने-सुनने से अथवा कीर्तन मात्र से ही मनुष्य की समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जायेंगी। तत्पश्चात् गणेशजी अन्तर्धान हो गए।

मंगल ने एक भव्य मन्दिर निर्माण कराया और उसमें दशभुज गणेशजी की प्रतिमा स्थापित करायी। उसका नाम भी 'मङ्गलमूर्ति' ही रखा गया। वह श्रीगणेश विग्रह समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। यहाँ अनुष्ठान. पूजन और दर्शन करने से सबके लिए मोक्षप्रद होगा।

पृथ्वीपुत्र ने मङ्गलवारी चतुर्थी के दिन व्रत कर के श्रीगणेशजी की आराधना की थी। इसका अत्यन्त आश्चर्यजनक फल हुआ कि वे सशरीर ही स्वर्ग में चले गए। वहां उन्होंने सुरसमुदाय के साथ अमृत-पान किया और परम पावनी यह चतुर्थी तिथि 'अङ्गारक-चतुर्थी' के नाम से प्रख्यात हुई। इसका व्रत पूजन करने से व्रती को पुत्र-पौत्रादि, धन-धान्य, समृद्धि प्राप्त होती है और समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है।

१२: फाल्गुन कृष्णा चतुर्थी का व्रत करने वाले की सामर्थ्य हो तो यथा शक्ति गणेशजी की सोने की प्रतिमा बनवा कर उसकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजा करने के पश्चात् वह मूर्ति किसी उत्तम आचरण रखने वाले विद्वान् ब्राह्मण को दान में दे देना चाहिये। यदि ऐसा सामर्थ्य न हो तो पीली मिट्टी की डली के गणेशजी की प्रतिमा की पूजा करे। इस दिन की पूजा में गणेशजी को गुड तिल का नैवेद्य लगावें। तिल की गजक का भी नैवेद्य लगाया जा सकता है। निर्मित नैवेद्य का ही दान करना चाहिए और तिल-गुड़ अथवा तिल-चीनी (शर्करा) से ही हवन करना चाहिए। तिल निर्मित मीठे व्यञ्जनों से ही ब्राह्मण भोजन कराना और उसके बाद स्वयं भी करना चाहिये। इस व्रत के करने से सभी प्रकार की सम्पदाओं की वृद्धि होती है और गणेशजी की कृपा से सब प्रकार के शुभ आनन्ददायक कार्यों की सिद्धि प्राप्त होती है।

कई प्रान्त व स्थानों में इस दिन की गणपति पूजा को 'ढुण्ढिराजगणपति' पूजा भी कहा जाता है। कई एक प्रान्त, स्थानों में माघ शुक्ला चतुर्थी तथा फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी के दिन भी पूजा व्रतों को ढुण्ढिराज गणपति पूजा कहते हैं। तिल-गुड़ अथवा चीनी मिश्रित मिठाई के स्थान पर गुड़ अथवा मिश्रित सिंघाड़े (पानी फल) के बनाये हुए व्यञ्जन का नैवेद्य प्रयोग किया जाता है। फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी के दिन और दूसरे नामों से भी व्रत-पूजा विधान प्राप्त होते हैं। उनका वर्णन प्रति वर्ष के प्रत्येक महीने की शुक्ला चतुर्थी व्रतों के विवरण में लिखे जावेंगे।

शुक्ल पक्ष में चतुर्थी व्रत पूजन

आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी के दिन व्रत कर के उस दिन भगवान् मङ्गलरूप गणपति की श्रद्धा-भक्ति नमनपूर्वक सविधि सोलह प्रकार की पूजा सामग्रियों द्वारा पूजन करें। इससे व्रत पूजा करने वाले को देवताओं के समान सब प्रकार के उत्तम भौतिक सुखों की प्राप्ति होती है।

श्रावण शुक्ला चतुर्थी के दिन 'दूर्वा गणपति' का पूजन व्रत करने की विधि है। उस दिन प्रातः काल ही स्नानादि से निवृत होकर सिंहासन पर चतुर्भुज, एकदन्त गणेशजी की स्वर्णमयी मूर्ति का निर्माण करायें और सोने की ही दूर्वा भी बनवायें। इसके पश्चात् सर्वतोभद्रामण्डल बनवायें, उस पर कलश स्थापना करें और उसमें दूर्वा लगाकर उसके ऊपर लाल वस्त्र बिछा कर गणेशजी की प्रतिमा स्थापित करें। गणेशजी को अरुण वस्त्र से सजावें।

तदनन्तर सुगन्धित पत्र-पुष्पादि व उत्तम, सुन्दर, स्वच्छ षोडशोपचार सामग्रियों द्वारा भक्ति-विनम्र भाव से उनकी पूजा करें। आरती, प्रणाम, स्तोत्र-पाठ, स्तवन तथा परिक्रमा करने के पश्चात् अपने से जान अन्जान में होने वाले अपराध, पापों के लिए क्षमा-प्रार्थना करें। इस प्रकार से तीन या पाँच वर्ष तक व्रत-पूजन पालन करने से समस्त शुभकामनाएँ भगवान् गणेश की कृपा से पूर्ण हो जाती हैं।
(सौर पुराण)

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को सिद्धि विनायक गणेशजी की पूजा-व्रत किया जाता है। उस दिन गणेशजी का मध्याह्न में प्राकट्य हुआ था। अतः उसमें हो सके जहां तक मध्याह्न व्यापिनी तिथि ही ग्रहण करना चाहिए तथा गणेशजी की पूजा भी मध्याह्न में ही करनी चाहिये। इस व्रत पूजा में ही गणेशजी की प्रतिमा स्वर्णमयी बना कर ही पूजन करने का विधान है किन्तु स्वर्णमय मूर्ति निर्माण कराने की सामर्थ्य न हो तो हल्दी चूर्ण निर्मित पीली मिट्टी की प्रतिमा का ही पूजन करना चाहिये।

सर्वप्रथम एकाग्रचित्त से सर्वानन्दप्रदाता सिद्धि विनायक का ध्यान करें और सोलह पूजोपचार सामग्रियों द्वारा सिद्धि विनायक गणेशजी की पूजा करें। इस पूजा में श्राद्ध भक्तिपूर्वक गणेशजी के इक्कीस नामों को उच्चारण करके इक्कीस पत्तों का समर्पण करना बतलाया है। उनके प्रत्येक नाम के साथ 'नमः' शब्द जोड़ना होता है। यह इक्कीस नाम और पत्ते इस प्रकार बतलाये हैं—

'सुमुखाय नमः' शमीपत्र समर्पण करें। 'गणाधीशाय नमः' भंगरैया का पत्र, 'उमापुत्राय नमः' बिल्वपत्र, 'गजमुखाय नमः' दूर्वादल, 'लम्बोदराय नमः' बेर का पत्ता, 'हरसूनवे नमः' धतूरा का पत्ता, 'शूर्पकर्णाय नमः' तुलसी दल (ब्रह्मवैवर्त पुराण में गणेशजी को तुलसी चढ़ाना निषद्ध बतलाया किन्तु नारद पुराण में गणेशजी के शूर्पकर्ण स्वरूप एवं 'व्रतराज' में 'गजवक्त्र' स्वरूप को तुलसीपत्र अर्पण करने का विधान है।) 'वक्रतुण्डाय नमः' सेम का पत्ता, 'गुहाग्रजाय नमः' अपामार्ग का पत्ता, 'एकदन्ताय नमः' वनभरा अथवा भटकटैया का पत्ता', 'हेरम्बाय नमः' सिन्दूर (सिन्दूर चूर्ण अथवा सिन्दूर वृत का पत्ता), 'चतुर्होत्रे नमः' तेजपात, 'सर्वेश्वराय नमः' अगस्त्य वृक्ष का पत्ता, विकटाय नमः' कनेर का पत्ता, हेमतुण्डाय नमः' अश्मात पत्र अथवा कदली पत्र (केला का पत्ता 'विनाकाय नमः' आक का पत्ता, 'कपिलाय नमः' अर्जुन वृक्ष का पत्ता 'वटवे नमः' देवदास का पत्ता, 'भालचन्द्राय नमः' सरुआ का पत्ता, 'सुराग्रजाय नमः' गान्धारी का पत्र और 'सिद्धिविनायकाय नमः' कह कर केतकी-पत्र (केवड़ा) प्रीतिपूर्वक समर्पण करें।

पूजोपचारों में इन पत्रों को समर्पण करने से श्री गणेशजी को अत्यन्त प्रसन्नता होती है। इन पत्रों के समर्पण करने के पश्चात् बारह-बारह अथवा पाँच-

पाँच दूर्वा के तार के दो जुट्टे (दूब एक प्रकार की घास होती है-इसके कोमल-कोमल तार), गन्ध, लाल अथवा सिन्दूरी रंग के पुष्प और अक्षत (साबूत चावल)के साथ भगवान् गणेशजी को अर्पण करें। नैवेद्य के रूप में पांच, सात अथवा ग्यारह लड्डू उन भगवान् गणपति को अत्यन्त प्रेम से नमन करते हुए अर्पण करें। आरती, पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थनादि कर के श्रद्धा भक्ति से बार-बार प्रणाम करते हुए पूजा विसर्जन करें। तदन्तर गणेशजी की प्रतिमा सब ही पूजोपचारों सहित अपने ब्राह्मण गुरु (आचार्य अथवा अन्य पूज्य सम्मानीय ब्राह्मण, पंडित, पूजा कराने वाले को दक्षिणा सहित प्रदान कर देना चाहिये। इस भांति पाँच वर्ष तक निरन्तर व्रत तथा गणेश पूजन करने वाले को एहलौकिक एवं पारलौकिक समस्त आनन्द प्राप्त होते हैं। शिवलोक प्राप्त होता है। इस तिथि में दिन-रात्रि में चन्द्र-दर्शन करने का निषेध है, अतः दर्शन नहीं करें। इस व्रत-पूजन में चन्द्रमा को अर्घ्य नहीं दिया जाता है। भगवान् गणेशजी व चतुर्थी तिथि को ही मध्याह्न में अर्घ्य दिया जाना चाहिये। यदि इस दिन चन्द्र-दर्शन हो जाये तो मिथ्या कलंक लगता है। जिसकी कथा एवं दोष निवारण की कथा इसी पुस्तक में लिखी है, वह पढ़ना चाहिये।

आश्विन शुक्ल चतुर्थी को कपर्दीश-विनायक की पूजा व व्रत किया जाता है। पूजा षोडशोपचार द्वारा ही सम्पन्न करनी होती है। व्रत करने वाला स्वयं यज्ञोपवीतधारी वेदपाठी ब्राह्मण न होवे तो ऐसे योग्य विद्वान पंडित द्वारा ही 'पुरुष सूक्त' के षोडश मन्त्रों (सोलह मन्त्रों) द्वारा करना चाहिये। इस दिन के व्रत-पूजन में ऐसा ही विधान है। इससे ही भगवान् कपर्दीश-विनायक अधिक प्रसन्न होते हैं उनकी प्रसन्नता ही सब प्रकट के सुख प्रदान करती है।

मार्गशीर्ष शुक्ल-चतुर्थी को 'कृच्छ्र-चतुर्थी' व्रत-गणपति पूजन करने का वर्णन 'स्कन्द पुराण' में प्राप्त होता है। इनके लिए लिखा है इस दिन की तिथि से यह पूजा-व्रत आरम्भ कर के एक वर्ष तक निरन्तर प्रत्येक चतुर्थी को व्रत करते हुए देवदेव भगवान् गणेशजी का षोडशोपचारों द्वारा श्रद्धा-प्रीतिपूर्वक पूजन करें। इसके व्रत करने की विधि इस प्रकार बतलायी गयी है। प्रथम वर्ष में पूजा करने के पश्चात् एक भुक्त (दिन में एक समय भोजन) करें और दूसरे वर्ष प्रत्येक चतुर्थी को व्रत-पूजन करने के पश्चात् रात्रि में एक बार भोजन करें।

तीसरे वर्ष में प्रत्येक चतुर्थी को व्रत-पूजन करने के पश्चात् अयाचित (बिना मांगे मिला हुआ) अन्न एक बार खाकर रहें। फिर चौथे वर्ष में प्रत्येक चतुर्थी को सर्वथा निराहार रहकर गणपति-पूजन व्रत करें। उनका स्मरण, चिन्तन, भजन अत्यन्त श्रद्धा-प्रेमपूर्वक करना चाहिये। इस प्रकार की विधि-पूर्वक व्रत-पूजन करते हुए चार वर्ष पूर्ण हो जाने पर व्रत-स्नान करें। उस समय व्रत करने वाले को गणेशजी की सुवर्ण-प्रतिमा बनवाना चाहिये। यदि ऐसी क्षमता नहीं हो तो हल्दी के चूर्ण से ही गणेशजी की मूर्ति बना लेना चाहिये।

विविध प्रकार के सुन्दर रंगों से पृथ्वी पर कमल-पुष्प की आकृति बनाकर उस पर कलश की स्थापना करें। एक ताम्बे के बर्तन को चावलों से भर कर उसे कलश पर रखें। उस पर लाल वस्त्र बिछा कर उसके ऊपर भगवान् गणेश की मूर्ति

को स्थापित करें। इसके पश्चात् षोडशोपचार (सोलह सामग्रियों) द्वारा उन दया-निधान गणेशजी की श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजा करें। नैवेद्य के रूप में मङ्गलमय गणपति देव को लड्डू ही समर्पित करें। पूजा में प्रणाम, परिक्रमा स्तवन, प्रार्थनादि सप्रेम करने के पश्चात् सम्पूर्ण रात्रि गीत, वाद्य, गणेशजी की पौराणिक कथा श्रवण करें। गणेशजी का मन्त्र जाप करें।

प्रातःकाल होने पर स्नानादि से निवृत्त होकर शुद्ध नवीन वस्त्र धारण करें। तदनन्तर तिल, चावल, जौ, पीली सरसों, गौ घृत, खांड (चीनी) मिश्रित इस हवन सामग्री द्वारा विधि पूर्वक हवन करें। गण, गणाधिप, कुष्माण्छ, त्रिपुरान्तक, लम्बोदर, एकदन्त, रुक्मदंष्ट्र, विघ्नप, ब्रह्मा, यम, वरुण, सोम, सूर्य हुताशन, गन्धमादी तथा परमेष्ठी—इन सोलह नामों द्वारा प्रत्येक नाम के आदि में 'प्रणव (ॐ)' और अन्त में चतुर्थी विभक्ति और उसके आगे 'नमः' लगा कर अग्नि में एक आहुति देवें।

इसके पश्चात् 'वक्रतुण्डाय हुम्'— इस मन्त्र से एक सौ आठ आहुतियां दें। तदनन्तर *व्याहृतियों द्वारा यथा शक्ति होम करके पूर्णाहुति देना चाहिये। तत्पश्चात् दिक्पालों की पूजा करें। चौबीस ब्राह्मणों को प्रेमपूर्वक लड्डू और खीर से भोजन करावें, दक्षिणा देवें। आचार्य को दक्षिणा के साथ सवत्सा गौ का दान देवें। तदनन्तर उन सब ब्राह्मण विद्वानों के चरणों में श्रद्धा-भक्तिपूर्वक प्रणाम करें, परिक्रमा करें। इसके पश्चात् उन्हें विदा करें। फिर अपने पूज्य एवं स्वजन भाई-बन्धुओं को भोजन करावें और स्वयं भी प्रसन्नतापूर्वक भोजन करें।

इस प्रकार इस महामहिमामय व्रत-पूजन का पालन करने वाले मनुष्य भगवान् दयानिधान गणेशजी की कृपा प्रसाद से इस लोक में उत्तम आनन्दप्रद-भोग प्राप्त करते हैं और देहत्याग करने पर भगवान् विष्णु के सायुज्य को प्राप्त करते हैं।

माघ - शुक्ल पक्ष की चतुर्थी का व्रत कर के अत्यन्त श्रद्धाभक्ति से गणेशजी का पूजन करना चाहिये और दूसरे दिन पञ्चमी को तिल-गुड़ अथवा तिल-शर्करा (चीनी) निर्मित मीठे व्यञ्जन का भोजन करें। इस भाँति से व्रत करने वाला मनुष्य आनन्द-पूर्वक निर्विघ्न सुखी जीवन व्यतीत करता है। इस दिन की पूजा के लिए 'गं स्वाहा'— यह मूल मन्त्र है और 'गां नमः' आदि से हृदयादि न्यास इस प्रकार करें। 'गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं नेत्र त्रयाय वौषट्। गौं कवचाय हुम्। गः अस्त्राय फट्।

इस दिन की गणेशजी की पूजा में 'आगच्छोल्काय' कहते हुए गणेशजी का आवाहन करें और 'गच्छोल्काय' कहते हुए विसर्जन करें। इस भाँति आदि में 'गकार' युक्त और अन्त में 'उल्का' शब्द युक्त मन्त्र से गणेशजी का आवाहनादि कार्य किये जाने चाहिये और षोड़शोपचार (सोलह उपचारों) द्वारा विधि पूर्वक श्रीगणेशजी का पूजन करें नैवेद्य के रूप में लड्डू अर्पण करना चाहिये। तदनन्तर

---

* 'ॐ भूः स्वाहा'—इदमग्नये न मम।
'ॐ भुवः स्वाहा'—इदं वायवे न मम।
'ॐ स्वः स्वाहा'—इदं सूर्याय न मम। ये व्याहृति होम के मन्त्र हैं।

आचमन, आरती, परिक्रमा, पुष्पाञ्जलि करने के पश्चात् इस गणेश गायत्री का जप करें—

ॐ महोल्काय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।। (अग्नि पुराण)

इस व्रत का बहुत माहात्म्य वर्णन किया जाता है ।

माघ शुक्ल-चतुर्थी को गौरी व्रत पूजा

इस तिथि को गौरी व्रत-पूजा करने की विधि इस प्रकार बतलाई गयी है । उस दिन योगिनी-गणों सहित गौरी की पूजा की जाती है । मनुष्यों को विशेष रूप से स्त्रियों को यह पूजा षोडशोपचारों (सोलह सामग्रियों) द्वारा करना चाहिये । विशेष रूप से यह सोलह वस्तु--कुन्द, पुष्प, कुङ्कुम, लाल सूत्र, सिन्दूर, हल्दी चूर्ण, लाल पुष्प, महावर अथवा मेंहदी, धूप, दीप, गुड़, अदरख, दूध खीर, नमक और पालक का पत्ता भगवती गौरी को प्रीतिपूर्वक पूजन में अर्पण करें । इसके पश्चात् अपने सुख-सौभाग्य की वृद्धि हेतु सोलह सौभाग्यवती स्त्रियों एवं सोलह उत्तम विद्वान् ब्राह्मणों की भी पूजा करने की विधि भी बतलायी गयी है । यह सब पूजन कार्य सम्पन्न कर लेने के पश्चात् प्रसन्न मन से अपने पूज्यों, भाई-बन्धु-परिजनों को भोजन करा के स्वयं भी भोजन करना चाहिये । इस 'गौरी-व्रत पूजन' के प्रभाव से सौभाग्य एवं आरोग्य की वृद्धि होती है ।

कुछ लोग इसी दिन काशी में विराजमान हो रहे ढुण्ढिराज गणेश का पूजन करते हैं । उन्हें श्वेत तिल और चीनी द्वारा निर्मित लड्डू अर्पण करते हैं । रात्रि में एक समय भोजन करके भगवान् ढुण्ढिराज गणपति का स्मरण, कीर्तन एवं गुणगान करते हुए रात्रि में जागरण करें । इससे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं । जो काशी न जा सके उनको अपने स्थान पर ढुण्ढिराज गणपति के नाम से पूजा करना चाहिए । (त्रिस्थली सेतु)

इसी दिन 'कुण्ड-व्रत' नाम से पूजा-व्रत भी किया जाता है । लिखा है—व्रत करके देवी की षोडशोपचारों (सोलह उपचारों) से विधिपूर्वक पूजन करने वाले को संतति और सौभाग्य की प्राप्ति होती है । (देवी भागवत)

इसी दिन 'ललिता देवी व्रत-पूजन' भी किया जाता है । इसमें व्रत करके ललिता-देवी को षोडशोपचारों द्वारा पूजा करने से भी सुख-सौभाग्य, धन धान्य, पुत्र-पौत्रादि की प्राप्ति व समृद्धि प्राप्त होती है । (ललिता पूजन विधि माहात्म्य)

इसी दिन 'शान्ति-व्रत' गणपति पूजन भी किया जाता है– व्रत करके गणपति की षोडशोपचारों द्वारा करें और उन्हें नैवेद्य के रूप में घृतसिक्त (गाय के घृत में सेंके हुए) पूआ और साथ में नमकीन (नमक मिश्रित पदार्थ) अर्पण करना चाहिए । तत्पश्चात् गुरु की पूजा कर उन्हें पूआ व नमकीन पदार्थों का भोजन कराकर दक्षिणा देने से अथवा (गुड़, नमक, घृत) दक्षिणा सहित देने से स्थिर शान्ति प्राप्त होती है । (भविष्य पुराण)

यह तिथि अत्यन्त पुण्यमय मानी गई है । इस तिथि में स्नान, दान, जप, हवन, ब्राह्मण भोजन, देवपूजन करने से आदिदेव भगवान् गणपति की कृपा से सहस्र गुना फल प्राप्त होता है ।

फाल्गुन-शुक्ल-चतुर्थी को 'मनोरथ चतुर्थी' व्रत पूजन करने की विधि इस प्रकार बतलाई गयी है। गणेशजी की मूर्ति स्वर्ण की बनवा कर स्थापन करें और इसको आरम्भ कर के बारहों महीने की, प्रत्येक महीने की शुक्ला चतुर्थी को व्रत करते हुए उन गणेशजी की षोडशोपचारों द्वारा श्रद्धा प्रेमपूर्वक पूजन स्तवन करें। पूजा करने के पश्चात् नक्त व्रत का विधान है अर्थात् एक समय भोजन किया करें। बारह महीनों की पूजा-व्रत पूर्ण होने के पश्चात् सोलह विद्वान ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देवें। आचार्य (गुरु) को स्वर्ण निर्मित गणपति की प्रतिमा को दान कर देवें। गणपति को नैवेद्य में और गुरु एवं ब्राह्मण भोजन में मिष्टान्न का ही प्रयोग किया जाए। इससे व्रत एवं पूजा करने वाला अपने मनोरथ की सिद्धि प्राप्त कर लेता है। (मत्स्य पुराण)

'अविघ्ना-चतुर्थी-व्रत—पूजनविधि'

किसी भी महीने में कोई भी चतुर्थी तिथि रविवार अथवा मंगलवार के दिन हो, वह विशेष फलदायिनी होती है। उसको अङ्गारक-चतुर्थी कहा जाता है। उस दिन व्रत करके गणेशजी का षोडशोपचारों द्वारा पूजन करने से मनुष्य अपनी सभी अभीष्ट वस्तुओं को प्राप्त कर लेता है। (अग्नि पुराण)

'चतुर्थी-व्रत पूजन के विशिष्ट नियम'

चतुर्थी व्रत पूजन करने वाले को प्रातः काल उठना चाहिए। उठते ही चतुर्थी माता एवं गणेशजी को स्मरण करना चाहिए। व्रत पूजन का मानसिक संकल्प करना चाहिए। नित्यावश्यक कार्यों से निवृत्त हो, स्नान कर, शुद्ध वस्त्र धारण करें। उस दिन संयम से रहें, झूठ नहीं बोलें, शुद्धाचरण रखें। अपवित्र वस्तुओं को स्पर्श न करें, नीच कर्म करने वालों से संभाषण वार्ता न करें। मन-वचन-कर्म द्वारा किसी का अहित न करें। भगवान् गणपति का ध्यान-स्मरण बनाए रखें। भगवान् गणेशजी की पुराण ग्रन्थों में बहुत कथाएँ हैं—उनको पढ़ें अथवा श्रवण करें। इनके अतिरिक्त प्रत्येक प्रान्त में लोक कथाएँ भी प्रचलित हैं, उनकी कथन श्रवण करें। यह सब बात भगवान् गणेशजी को प्रीति प्रदान करने वाली हैं। इनका सावधानी पूर्वक पालन करना चाहिए।

(साभार पं० शिवनाथजी दूबे के लेख [कल्याण] से संगृहीत)

卐

सोपान १४

भगवान् विघ्नराज गणेशजी की देवताओं पर कृपा

पुण्यतोया गौत्तमी (गोदावरी) के पावन देवतागण यज्ञनुष्ठान में लगे हुए थे। देवतओं ने यज्ञका आरम्भ तो कर दिया किन्तु वे उसको पूर्ण नहीं कर पा रहे थे। उसमें बार-बार विघ्न उपस्थित होते थे। देवगण चिन्तित हो गये और अन्त में वे भगवान् विष्णु एवं ब्रह्माजी की शरण में गये। ब्रह्माजी ने ध्यान लगाकर स्थिति को अवगत किया। फिर उन्होंने देवतओं से कहा—

'देवगणो ! अनुग्रह मूर्ति विघ्नविनायक गणपति महाराज ही तुम्हारे इस यज्ञ का विघ्न दूर कर सकते हैं। अतः उन्हीं की शरण ग्रहण करो।'

देवसमुदाय पुनः गौत्तमी के पावन तट पर लौट आया। उन्होंने गौत्तमी के पवित्र जल में स्नान किया। तदनन्तर वे विघ्नेश्वर गणेशजी का अनुग्रह प्राप्त करने हेतु स्तुति करने लगे—

यः सर्वकार्येषु सदा सुराणामपीशविष्णवम्बुजसम्भवानाम्।
पूज्यो नमस्यः परिचिन्तनीयस्तं विघ्नराजं शरणं व्रजामः॥
न विघ्नराजेन समोऽस्ति कश्चिद् देवो मनोवाञ्छितसम्प्रदाता।
निश्चित्य चैतत् त्रिपुरान्तकोऽपि ते पूजयामास वधे पुराणाम्॥
(ब्रह्मपुराण ११४।६-७)

'सर्वदा सर्वकार्यों में सम्पूर्ण देवता तथा शिव, विष्णु और ब्रह्मा भी जिनका पूजन नमस्कार और चिन्तन करते हैं, उन विघ्नराज श्री गणेशजी के समान मनोवाञ्छित फल प्रदान करने वाला दूसरा कोई देवता नहीं है, यह निश्चय करके त्रिपुरारी महादेवजी ने भी त्रिपुर-वध के समय पहले उनका पूजन किया था।'

यो मातरं सरसैर्नृत्यगीतै-स्तथाभिलाषैरखिलैर्विनोदैः।
सन्तोषयामास तदातितुष्टं तं श्रीगणेशं शरणं प्रपद्ये॥
(ब्रह्मपुराण ११४।१६)

जिन्होंने अपने रसमय संगीत, नृत्य, समस्त मनोरथों की सिद्धि तथा विनोद के द्वारा माता पार्वती को पूर्ण सन्तुष्ट किया है, उन अत्यन्त सन्तुष्ट हृदय वाले श्री गणेशजी महाराज की हम शरण ग्रहण करते हैं।'

इस प्रकार से देवताओं द्वारा की गयी स्तुति को सुनकर कृपामूर्ति श्री गणेशजी महाराज तत्काल अपने चतुर्भुजरूप में उनके समक्ष प्रकट हो गये और अपने अनुग्रह की वर्षा-सी करते हुए कहा—

'देवताओ ! अब तुम्हारा यह यज्ञ निर्विघ्न सम्पन्न होगा और तुम लोगों द्वारा किए इस स्तवन का जो पाठ करेगा। उसके सब दुःख एवं दरिद्रता सर्वदा के लिए दूर हो जायेंगे।'

भगवान् गणेशजी का इस प्रकार से अनुग्रह प्राप्त कर देवताओं ने प्रसन्नता पूर्वक यज्ञानुष्ठान सम्पन्न किया। (ह०क्र०दु०) (साभार कल्याण से सगृहीत)

卐

सोपान १५

शुक्ल शर्मा एवं विद्रुमा पर विनायक की कृपा

बहुत प्राचीन समय में काशीनगरी में शुक्ल शर्मा नाम के एक ब्राह्मण अपनी विद्रुमा नाम की पत्नी सहित रहते थे। वे घर में पूर्ण रूप से दरिद्र थे। घर की ऐसी स्थिति थी कि किसी भी प्रकार की धातु का भी कोई बर्तन नहीं था। साध्वी विद्रुमा के पास वल्कल वस्त्र के अतिरिक्त कोई वस्त्र तक लज्जानिवारण के लिए नहीं था। उनकी घास फूस की टूटी टापरी भी इस प्रकार की थी कि उसमें रात्रि में तारे भी दिखाई देते थे। उन्हें जो कुछ भी भिक्षा द्वारा प्राप्त हो जाता, उससे ही जीवन निर्वाह होता था। कभी-कभी भिक्षा में कुछ भी प्राप्त नहीं होता तब वे निराहार रहकर ही पूर्ण सन्तोष कर लेते थे। ये ब्राह्मण दम्पत्ती अपने जीवन में सर्वदा सन्तुष्ट रहते थे। उन्हें कभी किसी वस्तु के अभाव का कोई असंतोष नहीं प्रतीत होता था। एक मात्र जीवन का आधार भगवान् गणेशजीकी भक्ति ही थी।

एक समय महामहिम भगवान् विनायक काशी में पधारे। शुक्ल शर्मा ब्राह्मण को विनायक के काशी में आगमन की सूचना मिली, वे हृदय से अत्यन्त प्रसन्न हो गए और उन्हें भिक्षा में जो कुछ भी मिला, उसको लेकर वे तत्काल घर पहुँचे। उनकी पत्नी विद्रुमा तो सर्वदा उनकी प्रतीक्षा में ही रहा करती थी। शुक्ल शर्मा ने घर पहुँचते ही विद्रुमा से कहा—

'विद्रुमा! भगवान् विनायक काशी में पधारे हैं, हमें भी उनका स्वागत पूजन करना चाहिए। शुक्ल शर्मा की यह बात सुनकर विद्रुमा बड़े आश्चर्य में पड़ गयी।' विद्रुमा ने कहा—

'नाथ! हम लोग तो महादरिद्र हैं, उनका क्या स्वागत करेंगे और किस वस्तु से करेंगे? और ऐसे दरिद्र के घर पर भगवान् विनायक क्यों पधारेंगे?

शुक्ल शर्मा को कृपासिंधु विनायक पर पूर्ण विश्वास था। उन्होंने विद्रुमा से कहा—

'प्रिय! भगवान् विनायक बड़े दयालु हैं वे गरीबों पर अवश्य दया करते हैं। वे अवश्य हमारे घर आकर पत्र-पुष्प स्वीकार करेंगे।'

अपने पतिदेव की इस प्रकार विश्वसनीय वाणी को सुनकर विद्रुमा के मन में भी विनायक के पधारने की आशा जागृत हुई। वह तत्काल ही पड़ोसियों के घरों में जाकर भगवान् विनायक की पूजा हेतु गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, वनफल और सूखा आँवला आदि वस्तुएँ माँग-माँग कर ले आयीं। भिक्षा में थोड़े से चावल भी मिले थे। विद्रुमा ने उन चावलों को एक हंडिया में अधिक जल के साथ डालकर पतला माँडी के रूप में भोजन तैयार किया। शुक्ल-दम्पत्ती के उत्साह का पार न

था। भगवान् विनायक के स्वागत की अगवानी के लिए हरे नूतन आम्र पल्लवों का तोरण बना दिया। बन्दनवार बांधी गई। टूटे-फूटे घर को गोबर-मिट्टी से सुधारकर लीपपोतकर साफ कर दिया। इस प्रकार सब तैयार करके वे ब्राह्मण-दम्पत्ति श्री विनायक के नामों के जप-स्मरण करने में पूर्ण रूप से लीन हो गए। उन्हें पूर्ण आशा-विश्वास हो रहा था कि भगवान् विनायक उन पर दया करके उनके घर पर अवश्य पधारेंगे।

थोड़े समय के पश्चात् ही भगवान् विनायक बालकों की टोली को साथ लिए खेलते-खेलते उस ब्राह्मण-दम्पत्ति के दरवाजे पर आ गए। ब्राह्मण-दम्पत्ति दौड़कर दरवाजे पर पहुँचे और उनकी वह सुन्दर मनोहारिणी छवि देखते ही आत्म-विभोर हो गए। उनकी प्रसन्नता का वर्णन नहीं किया जा सकता, उनकी वाणी गद्गद् हो गयी, दोनों की आँखों से प्रेम के अश्रुओं की धारा बहने लगी। बड़ी कठिनाई से शुक्ल शर्मा ने भगवान् विनायक को बैठने के लिए एक फटा चिथड़ा आसन के स्थान पर बिछाकर उन्हें उस पर बैठाया। और ब्राह्मण-दम्पत्ति ने अत्यन्त विनम्रता से उनके चरणों को जल से धोया और उस चरणोदक के अपने सिर पर छींटे लगाए। शेष उस चरणामृत को पान कर लिया। शुक्ल शर्मा ने हाथ जोड़कर कहा—

'आज मेरा जन्म, तप, ज्ञान, वंश आदि सभी सफल हो गए जो पापों का नाश करने वाले दीनानाथ आप मुझ अकिंचन की कुटिया पर पधारे।' तदन्तर गन्ध, अक्षत, पुष्प माला, दूर्वाङ्कुर, शमीपत्र, आँवला, उत्तम तैलादि विनायक को अर्पित किए, धूप, दीपक भी उनके समक्ष रखे। तत्पश्चात् उनके सम्मुख बनफल रख कर अर्घ्य पुष्पाञ्जलि समर्पण करके प्रणाम किया और नैवेद्य के स्थान पर शुक्ल शर्मा अत्यन्त पतला चावलों का माँड अत्यन्त लज्जा और संकोच करते हुए पत्तों पर परसने लगे तो वह पतला होने से बहने लगा, उसे बहता देखकर शुक्ल शर्मा शरम के मारे हाथ जोड़कर खड़े हो गए और भगवान विनायक यह सब देखकर बहुत प्रसन्नता दर्शाते हुए शीघ्रतापूर्वक व माँड का नैवेद्य हाथों के बार-बार लगाकर सबड़ने व चाटने लगे। भगवान् विनायक ने विद्रुमा को कहा—

'मैया बड़ी भूख लगी है। बहुत जल्दी-जल्दी करके शीघ्रतापूर्वक मुझे यह अमृत पदार्थ खाने-पीने के लिए देवो।'

'मैया' यह शब्द सुनकर विद्रुमा गद्गद् हो गयी। एक अकिंचन दरिद्र स्त्री को भगवान विनायक 'मैया' कह रहे हैं और फिर अपनी भूख मिटाने के लिए शीघ्रता से भोजन मांग रहे हैं। प्रेम विभोर हुई विद्रुमा भी बड़े संकोच व असमञ्जस में पड़ गयी। भगवान विनायक को भोग लगाने के लिए क्या दिया जाए। इतने में ही भगवान विनायक ने पुनः कहा—'मैया, जो कुछ भी मेरे लिए बनाया है अथवा तुम्हारे पास घर में है, वही मुझे तुरन्त दे दो।' गणपति के साथ आए हुए बालक उस दरिद्र-दम्पत्ति की हँसी कर रहे थे। और बेचारी विद्रुमा संकोचवश सुकड़ी जा रही थी और अत्यन्त सोच-संकोच से विनायक के सामने वह चावलों का पतला माँड ही बार-बार परस रही थी। भगवान् गणपति बड़े प्रेम व शीघ्रता से वह हाथों व पत्तों पर परसा हुआ नैवेद्य (भोग) चावलों का माँड बार-

बार चाट रहे थे। जब वह पतला माँड पत्तों पर से बहता हुग्रा रुक नहीं सका तब भगवान् गणपति दशभुजाधारी होकर दशों हाथों से माँड चाटने लगे।

तज्जलं चलितं दिक्षु वालो रोद्धुं न चासकत्।
ततोऽभवद्दशभुजो बुभुजे चौदनं च तैः ।।

(गणेश पुराण २।२३।४१-४२)

जब भगवान् गणपति ने देखा कि सब माँड समाप्त हो गया, तब वे तृप्त हो गए ग्रौर कहा—'माँ, मैंने ग्राज तक ऐसा उत्तम गंधयुक्त एवं सब प्रकार के रसों से भरा हुग्रा सुस्वादु नैवेद्य (भोजन) कभी नहीं किया।'

भगवान् विनायक की इस प्रकार की दया को देखकर सभी देखने वाले जो ब्राह्मण-दम्पत्ति की दरिद्रता की हँसी कर रहे थे, ग्रत्यन्त ग्राश्चर्य में पड़ गए तथा मन-ही-मन में ग्रपनी इस प्रकार की नीची-वृत्ति के लिए बहुत पश्चाताप करने लगे।

ब्राह्मण-दम्पत्ति की प्रसन्नता का पार न था। वे प्रेम में डूबे हुए विनायक के चरणों में लोटने लगे। बड़ी कठिनाई से उन्होंने भगवान् गणेशजी को ग्राचमन ग्रौर हस्तप्रक्षालन कराया तथा मुख-शुद्धि हेतु ताम्बूलादि ग्रर्पण किए।

शुक्ल-दम्पत्ति ने ग्रत्यन्त नम्रतापूर्वक भगवान् विनायक से याचना की, हे नाथ ! हे कृपावत्सल !! हे ग्रनुग्रह मूर्ति !!! ग्राप हमारे को ग्रपने चरण कमलों की भक्ति प्रदान करने की दया करें। भगवान् विनायक यह सुनकर मुस्कराते हुए दो भुजा वाले हो गए ग्रौर 'एवमस्तु' कहते हुए घर से बाहर चलने लगे। शुक्ल शर्मा दम्पत्ति उन्हें पहुँचाने के लिए उनके साथ उनके पीछे-पीछे चलने लगे।

श्री विनायक को बहुत दूर तक पहुँचाकर जब वे ग्रपने घर वापस लौटे तो इन्द्र भवन से भी श्रेष्ठ राजसी महत्ता ग्रपार वैभव से भरपूर सम्पत्ति ग्रौर सुन्दर वस्त्रों सजे हुए सेवकों की लंबी लाइन ग्रादि ग्रनेक राजसी वस्तुग्रों के भरे हुए भण्डारों का ठाठ देख कर ब्राह्मण दंपत्ति ग्राश्चर्य में पड़ गए। उनकी पुरातन जीर्ण कुटिया का वहाँ कहीं नाम निशान ही नहीं दिखाई दे रहा था। सेवक गणों ने हाथ जोड़कर दंपत्ति से ग्रभिवादन कर ग्राग्रहपूर्वक निवेदन किया, 'महाराज ! ग्राप ग्रन्दर पधारें। प्रभो ! यह ग्रापका ही प्रासाद (भवन) है।'

सहसा सर्वथा ग्रकल्पित, ग्रकथनीय, दुर्लभ संपत्ति प्राप्त कर ब्राह्मण-दंपत्ति चकित हो रहे थे। ब्राह्मण का वह भवन विशाल एवं समस्त खाद्य, वस्त्रालंकार ग्राभूषणों एवं सभी सुविधाग्रों से परिपूर्ण था।

विद्रुमा ने चकित होकर ग्रपने पति से पूछा—'मेरी वह क्षुद्र कुटिया सहसा इन्द्र-भवन की भाँति कैसे हो गयी ? शुक्ल शर्मा ने विनायक का स्मरण करते हुए कहा—

सर्वं जानीहि सुभगे न समक्षं महाविभूः।
ददाति तु परोक्षेऽसावल्प मात्रेण तोषयन् ।।
स्वयंदत्तां बहुतरमल्पमेव हि मन्यते।
भक्त्योपपादितं स्वल्पं मन्यते बहुलं विभुः ।।

तस्माद् भयेन कामेन स्नेहेन रिपुभावतः ।
स्मर्तव्यो नमनीयश्च स्तव्यः पूज्यो हिताय च ।।
(गणेश पुराण २।५५।२७-२९)

'भाग्यवती ! निश्चय ही यह भक्त वत्सल करुणामूर्ति विनायक का कृपा प्रसाद है। उन सर्वज्ञ प्रभु ने हमें सामने तो कुछ नहीं दिया, किन्तु तुम्हारे भात के माँड से ही संतुष्ट होकर परोक्ष रूप से सब कुछ दे दिया। वे दयामय प्रभु अपने भक्त की दी हुई स्वल्प वस्तु को भी अत्यधिक मानकर उसे महान् वस्तु प्रदान कर देते हैं, और अपनी दी हुई महान् वस्तु को भी स्वल्प ही समझते हैं। इस कारण कल्याण प्राप्त करने वाले इच्छुकों को चाहिए कि भय, स्नेह, काम अथवा शत्रुभाव से भी उनका सदा स्मरण करता रहे। भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करे, स्तवन करे, और उनके कल्याणमय चरण कमलों में बारंबार प्रणाम निवेदन करता रहे।'
(साभार कल्याण से संगृहीत)
(ह. कृ. दु.)

卐

सोपान १६

भगवान् वेदव्यास पर गणपति का अनुग्रह

पञ्चम वेद, पुण्यमय ग्रन्थ महाभारत के प्रकट होने से पूर्व ही सत्यवती नन्दन भगवान् वेदव्यास चिन्ता किया करते थे। किस प्रकार इस महान् ग्रन्थ का अध्ययन अपने शिष्यों को कराया जाय? इतने बड़े ग्रन्थ का लेखन भी कोई साधारण कार्य नहीं था और बिना लिखे इसका प्रचार-प्रसार भी सम्भव नहीं दिखाई देता था। भगवान् वेदव्यास को चिन्तित देखकर लोक पितामह ब्रह्मा के मन में करुणा का संचार हुआ और वे स्वयं व्यास देव के समक्ष उपस्थित हुए।

चिन्ता के समय लोक स्रष्टा चतुरानन का आगमन महर्षि वेदव्यास को इस भाँति का सुख प्रदान करने वाला प्रतीत हुआ जैसे प्यास से संतप्त किसी व्यक्ति को स्वच्छ ठंडे जल से परिपूर्ण सरोवर दिखाई दिया हो। उन्होने पितामह ब्रह्मा के चरणों में श्रद्धा पूर्वक नमन किया और उन्हें उच्चासन पर बैठाया और स्वयं उनके चरणों के पास बैठ गये। महर्षि ने अत्यन्त विनम्रतापूर्वक निवेदन किया—'भगवन् ! मैंने सम्पूर्ण लोकों से वन्दित एक महान् ग्रन्थ की रचना की है। इस ग्रन्थ में सम्पूर्ण वेदों का गुह्यतम रहस्य तथा शास्त्र और उपनिषदों का सार संग्रह किया है। जितने भी लोकोपयोगी विचार हो सकते हैं, उन सब ही का मैंने इस ग्रन्थ में निरूपण करने का प्रयत्न किया है, परन्तु इस ग्रन्थ को कोई लिख सके, ऐसा पृथ्वी पर कोई नहीं है।'

महर्षि की चिन्ता निराधार नहीं थी। वास्तव में पृथ्वी पर ऐसी प्रतिभा किसी की न थी, जो यह कार्य कर सकता हो। वेदगर्भ ब्रह्माजी भी कुछ समय के लिये विचारमग्न हो गये और फिर उन्होंने कहा—

काव्यस्य लेखनार्थाय गणेश: स्मर्यतां मुने।

(महाभारत आदिपर्व १।७४)

'मुनिवर! अपने इस काव्य को लिखवाने के लिये आप गणेशजी का स्मरण करें। यह कहकर चतुरानन अपने लोक को चले गये।'

भगवान् वेदव्यास की प्रसन्नता की सीमा न रही। उन्हें कार्य साधन होने का मार्ग मिल गया था। उन्होंने आर्त होकर अनुग्रह मूर्ति भगवान् गणेशजी का स्मरण किया। सच्चा आवाहन (बुलावा) प्रभु को बलात् आकर्षित कर लेता है, अन्तर्यामी करुणावरुणालय भगवान् गणेश प्रकट हो गये।

महर्षि वेदव्यास ने श्रद्धापूर्वक गिरिजानन्दन भगवान् श्री महागणपति का अभिनन्दन किया और उन्हें उच्चासन पर विराजमान किया। पाद्य-अर्घ्यादि द्वारा भली भाँति से उनका पूजन किया और बडी विनम्रता से उन्हें निवेदन किया—"करुणामूर्ति गणनायक! मैंने मन-ही मन 'महाभारत' नामक महाकाव्य की रचना की है, परन्तु इसको लिखने में असमर्थ हूँ। और बिना लिखे इसका उपयोग ही क्या हो सकता है? अत: आप कृपापूर्वक लोकोपकारार्थ इस काव्य को लिख देवें।"

परात्पर भगवान् गणेशजी के लिये क्या असम्भव है? भगवान् गणपति ने महर्षि से कहा—'व्यासदेव! मैं इसे लिख तो सकता हूँ, परन्तु लिखते समय मेरी लेखनी रुकनी नहीं चाहिये।'

व्यासदेव ने कहा—'प्रभु! ऐसा ही होगा, परन्तु एक शर्त मेरी भी आपको माननी होगी कि आप बिना समझे कुछ भी नहीं लिखेंगे।'

दोनों को एक दूसरे की शर्तें स्वीकार हो गई। लेखन कार्य आरम्भ हुआ और पार्वतीनन्दन अविरत लिखते गये। व्यासदेव की प्रतिभा भी कम न थी, वे कौतुहलवश बीच-बीच में कुछ ऐसे (कूट) श्लोक रच डालते थे, जिसको समझने में गणनायक को कुछ क्षण लग जाते और उन क्षणों में व्यासदेव कई नये श्लोकों की रचना कर लेते थे।

भगवान् गणेशजी की कृपा से ही विश्व को 'महाभारत' जैसा अनुपम लोक कल्याणकारी ग्रन्थ मिल सका। यह ग्रन्थ-रत्न अज्ञानान्धकार में भटकते हुए लोगों को ज्ञान रूप प्रकाश द्वारा सही मार्ग दिखाने वाला है। इसमें पद-पद पर सनातन पुरुष भगवान् श्री कृष्ण की कीर्ति का वर्णन किया गया है।

जो श्रद्धा पूर्वक इस महान् ग्रन्थ का अध्ययन करता है, उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है। श्रीमद्भगवद्गीता भी इसी ग्रन्थ का एक अङ्ग है। (साभार कल्याण से संगृहीत)(ह. कृ. दु.)

卐

सोपान १७

बल्लाल भक्त पर गणेशजी का अनुग्रह

कल्लाणमल्ल नामक एक धर्मपरायण धनाढ्य सेठ था। उसके एक पुत्र हुआ, जिसका जातकर्म एवं नामकरण-संस्कार वेदज्ञ ब्राह्मणों द्वारा विधिपूर्वक सम्पन्न कराया गया और उस बालक का नाम बल्लाल रखा गया। उस अवसर पर कल्लाणमल्ल ने ब्राह्मणों एवं दीनों को बहुत साधन, गौएँ दान में दी। बल्लाल बालक साधारण बालकों की तरह नहीं था, वह अत्यन्त सात्विक विचारों से युक्त एवं सद्बुद्धि सम्पन्न था। बचपन से ही माता-पिता एवं गुरु के प्रति श्रद्धा भक्ति भरी हुई थी। वह भगवान् गणेशजी का परमभक्त था। वह अपने साथी मित्र बालकों को भगवान् के गणेशजी की विविध मनोहारी लीला-कथाएँ सुनाया करता था। इससे उन साथी बालकों के मन में भी भक्ति-भावना का संचार होने लगा था। बल्लाल जिस प्रकार दिनों-दिन बड़ा होता जा रहा था, उसी प्रकार से उसके मन में गणेशजी की भक्ति भी दृढ़ होती जा रही थी। वह जहाँ-कहीं भी भगवान गणेशजी का मन्दिर देखता, वहाँ ही भक्ति भाव से जाकर भगवान गणेशजी के सामने नमस्कार-प्रणाम करता और भगवान गणेशजी का स्तवन दर्शन अवश्य करता था।

एक समय बल्लाल बालक ने अपने साथी मित्र बालकों की सहायता से लकड़ी और पत्तों द्वार विनायक का एक मन्दिर निर्माण कर लिया और सबने मिलकर भगवान् विनायक की पूजा, भजन, कीर्तन, आरम्भ कर दिया। कुछ समय में उन सब बालकों का यह एक प्रकार से नित्य का ही क्रम बन गया और वे प्रतिदिन वहाँ एक साथ इकट्ठे होकर, पूजन, भजन-कीर्तन करने लगे। प्रतिदिन भगवान् गणेशजी को पत्र, पुष्प, दूर्वा आदि अर्पण करते थे। सब बालकों में भक्ति-भावना दृढ़ होने लगी। सभी बालक इस कार्यक्रम में लगे रहने के कारण अपने-अपने घरों में देर से पहुँचने लगे। बालकों का समय पर घर नहीं पहुँचना उनके माता-पिताओं को अखरने लगा। उन्होंने जाँच आरम्भ की तो उन्हें इसका कारण ज्ञात हो गया और वे समय पर बालकों के नहीं पहुँचने से क्रोधित हो, ये सब दोष बालक बल्लाल पर ही आरोपित करने लगे।

एक दिन उन सब बालकों के अभिभावक मिलकर कल्लाणमल्ल सेठ के पास आए और कहा 'सेठजी! आपका बालक बल्लाल तो हमारा घर-बार नष्ट करने में ही लग रहा है। हमारे सबके बालकों को बिगाड़ रहा है, उनको बहुत देर तक रोके रखता है और न जाने वह उनसे क्या-क्या कराता रहता है। उस समय वह बल्लाल बालक गाँव के बाहर जंगल में अपने निर्माण किए हुए मन्दिर में ही सब बालकों के साथ भगवान् गणपति की पूजा कीर्तन में ही लग रहा था। गाँव के

बालकों के अभिभावकों की कटु उक्तियाँ सुनकर कल्लाणमल्ल सहन नहीं कर सके। वे क्रोधित होकर घर से निकल कर वन में बालकों के पास पहुँच गए। उनके वहाँ पहुँचने पर भी वह बालक बल्लाल अपने साथी बालकों के साथ भगवान् गणपति की पूजा भजन में ही लगे रहे। कल्लाणमल्ल यह सब देखकर क्रोधाग्नि में उबल पड़े और कल्लाणमल्ल ने बालकों द्वारा स्थापित मूर्ति और पूजा के सभी सामान उठाकर फेंक दिए और डंडा लेकर वह निर्दोष बालक बल्लाल पर बरस पड़े। क्रोध में भरकर बल्लाल को बहुत पीटा और उसको एक रस्सी द्वारा एक पेड़ से कसकर बाँध दिया और कहा—'आज मैं तुम्हारे विनायक को देखूँगा, वह तुम्हें कैसे इस बंधन से मुक्त करता है? आज से तुम मेरे घर में पैर भी मत रखना, मुझे तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं है।'

असहाय बल्लाल बालक अर्धमूर्च्छित अवस्था में पड़ा हुआ यह सब सुन रहा था। मार के दर्द मे उसकी कराहने की शक्ति भी नहीं थी। किन्तु ऐसी स्थिति में वह मन-ही-मन भगवान् विनायक का ही स्मरण कर रहा था। बल्लाल को ऐसी ही अवस्था में छोड़कर कल्लाणमल्ल अपने घर लौट गया। कुछ चेतना होने पर बल्लाल के शरीर में अत्यधिक कष्ट प्रतीत होने लगा। अपने इष्ट देव की मूर्ति तथा पूजा के उपकरणों को बाहर इधर-उधर पड़े हुए देख कर उसको अत्यधिक मानसिक दुःख हुआ। अपने शरीर को वृक्ष से बंधे हुए हाल (परिस्थिति) में ही अपने आराध्य दयासिन्धु भगवान् गणेशजी से प्रार्थना करने लगा – 'प्रभो! करुणा-सागर! क्या आपको मेरी यही स्थिति (हालत) अच्छी लगती है? प्रभो! आपकी प्रतिमा की यह दुर्दशा मुझ से देखी नहीं जा रही है। क्या आप मुझ अकिंचन पर अब भी दया नहीं करेंगे? आप तो सभी विघ्नों के विनाशक हैं।'

बल्लाल की इस प्रकार प्रार्थना को सुनकर तत्काल ही दयानिधान भगवान् गणेश एक ब्राह्मण के स्वरूप में उसके सम्मुख प्रकट हो गए। उनके प्रकट होते ही बल्लाल बन्धन से छूट गया और उस करुणामूर्ति की दृष्टिमात्र से बल्लाल की सारी पीड़ा दूर हो गयी। शरीर पहले की भाँति स्वस्थ एवं प्रसन्न हो गया। ब्राह्मण देवता के तेज प्रभावयुक्त मुखमण्डल को देखकर बल्लाल को समझ में आते हुए देर नहीं लगी कि यह देवाधिदेव करुणासिन्धु भगवान् गणपति ही हैं। वह शीघ्र ही उनके श्रीचरणों में दण्ड की भाँति गिर पड़ा और गद्गद् कण्ठ से कहने लगा— 'प्रभो! आप ही मेरे सर्वस्व हैं। करुणामय! अब आप मुझे अपनी भक्ति प्रदान करें! यही क्षेत्र मेरा निवास स्थान होवे और आप भी निरन्तर यहाँ ही रहें।' अनुग्रह मूर्ति भगवान् गणेशजी ने कहा— वत्स! तुम्हारी भक्ति मुझ में नित्य प्रति बढ़ती रहेगी। यहाँ बल्लाल-विनायक के नाम से मेरा प्रसिद्ध मन्दिर होगा, मैं यहाँ नित्य-निवास करूँगा।' ऐसा कहकर भगवान् विनायक अन्तर्धान हो गए।

भगवान् गणपति का अनुग्रह प्राप्त कर बल्लाल निहाल हो गया। उसने उसी स्थान पर भगवान् विनायक का अत्यन्त सुन्दर मन्दिर निर्माण कराया और वहाँ ही रहते हुए श्रद्धा-भक्तिपूर्वक षोडशोपचार पूजन स्तवनादि करने लगा। वहाँ नाम जप, कथा, कीर्तनादि के विविध आयोजन होने लगे।

बल्लाल के पिता कल्लाणमल्ल सेठ अपने दुष्कर्म के प्रभाव से मूक, अन्ध और बधिर हो गए। निस्संदेह यह भक्त के प्रति किए गए दुर्व्यवहार का ही फल था। उनकी पतिव्रता इन्दुमती अपने पति की दुर्दशा देखकर बड़ी व्याकुल हुई।

इन्दुमती एवं कुछ नागरिक पश्चाताप करते हुए बल्लाल को खोजते-खोजते उसके पास वन में पहुँच गए। भक्ति-भाव में लगे हुए अपने पुत्र बल्लाल को देख कर इन्दुमती अत्यन्त प्रसन्न हुई। उसने कहा – 'बेटा! तुम्हारे पिताजी अत्यन्त रुग्ण अवस्था में हैं। वे मूक, अन्ध और बधिर हो गए हैं। तुम घर लौट चलो। अपने पिता को क्षमा कर दो।'

बल्लाल ने बड़ी नम्रता पूर्वक कहा—'माँ! मुझ पर भगवान् गणपति की अद्भुत कृपा हुई है। अब तो मेरे माता-पिता, भाई बन्धु एक मात्र वे करुणा सिन्धु ही हैं। उनकी सेवा छोड़कर मेरी अन्यत्र कहीं भी जाने की रुचि नहीं है। आप मुझे क्षमा करें तथा भगवान् विनायक में दृढ़ भक्ति होने का आशीर्वाद प्रदान करें। पिताजी की सेवा में निरन्तर लगी रहें और साथ-साथ में आप भगवान् गणेशजी का भी भजन स्मरण करती रहें। वे बड़े कृपालु हैं, अनुग्रह मूर्ति हैं।

माता इन्दुमती के बहुत आग्रह करने पर भी भक्त बल्लाल भगवान् गणपति को छोड़कर घर पर नहीं गए। उसी स्थान पर रहकर उन्होंने भगवान् गणपति की ही सेवा-पूजा, आराधना करते हुए अपना शेष जीवन व्यतीत किया।

(ह. कृ. दुबारी)

(यह कथा गणेश पुराण उपा. खण्ड, अध्याय २२ के आधार पर है।)

(साभार कल्याण से संग्रहित)

नोट—यह स्थान भारत के इक्कीस प्रधान गणपति क्षेत्रों की गणना में क्रम संख्या में माना जाता है और महाराष्ट्र प्रान्त के कुलाबा जिले में अब पल्ली (नगर) नाम से प्रसिद्ध है। कुलाबा से यहाँ मोटर-बसें आती-जाती हैं। गणेश पुराण उपा. खं अध्याय २२ के आधार पर यह कथा लिखी गई है। उसी अध्याय में इस स्थान के विषय में लिखा है कि यह स्थान सिन्धु देश के पल्ली नगर में है। किन्तु महाभारत में लिखा है—

नागा सिद्धाश्च मुनयो देवदेव प्रजापतिः।
विष्णुः सहस्रशीर्षश्चदेवो चिन्त्यः समागमत्॥

(महाभारत शान्ति पर्व २००।१२)

यह स्थान समुद्र तटवर्ती होने से महाराष्ट्र राज्य ही यहाँ सिन्धु देश के नाम से उल्लेख हुआ है। इसी प्रकार से अनेक टीकाकारों का भी मत है। एक दूसरी सिन्धु नाम की नदी भी इसके पास ही है।

卐

सोपान १८

भगवान् गणेशजी की पूजा, पाठ, मन्त्र-जप करने कराने वालों को ध्यान देने व सावधानी रखने योग्य बातें

भगवन् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

नान्तोऽस्ति मम दिव्याना विभूतीनां परंतप।
एष तूद्देशत: प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ।। (भगवद्गीता १०।४०)

'परंतप ! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है, यह तो मैंने अपनी विभूतियों का विस्तार तेरे लिये एक देश में संक्षेप में बतलाया है।'

ब्रह्मस्वरूप भगवान् के अनन्त नाम तथा स्वरूप हैं। इसलिये उसके किसी भी नाम व स्वरूप की पूजा-भक्ति की जावे, वह सब ब्रह्मस्वरूप भगवान की ही पूजा-भक्ति है। उन सब के लिये प्राय: भगवामें में श्रद्धा-विश्वास एकाग्रता होना परमावश्यक है और ये नियम व विधियां सब ही देवताओं के लिये होती हैं।

देवताओं के भी तीन प्रकार बतलाये गये हैं - सात्विक, राजस और तामस। इसी प्रकार से उपासक भी तीन प्रकार के ही होते हैं। भगवान् गणेशजी परम-सात्विक देवता हैं, इसलिये उनका उपासक भी परम सात्विक वृत्ति ही होना चाहिये। उपासक जिस देवता की उपासना करे, वैसी ही अपनी वृत्ति भी बना लेवे तब ही उपसना द्वारा कार्य सिद्धि प्राप्त होती है।

सर्वप्रथम उपासक का शरीर स्वस्थ व पवित्र हो, मन एकाग्र हो शुद्ध भावनायुक्त हो। पूजार्थी के वस्त्र शुद्ध, साफ व पवित्र हों। पूजन पात्र, आसन, माला गोमुखी आदि भी शुद्ध साफ पवित्र हों, फटे-पुराने, टूटे-फूटे, गंदे नहीं होने चाहिए।

देवताओं की पूजा में अर्पण, प्रयोग करने वाले सभी पदार्थ जहाँ तक हो सकें नवीन, ताजा, समय ऋतु अनुसार ही होने चाहिये। स्वर्ण, रजत, रत्नादि द्वारा निर्मित आभूषण व अन्य धातु निर्मित सिंहासन, छत्र, चंवर पूजन-पात्रादि जो मार्जन (मांजने) से शुद्ध, पवित्र, चमत्कृत हो सकते हैं, उनको शुद्ध पवित्र चमत्कृत करके ही काम में प्रयोग करना चाहिये। इन वस्तु पदार्थों के अतिरिक्त कोई वस्तु-पदार्थ सड़ा, गला, पुराना, विकृत अथवा ऐसा छोटा-बड़ा हो, जो दूसरों के देखने में ठीक न जचने योग्य हो, जिसका प्रचलन न हो, अच्छे-भले उत्तम मनुष्यों के उपयुक्त न हो, पूजार्थी (जो भगवान् के अर्पण करने वाला हो) जिस वस्तु-पदार्थ को अपने स्वयं के प्रयोग करने योग्य न समझता हो, बेकार समझता हो, ऐसे कोई भी पदार्थ, द्रव्य, वस्तु, वस्त्र, आभूषण, बर्तन, नैवेद्य, पत्र, पुष्प, फल, इत्र, अपने शृङ्गार में प्रयोग किए हुए पदार्थ-वस्तु-सामग्री कभी भी देव-पूजा के काम में नहीं लेवें तथा देवता के भेंट (अर्पण) न करें।

जो वस्तु पदार्थ अपवित्र स्थान में पैदा (उत्पन्न) हुए हों, किसी अपवित्र वस्तु से स्पर्श हो गए हों, किसी, अन्य दूसरे के बाँटे (हिस्से) की हों, किसी से जबरन या छल-छिद्र, चोरी-चालाकी के द्वारा प्राप्त किए हुए हों, ऐसी कोई भी वस्तु-पदार्थ देवताओं को भेंट (अर्पण) नहीं करना चाहिए।

देवी-देवताओं के अर्पण (भेंट) करने वाले पदार्थ (वस्तु) शुद्ध, पवित्र, अपने शुद्ध परिश्रम की कमाई के द्रव्य (पैसे) से खरीदे हुए, लाए हुए हों, अपने हक, बाँटे (हिस्से) के हों, अपने निकटस्थ परिजन माता-पिता, गुरु, पति, अफसर, मालिक, सास-ससुर, मित्र, भाई, बहिन एवं इन के ही समान अन्य किसी से प्रेम प्यार पूर्वक प्राप्त किए हुए हों। पुत्र-वधू, शिष्य, स्त्री (धर्मपत्नी) द्वारा भेंट में प्राप्त किए हुए हों, ऐसे पदार्थ-वस्तु देवी-देवताओं के भेंट (अर्पण) करने व दान, धर्म-पुण्य पवित्र कार्यों में प्रयोग करने योग्य हैं।

भगवान गणेशजी के उपासकों को सर्वदा मन, कर्म, वचन से शुद्ध पवित्र रहना चाहिए। खान-पान, रहन सहन में सर्वदा राजस, तामस पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। सब ही प्राणियों पर दया, क्षमा रखना चाहिए। किसी भी प्रकार से किसी भी प्राणी को कष्ट-दुःख पहुँचे, ऐसे कोई भी कार्य नहीं करने चाहिए।

पूजार्थी, उपासक को स्वच्छ और शुद्ध अर्थात् शुचि और पवित्र जो शास्त्र सम्मत है, वैसा ही परिधान धारण करके संध्या-पूजन, पाठ, जपादि करने चाहिए अर्थात् कोट, पेण्ट, पजामा, मोजे, चप्पल पहने हुए पूजा-पाठ नहीं करना चाहिये।

पूजार्थी, उपासकों को प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में उठकर प्रथम गणेशजी आदि इष्ट देवों का स्मरण करना चाहिए। तदनन्तर शौच, दन्त धावन आदि से निवृत्त होकर पवित्र नदी, जलाशय, कुआ आदि के जल से अथवा यह नहीं हो सके तो अपने घर में ही पवित्र जल से स्नान करके शुद्ध साफ धुले हुए दो वस्त्र धारण करने चाहिए। एक धोती, दूसरा वस्त्र ओढने के रूप में अपने शरीर पर बिना सिलाई किया हुआ कंधों पर धारण करना चाहिए। तत्पश्चात् उत्तम पवित्र ऊन, दर्भ (डाब, एक प्रकार की घास होती है।) इसके आसन पर पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख बैठना चाहिए और पूजा में काम आने वाली सभी सामग्री पदार्थों तथा अन्य उपकरणों को इस प्रकार से रखें।

१ स्नानीय जल—श्री भगवान् के दक्षिण की ओर रखें।

२ स्नान-पात्र और आचमन-पात्र उसके पास ही रखें।

३ शङ्ख अपने सामने भगवान की ओर मुख करके उसको शङ्ख के सिंहासन पर रखें।

४ घण्टा, उसके समीप ही अपने बाएं पार्श्व में रखें।

५ धूप और नैवेद्य (मिष्ठान्न) अपने बाएं पार्श्व में रखें।

६ गंध-पुष्प अक्षतादि के पात्र अपने दाहिने पार्श्व में रखें।

७ घृत, दीपक, पास में ही दाहिनी ओर किन्तु तेल का दीपक होवे तो उसे बायीं ओर कुछ अक्षत रख कर उसके ऊपर ही स्थापित करना चाहिए।

८ पूजा की अन्य सामग्री (द्रव्य) अपनी सुविधानुसार पास में ही रख लेवें ।
९ बार-बार में हस्त प्रक्षालन करना होता है, वह पात्र अपने पृष्ठ भाग में रखना चाहिए ।

पूजा आरम्भ करने से पूर्व एक बार पूजा सामग्री की सूची के अनुसार सबही पूजा सामग्री को मिला कर देख लेना चाहिए। सब ही पूजा सामग्री शुद्ध, साफ, पवित्र, नवीन, उत्तम होना चाहिए । सड़ी, गली, टूटी-फूटी, गंदी नहीं होना चाहिए । भगवान् गणेशजी की पूजा में जपा कुसुम पुष्प, विल्वपत्र, सफेद मदार (आक) का पुष्प, लाल गुलाब, लाल कमल, लाल कनीर, श्वेत चम्पा, स्वर्ण चम्पा, मालती, मल्लिका, अशोक, तिलक, पलास पुष्प, दूर्वादल तथा शमीपत्र अर्पण करना चाहिए । गणेशजी को तुलसी पत्र व तुलसी मञ्जरी नहीं चढ़ाना चाहिए ।

गणेशजी की तीन प्रतिमा (मूर्ति) एक साथ एक स्थान पर नहीं पूजना चाहिए । पूजा में पत्र, पुष्प, फल जो भी चढ़ावें, उनका मुख नीचे या पूजा करने वाले के सामने रखकर नहीं चढ़ावें । पूजा में चढ़ाते समय पत्र, पुष्प, फल का मुख अर्थात् जिस नाका से वह पेड़ (वृक्ष) पर लगा हुआ होता है उसकी ओर रखकर चढ़ाना चाहिए ।

गणेशजी की पूजा में सिन्दूर, शमीपत्र (खेजड़ा पत्र), विल्व पत्र, अशोक पत्र, मदार (आक) के पुष्प, जम्बू (जामुन) के फल, कैथ का फल, विल्व फल, और चूरमा के लड्डू, मोतीचूर के लड्डू, अन्य प्रकार के लड्डू मिष्टान्न नैवेद्य के रूप में तथा उत्तम शुद्ध गौ का घृत में उत्तम प्रकार का गुड़ मिलाकर अवश्य चढ़ाना चाहिए । गणेशजी की आरती कितनी बार कैसे करें, ये सब प्रकार आगे इसी अध्याय में लिख रहे हैं, उसे देख लेवें । आरती करने के पश्चात् गणेशजी की तीन परिक्रमा करना चाहिए ।

जो मनुष्य भली भांति से रत्न, स्वर्ण, रजत (चाँदी), द्रव्य (रकम), वस्त्राभूषणों से भरा-पूरा रहते हुए भी कृपणता (कंजूसी) करके देवी-देवताओं की पूजा आराधना में बहुत ही कम खर्च करता है, ऐसे काम्यकर्म पूजा अनुष्ठान द्वारा अभीष्ट कार्य सिद्ध नहीं होते हैं । उपर्युक्त कार्य वानुष्ठान कार्य सप्रेम व उदारता पूर्वक प्रसन्न मन द्वारा ही करने से सफलता एवं सिद्धियां प्राप्त होती हैं ।

अपने अभीष्ट कामनाओं की सिद्धि प्राप्त करने हेतु किसी अन्य महानुभाव सज्जन, योग्य विद्वान्, महात्मा द्वारा पूजा, अर्चना, स्तवन कराना भी इस समय में बहुत ही सन्देहास्पद हो गया है । कलियुग समय के लिए शास्त्रों में लिखा मिलता है-

व्याजैर्धर्मं: चरिष्यन्ति धर्मवैतंसिकानरा: ।
सत्यं सक्षप्त्येते लोके नरै: पण्डितमानिभि: ।।

(महाभारत वनपर्व अ. १९०)

'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र सभी जातियों के लोग कपटपूर्वक धर्म का आचरण करेंगे और धर्म का जाल बिछाकर दूसरे लोगों को ठगने लगेंगे । पण्डित कहलाने वाले लोग भी सत्य का परित्याग कर देंगे ।'

विश्वासपात्र, योग्य, सज्जन विद्वान् पण्डित अपना शारीरिक पूर्ण परिश्रम करके विधिवत्, यजमान की अनुपस्थिति में भी पूर्ण रूप से पूजा, अर्चना,

स्तवनादि कर कामना सिद्धि प्राप्त कराने वाले, इस समय विरले ही मिल पाते हैं। कार्य सिद्धि चाहने वाले के मन में जैसी उग्रभावना उत्पन्न होती है, वैसी ही भावना जब तक यजमान का प्रतिनिधित्व करने वाले पुरोहित, गुरु तथा पण्डित के मन में न पैदा होवे, तब तक लाभ प्रदान करने वाली फल सिद्धि कैसे प्राप्त हो सकती है? यदि किसी को कोई ऐसा करने वाला मिलता है तो फल सिद्धि लाभ भी अवश्य प्राप्त होती है। इसी प्रकार की एक बात यजमान के भी ध्यान देने की है। आजकल मँहगाई जिस प्रकार से बढ़ गई है, उसी प्रकार से विद्वान् पण्डित को भेंट (दक्षिणा) भी मिलना चाहिए। कई मौकों (स्थानों) पर देखने में आता है कि जो आज से एक सौ वर्ष पूर्व बहुत सस्ताई का समय था, तब जन्म कुण्डली की बनाई की भेंट, सवा रुपया, देवी-देवताओं की भेंट सवा रुपया दी जाती थी। वही आज भी दी जाती है। जब कि उस समय के रुपए का मूल्य आज से साधारणतः चालीस गुणा था। इसका प्रतिफल यह हो रहा है कि बहुत योग्य विद्वान् घरानों ने अपनी सन्तानों को यह विद्याएँ पढ़ाना ही छोड़ दिया है। जिससे योग्य विद्वानों का अभाव होता जा रहा है। कुछ योग्य विद्वान् तैयार होते भी हैं तो, गृहस्थीक पालन करने योग्य, आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं होने के कारण, यह पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड, हिन्दू धर्मावलम्बियों के संस्कार कराने का कार्य (पेशा) करना पसन्द नहीं करते। अन्य दूसरे कार्य पेशा) द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं। पुरोहित, विद्वान् को यथेष्ट दक्षिणा द्वारा सन्तुष्ट प्राप्त होने पर ही अनुष्ठान द्वारा अभीष्ट सिद्धि लाभ की उग्रभावना पूजा, अर्चना, स्तवनादि करने वाले के मन में उठेगी, उसी मनोमय भाव से पूजा, अर्चना स्तवन होगा। उसी भाव के अनुसार मनोकामना भी सिद्ध होगी। इसके अनेक प्रत्यक्ष प्रमाण भी देखने को मिलते हैं। किसी भी अभीष्ट कामना हेतु पूजा, अर्चना, स्तवनादि कराना हो तो वर्तमान समयानुसार स्वयं शारीरिक परिश्रम द्वारा या योग्य विद्वान् पण्डित जो पूजा के विधि-विधान को भली प्रकार से जानता हो, उत्तम सदाचारी हो, उसे दक्षिणा (भेंट) सन्तुष्टि योग्य प्रदान करते हुए, अपने साथ लेकर स्वय को ही करना चाहिए। और देवी-देवता के सामने पूर्णरूप से प्रेम-मनोमय व अतिभाव से पूजोपचार समर्पण करना चाहिये। तब ही अभीष्ट कार्य सिद्धि होने में सफलता अवश्य प्राप्त होने की आशा करना चाहिए।

इस पुस्तक में कई प्रकार की वृहत् पूजा लिखी गई हैं। यदि उन पूजा विधियों द्वारा कोई पूर्णरूप से इतनी बड़ी पूजा नहीं कर सके तो उन पूजा विधियों में से छोटी पूजा विधि निम्न प्रकार से समझकर प्रयोग कर लेवें।

षोडशोपचार (सोलह उपचार) पूजा विधि

किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने से पहले इसी पुस्तक में (पूजा पाठ जप करने वालों के लिए ध्यान देने योग्य बातें) पढ़ लेना आवश्यक है।

षोडशोपचार पूजा में निम्न लिखित सोलह उपचार प्रयोग किए जाते हैं। १ आसन, २ पाद्य, ३ अर्घ्य, ४ आचमन, ५ वस्त्र, ६ गंध, ७ चंदन, ८ अक्षत (चावल), ९ पुष्प, विल्वपत्र, दूर्वाङ्कुर, शमीपत्रादि, १० धूप (अगरबत्ती),

११ दीपक, १२ पुष्पमाला, १३ नैवेद्य (मिष्ठान्न) चूरमा, लड्डू, पेड़ा, ऋतुफल, १४ जल आचमन, १५ ताम्बूल, पूगीफल, लवांग-इलायची, १६ दक्षिणा। इन सब ही पूजोपचारों के मन्त्र श्लोकादि वही है, जो वृहत्पूजोपचारविधियों में लिखे हैं। उनमें से ही देखकर प्रयोग कर सकते हैं।

द्वादशोपचार (बारह उपचारों द्वारा) पूजा विधि

पूजा करने से पहले इसी पुस्तक को (पूजा, पाठ, जप करने वालों के लिए ध्यान देने योग्य बातें) अवश्य पढ़ लेना चाहिए।

द्वादशोपचार पूजा में निम्नलिखित बारह उपचार प्रयोग किए जाते हैं। १ आसन; २ पाद्य, ३ अर्घ्य, ४ आचमन, ५ वस्त्र, ६ चन्दन, ७ पुष्प, विल्वपत्र, दुर्वाङ्कुर, शमीपत्र, पुष्पमालादि, ८ धूप-आरती, ९ दीपक, १० नैवेद्य-ऋतुफलादि, ११ जल-आचमन, १२ भेंट-दक्षिणादि।

इन पूजोपचारों के मन्त्र श्लोक भावार्थ वही हैं। जो वृहत् पूजा विधियों में लिखे हैं। उनमें से ही देखकर ग्रहण कर सकते हैं।

पञ्चोपचार (पांच उपचारों) द्वारा पूजा विधि

किसी भी प्रकार से पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इसी पुस्तक में में लिखी पूजा पाठ करने वालों के लिए ध्यान देने योग्य बातें अवश्य पढ़ लेना चाहिए।

पञ्चोपचार पूजा में निम्नलिखित पाँच उपचार प्रयोग किए जाते हैं।

१ पाद्य, २ अर्घ्य, ३ आचमन, ४ पुष्प, विल्वपत्र, शमीपत्र, दुर्वाङ्कुर पुष्पमालादि, ५ नैवेद्य-दक्षिणा।

इन सब पूजोपचारों के मन्त्र श्लोक भावार्थ वही हैं, जो वृहत् पूजोपचार विधियों में लिखे हैं। उन विधियों में से ही देखकर ग्रहण किए जा सकते हैं।

भगवान् गणेशजी की आरती करते (उतारते) समय आरती को सर्वप्रथम भगवान के चरणों में चार बार, फिर नाभि देश में दो बार, फिर मुख मण्डल पर एक बार, फिर भगवान की प्रतिमा मूर्ति के समस्त अङ्गों की सात बार, सामने घुमाकर करना चाहिए। इसके पश्चात् फिर शङ्ख में जल डालकर, उससे भी इसी भाँति संख्याओं में घुमाकर करना चाहिए। तदनन्तर शख में जो जल है, उसके छींटे पूजार्थी व भक्तों पर लगाना चाहिए और प्रार्थनादि करके परिक्रमा, प्रणाम साष्टांग करना चाहिए। इसके पश्चात् प्रसाद बाँटें व स्वयं ग्रहण करें।

पूजा स्मरण करने से विघ्नविनाशक कार्य सिद्धि करने वाले भगवान् श्री गणेशजी को बारम्बार नमस्कार है।

卐

सोपान १६

ॐ गं गणपतये नम:

पुराणोक्त सर्वदेव-पूजा-विधि

[पूजा करने से पहले इस पुस्तक का सोपान (१८) अवश्य पढ़ लेवें]

आत्म संस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर ।
अरण्यामिव हव्यांशं मूर्त्तावावाहयाम्यहम् ।।१

(अमुक देवाय नम: आवाहनम्)

तवेयं महिमामूर्त्तिस्तस्यां त्वां सवर्गं प्रभो ।
भक्तिस्नेहसमाकृष्टदीपवत्स्थापयाम्यहम् ।।२ (इतिस्थापनम्)

देवदेव महाराज प्रियेश्वर प्रजापते ।
आसनं दिव्यमीशान दास्येऽहं परमेश्वर ।।३ (इत्यासनम्)

यद्भक्तिलेशसम्पर्कात्परमानन्दविग्रहम् ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ।।४ (इतिपाद्यम्)

तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ।।५ (इत्यर्घ्यम्)

वेदनामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने ।
आचामं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे ।।६ (इत्याचमनीयम्)

गंगासरस्वती—रेवापयोष्णीनर्मदाजलै: ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्ति कुरुष्व मे ।।७ (इतिस्नानम्)

पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करया युतम् ।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।८

(इति पञ्चामृतस्नानम्, पुन: शुद्धोदक स्नानं च ततोऽभिषेक:)

सर्वभुषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे ।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ।।६

(इति वस्त्रद्वयमाचमनं च)

नवभिस्तंतुभिर्युक्तं त्रिगुणदेवतामयम् ।
उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर ।।१०

(इति यज्ञोपवीतम् आचमनं च)

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।११ (इति गन्धम्)

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।१२ (इत्यक्षतान्)

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मया नीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ।।१३
इति पुष्पाणि)

(विष्णवे तुलसीं, शिवाय बिल्वपत्राणि गणपतये दुर्वांकुरान्. देव्यै रक्त करवीर पुष्पादीनि चार्पयेत्)

वनस्पतिरसोद्भूतो गंधाढ्यो गंधम् उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।१४ (इति धूपम्)

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
स बा ह्याभ्यंतरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।१५
(इति घृतदीपम्)

सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ।।१६
(इति पायसादिनैवेद्यम्)

नमस्ते देवदेवेश सर्वतृप्तिकरं परम् ।
अखंडानद सम्पूर्ण गृहाण जलमुत्तमम् ।।१७ (इत्याचमनम्)

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।१८
(इति ताम्बूलम्)

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।१९
इति ऋतुफलम्)

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शांति प्रयच्छ मे ।।२०
(इति हिरण्यादिदक्षिणाम्)

ततः कर्पूरेण आर्त्तिक्यम् ।।

कदलीगर्भसंभूतं कपूरं च सुदीपितम् ।
आरार्त्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदोभव ।।२१ (इत्यार्तिक्यम्)

प्रदक्षिणा

यानि कानि च पापानि ज्ञाता ज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे पदे ।।२२(इति प्रदक्षिणा)

नाना सुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पांजलिं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।।२३

(इति पुष्पाञ्जलिं च दत्वा साष्टांगं प्रणमेत्)

क्षमा-प्रार्थना

ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।।२४
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ।।२५

।। इति पुराणोक्त सर्वदेव पूजा प्रयोगः ।।

卐

सोपान २०

वेदोक्त गणपति पूजन विधि

[पूजा करने से पहले इस पुस्तक का सोपान (१८) अवश्य पढ़ लेवें]

शुद्ध-पवित्र-सुन्दर काष्ठ (काठ) के पट्टे पर जो टूटा-फूटा न हो, लाल रंग का कपड़ा बिछावें। उस पर चावलों से कमल पुष्प की आकृति बनायें। उसके ऊपर गणेश की मूर्ति (प्रतिमा) स्थापित करें। यदि मूर्ति न हो तो सुपारी पर मौली (लाल-पीले रंग का सूत) लपेट कर उसे गणेशजी की मूर्ति के रूप में स्थापित कर देवें और गणेशजी का ध्यान करें। तदनन्तर आवाहन मन्त्र से अक्षत-चावल चढ़ा देवें। इसके पश्चात् फिर ध्यान करें।

आवाहन-स्थापन—ॐ गणानां त्वा गणपति ँ
हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ
हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ
हवामहे वसो मम
आहमजानि गर्भधम् त्वमजासि गर्भधम् ।।
ॐसपरिवाराय महागणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि-स्थापयामि ।

प्रतिष्ठापन—ॐ मनो जूतिर्जु षतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं
यज्ञ ँ समिमं दधातु। विश्वेदेवासइह मादयन्तामो ३ प्रतिष्ठ।
अस्यै प्राण: प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा: क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपते सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

सिंहासन के रूप में निम्नलिखित मन्त्र द्वारा पुष्प समर्पण करना चाहिए।

आसन-अर्पण—ॐ पुरुष एवेद ँ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, आसनं समर्पयामि।

पाद्य—ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुष:।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, पादयो पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्य—ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुष: पादोऽस्येहाभवत् पुन:।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीय—ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुष:।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुर: ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, आचमनीयं समर्पयामि।

स्नान—ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत: सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, स्नानं समर्पयामि।

पञ्चामृत स्नान—ॐ पञ्चनद्य: सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतस:।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥
ॐसपरिवाराय महागणपतये नम:,पञ्चामृत स्नानं समर्पयामि।

पञ्चामृत से स्नान कराने के पश्चात् शुद्ध जल से स्नान करावें।

पय: स्नान—ॐ पय: पृथिव्याम्पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधा:।
पयस्वती: प्रदिश: सन्तु मह्यम् ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, पय: स्नानं समर्पयामि।

पुन: शुद्ध जल से स्नान करावें।

दधि-स्नान—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिन:।
सुरभि नो मुखा करत् प्राण आयू ँषि तारिषत् ॥
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नम:, दधि स्नानं समर्पयामि।

पुन: शुद्ध जल से स्नान करावें।

घृत-स्नान—ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम ।
अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, घृतस्नानं समर्पयामि ।

पुनः शुद्ध जल से स्नान करावें ।

मधु स्नान—ॐ मधु वाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः ।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ।
मधुनक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिव ँ रजः ।
मधुद्यौरस्तु नः पिता ।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ२ अस्तु सूर्यः ।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, मधुस्नानं समर्पयामि ।

पुनः शुद्ध जल से स्नान करावें ।

शर्करा-स्नान—ॐ अपा ँ रसमुद्वयस ँ सूर्ये सन्त ँ समाहितम् ।
अपा ँ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतो-
ऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः शर्करास्नान समर्पयामि ।

पुनः शुद्ध जल से स्नान करावें ।

शुद्धोदक-स्नान—ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन ।
महेरणाय चक्षुसे ।।
ॐसपरिवाराय महागणपतये नमः, शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

गङ्गा जल अथवा अन्य पवित्र नदी के जल से स्नान करावें ।

वस्त्र-समर्पण-ॐयुवा: सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः
तंधीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो ३ मनसा देवयन्तः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, वस्त्रं समर्पयामि ।

वस्त्र के न होने पर लाल-पीला रंग का सूत चढ़ावें ।

उपवस्त्र-समर्पण —ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः ।
वासो अग्नेविश्वरूप ँ संव्ययस्व विभावसो ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, उपवस्त्रं समर्पयामि ।

यज्ञोपवीत-समर्पण -ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।

गन्ध-समर्पण—ॐ त्वां गन्धर्वा अखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।
त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, गन्धं समर्पयामि ।

अक्षत-समर्पण—ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत ।

अस्तोषत स्वर्मानवोविप्रा नविष्ठयामती योजान्विन्द्रते हरि ।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, अक्षतानि समर्पयामि ।

पुष्पमाला-समर्पण—ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, पुष्पमालां समर्पयामि ।

शमीपत्र-समर्पण—ॐ य इन्द्राय वचोयुजा ततक्षुर्मनसा हरि ।
शमीभिर्यज्ञमाशत ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, शमीपत्राणि समर्पयामि ।

दूर्वाङ्कुर-समर्पण—ॐ काण्डात्काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषपरि ।
एवानो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च ।।
ॐसपरिवाराय महागणपतये नमः, दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि ।

सिन्दूर-समर्पण-ॐ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नमिभिः पिन्वमानः।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, सिन्दूरं समर्पयामि ।

नाना परिमल द्रव्य, अबीर-चूर्ण-समर्पण—
ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमाँ॒ सं परिपातु विश्वतः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, नाना परिमल-द्रव्याणि समर्पयामि ।

धूप-समर्पण—ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान्धूर्वतिंधूर्वयं वयं धूर्वामः ।
देवानामसि वह्नितमँ॒ सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, धूपमाघ्रापयामि ।

दीप-दर्शन—ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ।
अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।
ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, दीपं दर्शयामि ।

नैवेद्य—ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्षँ॒ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां २ अकल्पयन् ।।
ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा ।
ॐ समानाय स्वाहा ।। ॐ उदानाय स्वाहा ।
ॐ व्यानाय स्वाहा ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, नैवेद्यं मोदकमयं

ऋतुफलानि च समर्पयामि ।

ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, आचमनीयं मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं च समर्पयामि ।

करोद्वर्तन—ॐ अँ्शुना ते अँ्शुः पृच्यतां परुषा परः ।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि ।

ताम्बूल-पूगीफल—ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, मुखवासार्थ मेला पूगीफलादि सहितं ताम्बूलं समर्पयामि ।

अखण्ड ऋतुफल—ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वँ्हसः ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, अखण्ड ऋतुफलं नारिकेलं समर्पयामि ।

दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।
ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थं द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

निराजन (आरती)—ॐ ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्या मध्येकादश स्थ ।
अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ।।
(यजुर्वेद ७।१९)

ॐ आ रात्रि पार्थिवँ् रजः पितुरप्रायि धामभिः ।
दिवः सदाँ्सि बृहती वितिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः ।।
(यजुर्वेद ३४।३२)

ॐइदँ् हविः प्रजननं मे अस्तु दशवीरँ् सर्वगणँ् स्वस्तये।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि ।।
(यजुर्वेद ३४.३३)

ॐ अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त ।
(यजुर्वेद १९।४८)

ॐसपरिवाराय महागणपतये नमः, कर्पूर नीराजन समर्पयामि ।

पुष्पाञ्जलि—ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।
(यजुर्वेद ३१।१६)

ॐ गणानां त्वा गणपतिँ् हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिँ्

हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम ।
आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ।।

(यजुर्वेद २३।१९)

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।
ससस्त्यश्वक: सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ।।

(यजुर्वेद २३।१८)

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे ।
स मे कामान् काम कामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।।
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।
ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वराज्यं पारमेष्ठयं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्वभौम: सार्वायुषान्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुत: परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे ।
आवोक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवा: सभासद इति ।
ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावि भूमी जनयन् देव एकः ।।

(यजुर्वेद १७।१९)

ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, पुष्पाञ्जलि समर्पयामि ।

प्रदक्षिणा—ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिण: ।
तेषा ँ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ।।

(यजुर्वेद १६।६१)

ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

विशेषार्घ्य

परिक्रमा करने के पश्चात् जल, गंध, अक्षत (चावल), फल-फूल, दूर्वा अंकुर और दक्षिणा एक ताम्रपात्र (ताम्बे के पात्र, में रख कर दोनों घुटनों को पृथ्वी पर टेक कर, उस अर्घ्य पात्र को दोनों हाथों की अञ्जलि में लेकर उसको मस्तक से लगा कर निम्न प्रकार से श्लोकों का उच्चारण करते हुए श्री भगवान् गणपति को अर्घ्यरूप में समर्पण करें ।

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक ।
भक्तानाम भयं कर्ता त्राताभव भवार्णवात् ।।
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो ।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद ।।
अनेनसफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदा मम ।

'त्रिलोकी की रक्षा करने वाले गणाध्यक्ष ! रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए । आप भक्तों को अभय देने वाले और भव-सागर से उनकी रक्षा

करने वाले होइए। दया सागर ! आप दो माताओं के पुत्र होने से 'द्वैमातुर' कहलाते हैं।

प्रभो ! आप षण्मातुर स्कन्द के बड़े भाई हैं, वर प्रदान कीजिए। अभीष्ट वस्तुओं के दाता गणेश ! मेरी वाञ्छा पूर्ण कीजिए। इस फलयुक्त अर्घ्यदान से आप मेरे लिए सफल फलदाता होइये।'

ॐ सपरिवाराय महागणपतये नमः, विशेषार्घ्यं समर्पयामि।

प्रार्थना

नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः॥
विश्वरूप स्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायकः॥
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव॥
गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम॥

अनया पूजया ॐ सपरिवाराय महागणपतये प्रीयतां न मम।

'आप ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्ररूप और गजरूप हैं; इन सभी रूपों में आपको बार-बार नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्व का रूप आपका ही स्वरूप है, आप ब्रह्मचारी हैं, आपको नमस्कार है।

विनायक ! आप भक्तप्रिय देवता हैं, आपको नमस्कार है। लम्बोदर ! आपको मोदक सदा ही प्रिय हैं, आपको नमस्कार है। देव ! आप सदा मेरे सब कार्यों में विघ्नों का निवारण करें। गणेश ! जो लोग आपको विघ्न-शत्रु-दलन, सुन्दर, भक्तप्रिय, सुखद, फलप्रद, विद्याप्रद और अघहर इत्यादि नामों से पुकार कर आपकी स्तुति करते हैं, उनके लिए आप नित्य ही वरदायक हों। हे गणेशजी महाराज ! इस आपकी पूजा में जो कर्म न्यून अथवा अधिक किया गया है, उस सबके लिए हे सर्वात्मा ! आप मुझ पर सदैव प्रसन्न रहें। इस पूजा से सपरिवार आप महागणपति महाराज सन्तुष्ट हों। इस पर उन्हीं का स्वत्व है, मेरा नहीं।

॥ वेदोक्त श्री श्रीगणपति पूजन-विधि सम्पूर्ण ॥

卐

सोपान २१ तथा २२

भाषार्थ सहित श्रीगणपति-पूजा-विधि

ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः

पूजा करने से पहले इस पुस्तक का सोपान (१८) अवश्य पढ़ लेवें। भगवान् गणेशजी महाराज की यह वृहत् पूजा विधि मन्त्र श्लोकों द्वारा हिन्दी भाषार्थ सहित लिखी गई है। इसलिये मन्त्र-श्लोकों द्वारा पूजा करने वाले हिन्दी अर्थ ज्ञान सहित पूजा कर सकेंगे और केवल हिन्दी में पूजा करने वाले हिन्दी में पूजा कर सकेंगे।

।। ध्यान-प्रार्थना ।।

एकदन्तं महाकायं लम्बोदर गजाननम्।
विघ्नाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम् ।।

'जो एक दन्त वाले, विशालकाय, लम्बोदर, गजानन एवं विघ्ननाशक हैं, उन हेरम्ब देव को मैं प्रणाम करता हूं।'

शुद्ध-पवित्र-सुन्दर काष्ठ के पट्टे पर जो टूटा-फूटा न हो, उस पर लाल रंग का कपड़ा बिछावें और फिर उस पर कमल पुष्प की आकृति बनायें। तदनन्तर श्रीगणेशजी की प्रतिमा (मूर्ति) स्थापित करें। यदि मूर्ति न हो तो सुपारी पर मोली (लाल-पीले रंग का सूत, लपेट कर, गणेशजी की मूर्ति के रूप में स्थापित कर देवें और गणेशजी का ध्यान करें। यदि धातु निर्मित प्रतिमा हो तो जल, पञ्चामृत से स्नान करावें और यदि प्रतिमा मिट्टी की, सुपारी की अथवा कागज की चित्रमय हो तो जल पञ्चामृतादि का केवल छींटा ही देवें। तत्पश्चात् निम्नलिखित रूप से गणेशजी का आवाहन करें।

आवाहन

हे हेरम्ब त्वमेह्येहि ह्यम्बिकात्र्यम्बकात्मज।
सिद्धि बुद्धिपतेत्र्यक्ष लक्षलाभ पितुः पितः ।।
नागास्यं नागहारं त्वां गणराजं चतुर्भुजम्।
भूषितं स्वायुधौदव्यैः पाशाङ्कुशपरश्वधैः ।।
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे ।।

'हे माता पार्वती तथा त्रिलोचन महादेवजी के पुत्र हेरम्ब! आप आइए। आप सिद्धि और बुद्धि के पति हैं, तीन नेत्रों का लाभ कराने वाले तथा पिता के भी पिता हैं, यहाँ पधारिए। आप गजानन हैं नाग का हार धारण करते हैं, आपके चार भुजाएं हैं, आप गणों के राजा हैं, पाश-अंङ्कुश और परशु आदि दिव्य निजि आयुध आपके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं। मैं पूजन के लिए और अपने

7563
परिग्रहण सं.

इस यज्ञ को रक्षा के लिए भी आपका आवाहन करता हूँ। यहाँ पधार कर आप पूजा ग्रहण करें और याग की रक्षा भी करें।'

प्रतिष्ठापन

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।
सपरिवाराय श्रीगणेशाय नमः सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ।

आसन

विचित्ररत्नखचितं दिव्यास्तरणसंयुतम् ।
स्वर्णसिंहासनं चारू गृह् णीष्व सुरपूजित ।।

'देवताओं से भी पूजा ग्रहण करने वाले गणेशजी ! यह स्वर्ण निर्मित सिंहासन, जिसमें विचित्र रत्न जड़े हुए हैं और इस पर दिव्य गद्दी बिछी हुई है, आप विराजमान होने के लिए स्वीकार करें।'

पाद्य

ॐ सर्वतीर्थसमुद्भूतं पाद्यं गंधादिभिर्युतम् ।
विघ्नराज गृहाणेदं भगवन् भक्तवत्सल ।।

'भक्तों पर दया करने वाले विघ्नराज ! सब तीर्थों के जल द्वारा निर्माण किया गया और गंधादि पदार्थों द्वारा सुवासित यह पाद्य जल ग्रहण करें।'

अर्घ्य

ॐ गणाध्यक्ष नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर ।
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम् ।।

'करुणानिधान गणाध्यक्ष ! आपको प्रणाम करता हूँ। आप यह गन्ध, पुष्प, अक्षत और फलादि सहित जल अर्घ्य के रूप में ग्रहण कीजिये।'

आचमनाय

विनायक नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दित ।
गङ्गोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो ।।

'देवेश्वर ! देवताओं से भी वन्दना स्वीकार करने वाले देवता, विनायक ! आपको नमन करता हूँ। आप आचमन के लिए यह गंगा जल स्वीकार करें।

स्नान

मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम् ।
तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

'देव ! मन्दाकिनी (गङ्गा) जल, जो शुभ और सर्वपापनाशक है, यह आपके स्नान हेतु प्रस्तुत है, आप ग्रहण करें।'

पञ्चामृत-स्नान

पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं पयो दधि घृतं मधु ।
शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

'दूध, दही, घी, मधु शर्करा को मिला कर उत्तम प्रकार तैयार कर यह पञ्चामृत प्रस्तुत करता हूँ। प्रभो! आप स्नान हेतु स्वीकार करें।'

पञ्चामृत से स्नान कराने के पश्चात् शुद्ध जल से स्नान करावें। पुनः दूध-दही आदि से अलग-अलग स्नान कराने पर भी जल से स्नान कराना चाहिए।

पयः स्नान

कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्॥

'हे देवाधिदेव! कामधेनु के दुग्ध-भण्डार से निकला हुआ, सबको परम जीवन और पवित्रता प्रदान करने वाला एवं यज्ञ का मुख्य तत्त्व यह दूध, स्नान के लिए आपकी सेवा में समर्पित है।'

दधि-स्नान

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मयादेव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

'प्रभो! यह दूध के द्वारा निर्माण किया हुआ, खट्टा-मीठा, चन्द्रमा के समान श्वेत दही, आपके स्नान हेतु प्रस्तुत है, आप ग्रहण करें।'

घृत-स्नान

नवनीत समुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

'हे भगवन्! नवनीत (मक्खन) से निर्माण किया हुआ और सबको सन्तोष प्रदान करने वाला यह घृत आपके स्नान हेतु समर्पण करता हूँ, आप ग्रहण करें।'

मधु-स्नान

पुष्परेणु समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकर दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

'हे प्रभो! यह पुष्पों के पराग से निकला हुआ और तेज, पुष्टि का प्रदान करने वाला, दिव्य, मीठा, उत्तम स्वादयुक्त मधु आपके स्नान के लिए अर्पित है, आप स्वीकार कीजिए।'

शर्करा-स्नानं

इक्षुसार समुद्भूता शर्करा पुष्टिदा शुभा।
मलापहारका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

'ईख के रस-तत्त्व से निर्मित, पुष्टि प्रदाता, मैल को दूर करने वाली शुभ-प्रद यह दिव्य शर्करा आपके स्नान के लिए प्रस्तुत करता हूँ, ग्रहण कीजिए।'

इसके पश्चात् शुद्ध जल से स्नान करावें और मूर्ति को वस्त्र द्वारा शुद्ध कर लेवें।

सुगंधप्रद तैल-इत्र

चम्पकाशोकबकुलमालतीमोगरादिभिः।
वासितं स्निग्धताहेतु तैलं चारु प्रगृह्यताम्॥

'प्रभो ! चम्पा, अशोक, मौलसरी; मालती, तथा मोगरादि के पुष्पों द्वारा सुगन्धित मिश्रण, तैल-इत्र स्निग्धता के लिए आपकी सेवा में प्रस्तुत है, आप स्वीकार करें।'

तत्पश्चात् गंगा जल अथवा अन्य किसी पुण्यप्रद नदी या तीर्थ-जल से स्नान करावें।

शुद्धोदक-स्नान

गङ्गा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदा सिन्धुः कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

'गङ्गा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु और कावेरी पुण्य प्रदाओं के रूप में यह शुद्ध जल आपके स्नान के लिए प्रस्तुत है, आप, ग्रहण करें।'

वस्त्र-समर्पण

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जायां रक्षणं परम्।
देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्ति प्रयच्छ मे।।

'प्रभो ! सर्दी, हवा और गर्मी से भली प्रकार रक्षा करने वाला, लज्जा (शर्म) का निवारण करने योग्य और शरीर को सौन्दर्य प्रदान करने वाला (अलंकार) के रूप में यह वस्त्र आपको प्रस्तुत है, आप इसको स्वीकार कर हमें शान्ति प्रदान करें।'

उप वस्त्र-समर्पण

उत्तरीयं तथा देव नानाचित्रितमुत्तमम्।
गृहाणेदं मया भक्त्या दत्तं तत् सफलं कुरु।।

'हे भगवान ! अनेक प्रकार के चित्र-विचित्र बेल-बूटों से सुशोभित किया हुआ, उत्तम सुन्दर उत्तरीय (ऊपर ओढ़ने योग्य) वस्त्र, मैं आपकी सेवा में भक्ति पूर्वक प्रस्तुत करता हूँ, आप इसको ग्रहण करें और सफलता प्रदान करें।'

वस्त्र अथवा उपवस्त्र के अभाव में लाल-पीला रंगीन सूत और अलंकार के अभाव में अक्षत (चावल) समर्पण किये जाने चाहिए।

यज्ञोपवीत-समर्पण

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

'परम प्रभो ! नौ सूत के तारों द्वारा निर्मित, त्रिगुण देवता स्वरूप यह यज्ञोपवीत मैं आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ, आप इसको स्वीकार करें।'

गन्ध-समर्पण

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

'हे श्रेष्ठ देव ! यह दिव्य श्रीखण्ड चन्दन, पूर्ण सुन्दर मनोहर सुगन्ध से परिपूर्ण आप के विलेपन हेतु प्रस्तुत है, आप ग्रहण करें।'

अक्षत-समर्पण

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।

'परमेश्वर ! कुंकुम में रंगे हुए ये सुन्दर अक्षत मैं भक्तिभावपूर्वक आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ, यह आप स्वीकार करें ।'

पुष्प-माला

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयाहृतानि पुष्पाणि गृह्यन्तां पूजनाय भोः ।।

'प्रभो ! मालती आदि के पुष्पों की सुगन्धित मालाएँ और पुष्प आपकी पूजा के लिए प्रस्तुत करता हूँ, आप ग्रहण करें ।'

मन्दार-पुष्प

वन्दारुजनमन्दार मन्दारप्रिय धीपते ।
मन्दारजानि पुष्पाणि श्वेतार्कादीन्युपेहि भोः ।।

'स्तुति करने वाले भक्तों के लिए कल्पवृक्ष के समान वाञ्छा पूर्ण करने वाले, मन्दारप्रिय, बुद्धि के पति गणेश ! मन्दरा (कल्पवृक्ष) के और श्वेत आक (मन्दार) के पुष्प स्वीकार करें ।'

शमीपत्र

त्वत्प्रियाणि सुपुष्पाणि कोमलानि शुभानि वै ।
शमीदलानि हेरम्ब गृहाण गणनायक ।।

'हेरम्ब ! गणनायक ! जो सुन्दर पुष्प तथा शुभ कोमल शमीपत्र आपको प्रिय हैं, वह ग्रहण करें ।'

दूर्वाङ्कुर

दूर्वाङ्कुरान् सुहरितानमृतान् मङ्गलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ।।

'हे गणनायक ! आपकी पूजा हेतु मैं अत्यन्त हरे नरम अमृतमय तथा मंगल प्रदान करने वाले दूर्वाङ्कुर लाया हूँ, आप यह स्वीकार करें ।'

सिन्दूर

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम् ।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ।।

'हे प्रभो ! सुन्दर, लाल, सौभाग्यस्वरूप, सुखों को बढ़ाने वाला, शुभप्रद एवं इच्छा पूर्ण करने वाला सिन्दूर सेवा में प्रस्तुत करता हूँ, आप यह स्वीकार करें।'

नाना परिमल द्रव्य, अबीर-चूर्ण

नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम् ।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धाढ्यं चारु गृह्यताम् ।।

'अनेक-अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों द्वारा निर्माण किया हुआ गन्ध से परिपूर्ण अबीर नाम का यह उत्तम तथा सुन्दर चूर्ण ग्रहण करें।'

धूप

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।

'वनस्पति के रस से उत्पन्न सुगन्धयुक्त उत्तम गन्ध के रूप में सभी देवताओं के सूंघने लायक यह धूप आपकी सेवा में प्रस्तुत है, भगवान आप स्वीकार करें।'

दीप-दर्शन

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।
त्राहि मां निरयाद् घोराद्दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ।।

'हे देवेश्वर! घी में डुबो कर भिगोई हुई रूई की बत्ती अग्नि से प्रज्वलित कर दीपक के रूप में, जो त्रिभुवन के अन्धकार को दूर करने योग्य है, आपकी सेवा में प्रस्तुत है। आप इसको स्वीकार करें। मैं इष्ट देव गणपति महाराज की सेवा में यह दीपक प्रस्तुत करता हूँ। हे प्रभो! आप मुझे घोर अन्धकार नरक से बचाने की कृपा करें। हे ज्योतिर्मय! हे दीपदेव! आपको नमन करता हूँ।'

नैवेद्य-निवेदन

विभिन्न प्रकार के मोदक (लड्डू), सुस्वादयुक्त अनेक भाँति के मिष्टान्न, गौ के उत्तम घृत में उत्तम गुड़ मिश्रित किया हुआ और अनेक प्रकार के ऋतु अनुसार प्राप्त होने वाले फल उत्तम पात्रों में सुसज्जित कर भगवान गणपति देव महाराज के सामने प्रस्तुत करें। साथ में नीचे लिखे हुए मन्त्रों का उच्चारण करें—

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम् ।।
शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

'हे भगवान! आप यह नैवेद्य ग्रहण करें और मेरी आप में भक्ति निरन्तर बनाए रखें। मुझे इच्छित वर और परलोक में परमगति प्रदान करें। शर्करा और खाँड के मिश्रित अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ (मिष्टान्न), दूध, दही, घी तथा खाने-पीने योग्य विविध पकवान नैवेद्य के रूप में प्रस्तुत हैं। आप यह नैवेद्य कृपा करके स्वीकार करें।'

करोद्वर्तन-चन्दन

चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर।

'देव ! मलयगिरि पर्वत से पैदा हुए चन्दन के चूर्ण में कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थ मिश्रण कर मैंने यह करोद्वर्तन तैयार किया है। परमेश्वर ! आप इसको ग्रहण करें।'

ताम्बूल-एलापूगीफलादि-अर्पण

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

'भगवान ! महान् दिव्य पूगीफल, इलायची एवं चूना आदि का मिश्रण सहित यह उत्तम ताम्बूल का बीड़ा आपकी सेवा में प्रस्तुत है, इसको स्वीकार कीजिए।'

नारिकेल अर्पण

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

'हे देव ! यह नारियल का फल मैं आपके सम्मुख रख रहा हूँ। इससे जन्म-जन्म में मुझे आप सफलता प्रदान करें।'

दक्षिणा-समर्पण

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

'सुवर्ण हिरण्यगर्भ ब्रह्मा के गर्भ में स्थित अग्नि का यह बीज है। वह अनन्त पुण्य-फल प्रदान करने वाला है। भगवान ! यह आपकी सेवा में समर्पित है; अतः इसको स्वीकार कर मुझे शान्ति प्रदान करें।'

नीराजन (आरती)

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

'प्रभो ! केले के गर्भ से उत्पन्न यह कपूर प्रज्वलित कर इससे आपकी आरती करता हूँ। आप इसको देखें और मुझको वरदान प्रदान करने वाले होवें।'

पुष्पाञ्जलि-समर्पण

नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्ता गृहाण परमेश्वर॥

'परमेश्वर ! इस समय में उत्पन्न होने वाले विविध भाँति के सुगन्धित पुष्प मैं पुष्पाञ्जलि के रूप में आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ। आप यह स्वीकार करें।'

प्रदक्षिणा

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञात कृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे॥

'मनुष्यों द्वारा जाने-अनजाने में जो कोई पाप किए जाते हैं, वे परिक्रमा करने से पद-पद पर नष्ट होते हैं।'

(गणेशजी की तीन परिक्रमा करने का विधान है।)

विशेषार्घ्य-समर्पण

परिक्रमा करने के पश्चात् जल, गन्ध, अक्षत (चावल), फल-फूल, दूर्वा और दक्षिणा एक ताम्बे के बर्तन में रख कर दोनों घुटनों को पृथ्वी पर टेक कर उस अर्घ्य देने वाले ताम्बे के बर्तन को दोनों हाथों की अञ्जलि में लेवें। उसको अपने मस्तक से लगा कर नीचे लिखे हुए श्लोकों को बोलते हुए श्री गणेशजी महाराज को अर्घ्य देवें।

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रिलोक रक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्।।
द्वैमातुर कृपासिन्धो षण्मातुराग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद।।
अनेन सफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदा मम।

'त्रिलोकी की रक्षा करने वाले गणाध्यक्ष! रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। आप भक्तों को अभय देने वाले और भवसागर से उनकी रक्षा करने वाले होवें। दयासागर! आप दो माताओं के पुत्र होने से 'द्वैमातुर' कहे गए हैं।'

'प्रभो! आप षण्मातुर स्कन्द के बड़े भाई हैं, वरदाता हैं, वर दीजिए। अभीष्ट वस्तुओं के प्रदान करने वाले गणेश! मेरी वाञ्छा पूर्ण कीजिए। इस फल सहित अर्घ्यदान से आप मेरे सफल फल प्रदाता होइए।'

प्रार्थना

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।

'गणनाथ! आप विघ्नेश्वर हैं।' वर देने वाले हैं, देवताओं के प्रिय हैं, लम्बोदर हैं, विविध कलाओं से पूर्ण हैं, सम्पूर्ण जगत् के हितैषी हैं, गजानन हैं, श्रुति वर्णित यज्ञों से सुशोभित हैं और गौरी (पार्वती) के पुत्र हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तों के संकट दूर करने में सदा लगे रहते हैं, आप गणों के ईश्वर एवं सर्वेश्वर हैं, कल्याण करने वाले एवं देवेश्वर हैं, विद्याधर, विकट और वामन हैं तथा भक्तों पर प्रसन्न होकर उन्हें वर देते हैं; आपको बारंबार नमस्कार है।'

नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः।।
विश्वरूपाय नमस्ते नमस्ते ब्रह्मचारिणे।
भक्त प्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक।।

लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।।

'आप ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्र रूप और गजरूप हैं, इन सभी रूपों में आपको बार-बार नमस्कार है । सम्पूर्ण विश्व का रूप आपका ही स्वरूप है । आप ब्रह्मचारी हैं, आपको नमस्कार है । विनायक ! आप भक्त प्रिय देवता हैं, आपको नमस्कार है । लम्बोदर ! आपको मोदक सदा ही प्रिय है, आपको नमस्कार है । देव ! आप सदा मेरे सब कार्यों में विघ्नों को दूर करें ।'

त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति ।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव ।।

'हे गणेश ! जो लोग आपको 'विघ्न-शत्रु-दलन,' सुन्दर, भक्त प्रिय, सुखद, फलप्रद, विद्याप्रद, और अघहर इत्यादि नामों से पुकार कर आपकी स्तुति करते हैं, उनके लिए आप नित्य ही वरदायक होवें ।'

गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम ।।

'हे गणेशजी महराज ! आप इस पूजा में जो कर्म न्यून या अधिक किया गया है, उस सब के लिए सर्वात्मा श्री गणेश पतिदेव भगवान ! आप सदा मुझ पर प्रसन्न रहें ।'

'इस पूजा से सपरिवार श्री गणेशजी महाराज संतुष्ट और प्रसन्न होवें । इस पर उन्हीं का स्वत्व (अधिकार ; है, मेरा नहीं ।'

तदनन्तर साष्टांग प्रणाम करें और अपने पूज्य गुरु, माता-पिता को भी प्रणाम करें । इसके पश्चात् पञ्चामृत अथवा चरणामृत तथा प्रसाद औरों को बाँट कर स्वयं भी ग्रहण करें ।

।। श्री गणपतिपूजाविधि सम्पूर्ण ।।

।। पूजा के पश्चात् जप करने के मन्त्र ।।

भगवान गणेशजी महाराज के मन्त्र—श्री गणेश गायत्री मन्त्र इस प्रकार हैं, इनके जप करने से सभी प्रकार के अभीष्ट कार्य सिद्ध होते हैं ।

(१) ॐ तत्कराय विद्महे हस्तिमुखाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।
(कृष्ण यजुर्वेदीय मन्त्रायणी संहिता २।९।१६)

(२) ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।
(कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीयारण्यक नारायणोपनिषद् १०।१)

(३) ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । (गणपत्यथर्वशीर्षोपनिषद्)

(४) ॐ लम्बोदराय विद्महे महोदराय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । (अग्नि पुराण ७१।६)

(५) ॐ महोल्काय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । (अग्नि पुराण १७९।४)

अन्य गणपति मन्त्र—

(६) ॐ गं गणपतये नमः ।

इस मन्त्र के जप द्वारा सब प्रकार के कष्टों का निवारण होता है ।

(७) ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा ।

इस मन्त्र का सवा लक्ष जप करने से सर्व प्रकार के विघ्न दूर होते हैं और सर्व मनोकामनाऐं पूर्ण हो जाती हैं ।

(८) ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा ।

इस मन्त्र के जप करने से सम्मान मिलता है तथा लक्ष्मी प्राप्त होती है ।

(९) ॐ ह्रीं ग्रीं ह्रीं ।

इस मन्त्र के जप करने से शरीर में शक्ति प्राप्त होती है ।

(१०) ॐ वक्रतुण्डाय हुँ ।

इस मन्त्र के छः लाख जप छः मास में करने से सब कार्य सिद्ध होते हैं ।

卐

सोपान २३

भगवान् गणेशजी के विविध स्तवन, स्तोत्र, प्रार्थनादि

वेदों में भगवान् गणेशजी के स्तवन करने योग्य मन्त्रों की भांति गणपति, इन्द्र, बृहस्पति, ब्रह्मणस्पति नामों के स्तवन मन्त्र भी प्राप्त होते हैं। ये सब गणेशजी के ही नाम हैं । इनमें से कतिपय स्तवन नीचे लिखे जा रहे हैं ।

वेदोक्त गणेशस्तवन

ॐ निबसोद गणपते गणेषु
त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम् ।
न ऋते त्वत्क्रियते किंचनारे
महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च ।। (ऋग्वेद १०।११२।९)

हे गणपते ! आप अपने गणों सहित पधार कर उत्तम प्रकार से यहाँ विराजमान होवें, क्यों कि सब देवता और ऋषियों का कथन है कि आप लेखकों विद्वानों कवियों में सर्वोपरि मेधावी हैं। आपके नहीं होने से बाहर-भीतर, दूर-समीप कोई भी कर्म (कार्य) नहीं किए जा सकते हैं। हे ऋद्धि, सिद्धि, तथा बुद्धि के सर्वोपरि रस वर्षाने वाले सम्राट ! आप अपने इस महान् अर्चनीय एवं विचित्र ज्ञान-प्रकाश को मेरी बुद्धि में प्रकट करने का अनुग्रह कीजिए।'

गणानां त्वा गणपतिँ हवामहे प्रियाणां त्वाप्रियपतिँ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिँ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ (शुक्लयजुर्वेद २३।१९)

'हे सर्वव्यापी भगवान् गणेशजी ! हम आपको समस्तगणों का पति मानते हैं। आप पधारिए। हम आपको प्रिय पदार्थों तथा सभी स्थावर जङ्गम प्राणियों का पालन-पोषण करने वाला मानते हैं, आप आइए। हम आपको समस्त सुख प्रदान करने वाली निधियों का निधिपति मानते हैं, आप हमारे पास पधारने का अनुग्रह कीजिए। और आप हमें भी पूजा रूप गर्भ का पालन-पोषण करने योग्य बनाने का अनुग्रह कीजिए।'

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम्।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभि सीद सादनम्॥
(ऋग्वेद २।२३।१)

हे अपने गणों में गणपति (देव क्रान्तदर्शियों में (विद्वान्, कवियों, लेखकों में) श्रेष्ठ कवि, उत्तम लेखक ज्येष्ठराज (शिव-शिवा के पुत्र अथवा बड़े देवों में बड़े) मन्त्रों के स्वामी ब्रह्मणस्पति सर्वाधिक भोग एवं सुख आदि के प्रदान करने वाले हम आपको इस उत्तम कर्म (यज्ञकर्म) में पधारने हेतु प्रार्थना करते हैं। आप हमारी स्तुतियों को स्वीकार करें और इस सदन (यज्ञ-स्थल) में पधार कर यज्ञरक्षार्थ विराजमान होवें।

वेदोक्त ब्रह्मणस्पति स्तवन

सोमानं स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं य उशिजः॥१

हे ब्रह्मणस्पते ! आप उशिजना पुत्र कक्षीवान को जिस प्रकार तेजस्वी बनाते हैं, उसी प्रकार से सोम प्रस्तुत करने वाले मुझ (भक्त) को भी आप तेजस्वी बनाने का अनुग्रह करें।१

यो रेवान्यो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः॥२

आप धनवान्, रोगनाशक, सम्पत्तिवान्, पुष्टवान् एवं शीघ्रफल प्रदान करने वाले देवता हैं, आप हमारे ऊपर अनुग्रह करें।२

मा नः शंसो अररुषो धूर्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य।
रक्षा णो ब्रह्मणस्पते॥३

हे ब्रह्मणस्पते ! हमारे को मारने की इच्छा रखने वाले शत्रुओं के विचार सफल नहीं हो सकें। आप हमारी इस प्रकार से रक्षा करें।३

स घा वीरो न रिष्यति यमिन्द्रो ब्रह्मणस्पतिः ।
सोमो हिनोति मर्त्यम् ।।४

जिन मनुष्यों की इन्द्र ब्रह्मणस्पति एवं सोम सहायता रक्षा करते हैं, वे निश्चय ही वीर (बलवान्) बनते हैं और इससे ही उनका विनाश नहीं होता है ।४

त्वं तं ब्रह्मणस्पते सोम इन्द्रश्च मर्त्यम् । दक्षिणा पात्वंहस ।।५

हे ब्रह्मणस्पते ! आप स्वयं सोम, इन्द्र एवं दक्षिणा आदि सभी देवताओं सहित उन मनुष्यों की सब पापों तथा संकटों से रक्षा करते हैं ।५

(ऋग्वेद, मण्डल १ सूक्त १८।१-५)

प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता ।
अच्छा वीरं नर्यं पंक्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ।।८

(ऋग्वेद १।४०।८)

हे ब्रह्मणस्पति देवता ! आप और वे सत्यस्वरूपिणी वाग्देवता (सरस्वती) हमारे पास यहां पधारें । इसी भांति से दूसरे देव, पुष्कल अन्न के अधिपति (अन्न पूर्णा) हमारे यज्ञ उत्तम कर्म) में मनुष्यों का कल्याण करने वाले वीरों सहित पधारने का अनुग्रह करें ।८

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरुर्न द्वयाविनः ।
विश्वा इदस्माद्ध्वरसो विबाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते ।।५

(ऋग्वेद २।२३।५)

हे सर्वोत्तम रक्षा करने वाले ब्रह्मणस्पति ! आप जिसकी रक्षा व पालन करते हैं उनको कोई दुःख, कष्ट एवं त्रास नहीं दे सकता है । उनको पाप भी कोई पीड़ा नहीं दे सकते हैं, शत्रु भी उनको मार नहीं सकते हैं अर्थात् धूर्त, ठग, लोभी कोई भी उनकी किसी प्रकार से हानि करने वाले नहीं होते हैं, उन दुष्ट लोगों को आप सर्वदा दूर रख कर रक्षा करते रहते हैं ।१८

वेदोक्त बृहस्पति स्तवन

देवाश्चित्ते असुर्य प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः ।
उस्रा इव सूर्यो ज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि ।।१५

हे बलवान् बृहस्पति ! ज्ञानी देवताओं ने आपके पास से ही यज्ञों में स्थान प्राप्त किया है । तेजस्वी सूर्य जिस प्रकार किरण उत्पन्न करता है, उसी प्रकार से आप सम्पूर्ण स्तोत्र उत्पन्न करते हैं (अर्थात् आप ही स्तोत्रों के उत्पादक हैं) ।१५

आ विबाध्या परिरापस्तमांसि च ज्योतिष्मन्तं रथमृतस्य तिष्ठसि ।
बृहस्पते भीममभित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदम् ।।१३

हे बृहस्पते ! आप दुराचार एवं अन्धकार (मूढ़ बुद्धि) का नाश करके तेजस्वी, विशाल, शत्रुनाशक, असुर घातक, पर्वतीय दुर्गों का भेदन करने वाले तथा स्वर्ग के साथ स्पर्द्धा करने वाले रथ में विराजमान हैं ।१३

सुनीतिभिर्नयसि त्रायसे जनं यस्तुभ्यं दाशान्न तमंहो अश्नवत् ।
ब्रह्मद्विषस्तपनो मन्युमीरसि बृहस्पते महि तत्ते महित्वनम् ।।१४

हे बृहस्पति ! आप मनुष्यों को सन्मार्ग में लाते हैं, उनका संरक्षण करते हैं। जो आपको भेंट पूजोपचार समर्पण करते हैं, उनको दु:ख नहीं होता। आप ब्रह्मद्वेषियों को डांटते-फटकारते और दड़बड़ा देते हैं और आप अपने क्रोध का शमन कर लेते हैं। आप की महिमा बृहत अपरम्पार है।१७

त्वं नो गोपा: पथिकृद्विचक्षणस्तव व्रताय मतिभिर्जरामहे।
बृहस्पते यो नो अभि ह्वरो दध स्वा तं मर्मर्तु दुच्छुना हरस्वती ।।१६

हे बृहस्पति ! विद्वान् रूप में आप हमारे सन्मार्ग, दर्शक तथा संरक्षक हैं। आपका व्रत (अनुष्ठान) करने के लिए आपका हम उत्तम बुद्धि से स्तोत्र (गुणगान) करते हैं। हमारे में से भी जो कुटिलता करें; उनकी दुर्बुद्धि को आप शीघ्र नष्ट अर्थात् दूर कर देवें।१९ (ऋग्वेद २।२३।२-४, ६)

उत वा यो नो मर्चयादनागसोऽरातीवा मर्त: सानुको वृक:।
बृहस्पते अप तं वर्तया पथ सुगं नो अस्यै देववीतये कृधि ।।७

हे बृहस्पते ! शत्रु की भांति से आचरण करने वाले, गर्विष्ठ एवं ठग (चालाक) मनुष्यों को, जो हमारे जैसे निरपराधियों को त्रास (कष्ट) देते हैं, उनको हमारे से दूर कर देवें और हमारे लिए देव प्राप्ति का मार्ग सुगम (सरल) कर देवें।२० (ऋग्वेद २।२३।७)

बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।।२८

हे सत्य के लिए प्रसिद्ध बृहस्पति ! जिस तेज की श्रेष्ठ मनुष्य इच्छा करते हैं, जो मनुष्यों में पुरुषार्थी कहलाते हैं, जो सबकी सामर्थ्य वृद्धि करते हैं। इसी प्रकार का तेज से युक्त आश्चर्यजनक धन हमें प्रदान करने का अनुग्रह करें।२८ (ऋग्वेद २।२३।२८)

वेदोक्त गणपति स्तवन अथवा इन्द्र स्तवन

श्रीगणपति सूक्तम्

इस सूक्त की ऋचाएँ ऋग्वेद के ८वें मण्डल में ८१ वें सूक्त के १ से ९ मन्त्रों में हैं। इसके कुसीदी काण्व ऋषि हैं और इन्द्र देवता हैं। इन ९ मन्त्रों को गणपति सूक्त नाम से कहा व जाना जाता है और लिखा हुआ भी मिलता है, किन्तु मन्त्रों में प्रार्थना करते हुए भगवान् इन्द्र को सम्बोधन किया जाता है। अत: इसका नाम शीर्षक में 'गणपति स्तवन, अथवा इन्द्रस्तवन रखा गया है

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं स गृभाय।
महाहस्ती दक्षिणेन ।।१

हे इन्द्रदेव ! आपके बड़े हाथ हैं। आप हमें प्रदान करने हेतु प्रशंसनीय आश्चर्ययुक्त तथा संग्रह करके रखने योग्य धन को दाहिने हाथ मे लेवें। १।।

विद्मा हि त्वा तुविकूर्मि तविदेष्णं तुवीमघम्। तुविमात्रमवोभि: ।।२

हे इन्द्र! आपको हम कर्तव्यनिष्ठ, धनवान, उदार और अनेक प्रकार से संरक्षण करने वाला मानते हैं।।२।।

नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम्। भीमं न गां वारयन्ते ।।३

हे मनुष्यो ! आप आओ-आओ, धनपति तथा स्वयं प्रकाश इन्द्र देवता की हम स्तुति करें। उनकी कृपा से हमको कोई त्रास (कष्ट) देने नहीं आयेगा ।।३।।

एतो न्विन्द्रं स्तवामेशान वस्वः स्वराजम् । न राधसामर्धिषन्नः ।।४

हे इन्द्रदेव ! जैसे उन्मत्त (पागल) को रोक नहीं सकते, वैसे ही धन प्रदान करने की इच्छा रखने वाले आपको कोई मनुष्य अथवा देवता रोक नहीं सकते ।।४।।

प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत्साम गीयमानं । अभि राधसा जुगु त् ।।५

हे मनुष्यो ! आओ, सामगान का आरम्भ करें। हे इन्द्रदेव ! आप यह सामगान (स्तोत्र गान) सुनिये, और हमें सम्पत्ति से भरा हुआ अर्थात् सम्पत्ति सहित आशीर्वाद प्रदान कीजिये ।।५।।

आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्र मृश । इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ।।६

हे इन्द्र ! आप हमें सम्पत्ति प्रदान करें। दाहिने और बायें दोनों हाथों से आप हमें सम्पत्ति प्रदान करें। और हमें आप सम्पत्ति रहित (दरिद्र) नहीं होने दें ।।६।।

उप क्रमस्वा भर धृषता धृष्णो जनानां । प्रदाशूष्टरस्य वेदः ।।७

हे इन्द्र ! आप हमें धन देना आरम्भ करें। शत्रुओं पर आक्रमण करने वाले, हे देव ! कंजूसों (कृपणों) का धन आप यहाँ ले आवें ।।७।।

इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः । अस्माभिः सु तं सनुहि ।।८

हे इन्द्र ! जो धन देने के लिये है, वह हमारे जैसे विद्वानों के मांगते ही प्रदान करें ।।८।।

सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः । वशैश्च मक्षू जरन्ते ।।९

हे इन्द्रदेव ! आपका अत्यन्त रमणीय होने वाला धन हमारे पास शीघ्र आ जाये। इस प्रकार की इच्छा से हम लोग आपकी स्तुति करते हैं।

।। इति गणपति सूक्तम् ।।

विघ्ननिवारण गणेश स्मरण

गणपतिर्विघ्नराजो लम्बतुण्डो गजाननः ।
द्वैमातुरश्च हेरम्ब एकदन्तो गणाधिपः ।।
विनायकश्चारुकर्णः पशुपालो भवात्मजः ।
द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।।
विश्वं तस्य भवेद्वश्यं न च विघ्नं भवेत् क्वचित् ।

(पद्मपुराण सृ. ६१।३१-३३)

'गणपति, विघ्नराज, लम्बतुण्ड, गजानन, द्वैमातुर, हेरम्ब, एकदन्त, गणाधिप, विनायक, चारुकर्ण, पशुपाल और भवात्मज—ये बारह गणेशजी के नाम हैं। जो प्रातःकाल उठकर इनका पाठ करता है, सम्पूर्ण विश्व उसके वश में हो जाता है, तथा उसके सामने कभी विघ्न नहीं आते।

विघ्ननिवारण गणेश स्तोत्रम्

वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्य समप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।।१

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक: ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्नाशो विनायक: ।।२
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजानन: ।
द्वादशैतानि नामानि य: पठेच्छृणुयादपि ।।३
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।।४
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।५
अभीप्सितार्थ सिद्धयर्थं पूजितो य: सुरासुरै: ।
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नम: ।।६

करोड़ों सूर्यों के समान महातेजस्वी, विशालकाय और टेढ़ी सूंडवाले गणपति देव ! आप सदा सब कार्यों में मेरे विघ्नों का निवारण करें ।१। सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशक, विनायक, धूमकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन—ये गणेशजी के बारह नाम हैं। जो मनुष्य विद्यारम्भ, विवाह, गृह प्रवेश, यात्रा, संग्राम (युद्ध) और संकट के समय इन बारह नामों का पाठ और श्रवण करता है, उसके कार्य में विघ्न पैदा नहीं होते हैं ।२-४। शुक्ल वस्त्र धारण करने वाले, चन्द्रमा के समान गोर, चार भुजा धारण करने वाले और प्रसन्न मुख वाले गणपति देव का ध्यान करें। इसके द्वारा सम्पूर्ण विघ्नों की शान्ति हो जाती है ।५। देवताओं और असुरों ने भी अभीष्ट मनोरथों की सिद्धि के लिए जिनका पूजन किया है तथा जो समस्त विघ्नों को हर लेने वाले हैं, उन गणों के अधिपति को नमस्कार है ।६।

विघ्ननाशक गणपति स्तोत्रम्

श्री राधिकोवाच

परं धाम परं ब्रह्म परेशं परमीश्वरम् ।
विघ्ननिघ्नकरं शान्तं पुष्टं कान्तमनन्तकम् ।।
सुरासुरेन्द्रै: सिद्धेन्द्रै: स्तुतं स्तौमि परात्परम् ।
सुरपद्मदिनेशं च गणेशं मङ्गलायनम् ।।
इदं स्तोत्र महापुण्यं विघ्नशोकहरं परम् ।
य: पठेत् प्रातरुत्थाय सर्वविघ्नात् प्रमुच्यते ।।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्ण १२१।१०३-१०५)

श्री राधिका जी ने कहा - जो परमधाम, परब्रह्म, परेश, परम ईश्वर, विघ्नों के विनाशक, शान्त, पुष्ठ, मनोहर और अनन्त हैं. प्रधान-प्रधान सुर, असुर और सिद्ध जिनका स्तवन करते हैं, जो देवरूपी कमल के लिए सूर्य और मंगलों के आश्रय स्थान हैं, उन परात्पर गणेशजी की मैं स्तुति करती हूँ। यह उत्तम स्तोत्र महान् पुण्यमय तथा विघ्न और शोक को हरने वाला है। जो प्रात:काल उठकर इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह सम्पूर्ण विघ्नों से विमुक्त हो जाता है।

संकटनाशक सर्वसिद्धि फलप्रद स्तोत्रम्

नारद उवाच

प्रणम्यं शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम् ।
भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुः कामार्थसिद्धये ।।
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम् ।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ।।
लम्बोदरं पञ्चमं च षष्टं विकटमेव च ।
सप्तमं विघ्नराजेन्द्रं धूम्रवर्णं तथाष्टमम्
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम् ।
एकादशं गणपतिं द्वदाशं तु गजाननम् ।।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसंध्य यः पठेन्नरः ।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं परम् ।।
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान् मोक्षार्थी लभते गतिम् ।।
जपेद् गणपतिस्तोत्र षड्भिर्मासैः फल लभेत् ।
सवत्सरेण सिद्धि च लभते नात्र सशयः ।।
अष्टभ्यो ब्रह्मणभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयत् ।
तस्य विद्या भवेत् सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ।।

।। इति श्री नारद पुराणे संकटनाशनं नाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

नारदजी कहते हैं—'पहले मस्तक झुकाकर गौरीपुत्र विनायक देव को प्रणाम करके प्रतिदिन आयु, अभीष्ट मनोरथ और धन आदि प्रयोजनों की सिद्धि के लिए भक्तावास गणेशजी का स्मरण करें। पहला नाम वक्रतुण्ड है, दूसरा एकदन्त है, तीसरा कृष्णपिङ्गाक्ष है, चौथा गजवक्त्र है, पाँचवां लम्बोदर, छठा विकट, सातवाँ विघ्नराजेन्द्र, आठवाँ धूमवर्ण, नवाँ भालचन्द्र, दसवाँ विनायक, ग्यारहवाँ गणपति और बारहवाँ नाम गजानन है। जो मनुष्य सवेरे, दोपहर और सायंकाल तीनों संध्याओं के समय प्रतिदिन इन बारह नामों का पाठ करता है, उसे विघ्न का भय नहीं होता। यह नाम-स्मरण उसके लिए सभी सिद्धियों का उत्तम साधक है। इन नामों के जप से विद्यार्थी विद्या, धनार्थी धन, पुत्रार्थी अनेक पुत्र और मोक्षार्थी मोक्ष प्राप्त करता है। इस गणपति स्तोत्र का नित्य जप करें। जपकर्ता को छः महिने में अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। एक वर्ष तक जप करने से मनुष्य सिद्धि को प्राप्त कर लेता है, इसमें सशय नहीं है।

जो इस स्तोत्र को लिखकर आठ ब्राह्मणों को अर्पित करता है, उसे गणेशजी की कृपा से सम्पूर्ण विद्या की प्राप्ति होती है।'

लक्ष्मी प्राप्ति हेतु गणपति स्तोत्रम्

ॐ नमो विघ्नराजाय सर्वसौख्यप्रदायने ।
दुष्टारिष्ट विनाशाय पराय परमात्मने ।।

लम्बोदरं महावीर्यं नागयज्ञोपशोभितम् ।
अर्धचन्द्रधरं देवं विघ्नव्यूहविनाशनम् ।।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः हेरम्बाय नमो नमः ।
सर्वसिद्धि प्रदोऽसि त्वं सिद्धिबुद्धिप्रदो भव ।।
चिन्तितार्थप्रदस्त्वं हि सतत मोदकप्रियः ।
सिन्दूरारुणवस्त्रैश्च पूजितो वरदायकः ।।
इदं गणपतिस्तोत्रं यः पठेत् भक्तिमान् नरः ।
तस्यदेहं च गेहं च स्वयं लक्ष्मीर्न मुञ्चति ।।

सम्पूर्ण सौख्य प्रदान करने वाले सच्चिदानन्द स्वरूप विघ्नराज गणेश को नमस्कार है। जो दुष्ट अरिष्ट ग्रहों का नाश करने वाले परमात्मा हैं, उन गणपति को नमस्कार है। जो महापराक्रमी, लम्बोदर, सर्पमय यज्ञोपवीत से सुशोभित, अर्धचन्द्रधारी और विघ्न समूह का विनाश करने वाले हैं, उन गणपति देव की मैं वन्दना करता हूँ। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः हेरम्ब को नमस्कार है। भगवन्! आप सब सिद्धियों के दाता हैं, आप हमारे लिए सिद्धि-बुद्धि दायक हों। आपको सदा ही मोदक (लड्डू) प्रिय है। आप मन के द्वारा चिन्तित अर्थ को देने वाले हैं! सिन्दूर और लाल वस्त्र से पूजित होकर आप सदा वर प्रदान करते हैं। जो मनुष्य भक्ति भाव से युक्त हो, इस गणपति-स्तोत्र का पाठ करता है, स्वयं लक्ष्मी उसके देह-गेह को नहीं छोड़ती है।

पुत्र प्राप्ति हेतु संतान गणपतिस्तोत्रम्

नमोऽस्तु गणनाथाय सिद्धिबुद्धियुताय च ।
सर्वप्रदाय देवाय पुत्रवृद्धिप्रदाय च ।।
गुरूदराय गुरवे गोप्त्रे गुह्यासिताय ते ।
गोप्याय गोपिताशेषभुवनाय चिदात्मने ।।
विश्वमूलाय भव्याय विश्वसृष्टिकराय ते ।
नमो नमस्ते सत्याय सत्यपूर्णाय शुण्डिने ।।
एकदन्ताय शुद्धाय सुमुखाय नमो नमः ।
प्रपन्नजनपालाय प्रणतार्तिविनाशने ।।
शरणं भव देवेश संततिं सुदृढां कुरु ।
भविष्यन्ति च ये पुत्रा मत्कुले गणनायक ।।
ते सर्वे तव पूजार्थे निरताः स्युर्वरा मतः ।
पुत्रप्रदमिदं स्तोत्रं सर्वसिद्धि प्रदायकम् ।।

।। इति संतान गणपति स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

सिद्धि-बुद्धि सहित उन गणनाथ को नमस्कार है, जो पुत्र वृद्धि प्रदान करने वाले तथा सब कुछ देने वाले देवता हैं। जो भारी पेटवाले (लम्बोदर), गुरु (ज्ञानदाता), गोप्ता (रक्षक), गुह्य (गूढ स्वरूप), तथा सब ओर से गौर हैं, जिनका स्वरूप और तत्त्व गोपनीय है तथा जो समस्त भुवनों के रक्षक हैं, उन चिदात्मा आप गणपति को नमस्कार है। जो विश्व के मूल कारण, कल्याण स्वरूप, संसार

की सृष्टि करने वाले, सत्यरूप, सत्यपूर्ण तथा शूण्डधारी हैं, उन आप गणेश्वर को बारम्बार नमस्कार है। जिनके एक दांत और सुन्दरमुख, जो शरणागत भक्त जनों के रक्षक तथा प्रणतजनों की पीड़ा का नाश करने वाले हैं, उन शुद्ध स्वरूप आप गणपति को बारम्बार नमस्कार है। देवेश्वर ! आप मेरे लिए शरणदाता हों। मेरी सन्तान-परम्परा को सुदृढ़ करें। गणनायक ! मेरे कुल में जो पुत्र हों, वे सब आपकी पूजा के लिए सदा तत्पर हों—यह वर प्राप्त करना मुझे इष्ट है। यह पुत्र प्रदायक स्तोत्र समस्त सिद्धियों का देने वाला है।

॥ इस प्रकार यह सन्तान गणपति स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

सिद्धिविनायक स्तोत्रम्

विघ्नेश विघ्नचयखण्डननामधेय, श्री शंकरात्मज सुराधिपवन्द्यपाद।
दुर्गामहाव्रतफलाखिलमङ्गलात्मन्, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
सत्पद्मरागमणिवर्णशरीरकान्तिः, श्रीसिद्धिबुद्धिपरिचर्चितकुङ्कुमश्रीः।
दक्षस्तने बलयितातिमनोज्ञशुण्डो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
पाशांकुशाब्जपरशूंश्च दधच्चतुर्भिर्दोर्भिश्च शोणकुसुमस्त्रगुमाङ्गजातः।
सिन्दूरशोभितललाट विधुप्रकाशो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
कार्येषु विघ्नचयभीतविरञ्चिमुख्यैः, सम्पूजितः सुरवरैरपिमोदकाद्यैः।
सर्वेषु च प्रथममेव सुरेषु पूज्यो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
शीघ्राञ्चनस्खलनतुङ्गरवोर्ध्वकण्ठ, स्थूलेन्दुरुद्रगणहासित देवसङ्घः।
शूर्पश्रुतिश्च पृथुवर्तुलतुङ्गतुन्दो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
यज्ञोपवीतपदलम्भितनागराजो, मासादिपुण्यदद्दशीकृत ऋक्षराजः।
भक्ताभयप्रद दयालय विघ्नराज, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
सद्रत्नसारततिराजितसत्किरीटः, कौसुम्भचारु वसनद्वय ऊर्जितश्रीः।
सर्वत्र मङ्गलकरस्मरणप्रतापो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥
देवान्तकाद्यसुरभीतसुरार्तिहर्ता, विज्ञानबोधनवरेण तमोऽपहर्ता।
आनन्दितत्रिभुवनेश कुमारबन्धो, विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥

॥ इतिश्री मुद्गलपुराणे विघ्ननिवारकं श्रीसिद्धिविनायकस्तोत्र सम्पूर्णम् ॥

'हे विघ्नेश ! हे सिद्धि विनायक ! आपका नाम विघ्न-समूह का खण्डन करने वाला है। आप भगवान् शंकर के पुत्र हैं। देवराज इन्द्र आपके चरणों की वन्दना करते हैं। आप श्री पार्वती जी के महान् व्रत के उत्तम फल एवं निखिल मङ्गलरूप हैं। आप मेरे विघ्न का निवारण करें। सिद्धि विनायक ! आपके श्री विग्रह की कान्ति उत्तम पद्मरागमणि के समान अरुण वर्ण की है। श्री सिद्धि और बुद्धि देवियों ने अनुलेपन करके आपके श्रीअङ्गों में कुङ्कुम की शोभा का विस्तार किया है। आपके दाहिने स्तन पर वलयाकार मुड़ा हुआ शुण्ड-दण्ड अत्यन्त मनोहर जान पड़ता है। आप मेरे विघ्न हर लीजिए। सिद्धि विनायक ! आप अपने चार हाथों में क्रमशः पाश, अङ्कुश, कमल और परशु धारण करते हैं, लाल फूलों की माला से अलंकृत हैं और उमा के अङ्ग से उत्पन्न हुए हैं तथा आपके

सिन्दूर शोभित ललाट में चन्द्रमा का प्रकाश फैल रहा है, आप मेरे विघ्नों का अपहरण कीजिए। सभी कार्यों में विघ्न समूह के आ पड़ने की आशंका से भयभीत हुए ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवताओं ने भी आपकी मोदक आदि मिष्टान्नों द्वारा भली भाँति से पूजा की है। आप समस्त देवताओं में सबसे पहले ही पूजनीय हैं। आप मेरे विघ्न समूह का निवारण कीजिए। सिद्धि विनायक! आप जल्दी-जल्दी चलने लड़खड़ाने, उच्च स्वर से शब्द करने, ऊर्ध्वकण्ठ होने, स्थूल इन्दु धारण करने तथा रुद्रगण को साथ रखने के कारण समस्त देवसमुदाय को हँसाते रहते हैं। आपके कान सूप के समान जान पड़ते हैं, आप मोटा, गोलाकार और ऊँचा तुन्द (तोंद) धारण करते हैं, आप मेरे विघ्नों का अपहरण कीजिए। आपने नागराज को यज्ञोपवीत का स्थान दे रखा है, आप मासादि तिथि प्रतिपदा में भी पुण्यदाता चन्द्रमा का प्रत्यक्षदर्शन करते हैं। भक्तों को अभय देने वाले दयाधाम विघ्नराज! सिद्धिविनायक! आप मेरे विघ्नों को हर लीजिए। आपका सुन्दर किरीट उत्तम रत्नों के सार भागों की श्रेणियों से उद्दीप्त होता है। आप कुसुम्भी रंग के दो मनोहर वस्त्र धारण करते हैं, आपकी शोभा या कान्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी है और सर्वत्र आपके स्मरण का प्रताप सबका मङ्गल करने वाला है। सिद्धि विनायक! आप मेरे विघ्न हर लेवें। सिद्धि विनायक! आप देवान्तक आदि असुरों से डरे हुए देवताओं की पीड़ा दूर करने वाले तथा विज्ञान बोध के वरदान से सबके अज्ञानान्धकार को हर लेने वाले हैं। त्रिभुवनपति इन्द्र को आनन्दित करने वाले कुमार बन्धो! आप मेरे विघ्नों का निवारण कीजिए।

।। इति श्री मुद्गलपुराण में लिखिति विघ्ननिवारण सिद्धि विनायक स्तोत्र सम्पूर्णम् ।

।। श्री स्वामी कार्तिकेय द्वारा श्रीगणेशजी का स्तवन ।।

भक्त मनोरथ सिद्धिप्रद स्तोत्र

स्कन्द उवाच

नमस्ते योगरूपाय सम्प्रज्ञातशरीरिणे ।
असम्प्रज्ञातमूर्ध्ने ते तयोर्योगमयाय च ।।
वामाङ्गे भ्रान्तिरूपाते सिद्धिः सर्वप्रदा प्रभो ।
भ्रान्तिधारकरूपा वै बुद्धिस्ते दक्षिणाङ्गके ।।
मायासिद्धिस्तथा देवा मायिको बुद्धिसंज्ञितः ।
तयोर्योगे गणेशस्त्वं स्थितोऽसि नमोऽस्तुते ।।
जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः ।
तयोर्योगे गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः ।।
चतुर्विधं जगत्सर्वं ब्रह्म तत्र तदात्मकम् ।
हस्ताश्चत्वार एवं ते चतुर्भुज नमोऽस्तुते ।।
स्वसंवेद्य च यद्ब्रह्म तत्र खेलकरो भवान् ।
तेन स्वानन्दवासी त्वं स्वानन्द पतये नमः ।।
द्वन्द्वं चरसि भक्तानां तेषां हृदि समास्थितः ।
चौरवत्तेन तेऽभूद् वै मूषको वाहनं प्रभो ।।

जगति ब्रह्मणि स्थित्वा भोगान् भुङ्क्षे स्वयोगतः ।
जगद्भिर्ब्रह्मभिस्तेन चेष्टितं ज्ञायते न च ।।
चोरवद्भोगकर्ता त्वं तेन ते वाहनं परम् ।
मूषको मूषकारूढ़ो हेरम्बाय नमो नमः ।।
किं स्तौमि त्वां गणाधीश योगशान्तिधरं परम् ।
वेदादयो ययुः शान्तिमतो देवं नमाम्यहम् ।।
इति स्तोत्रं समाकर्ण्य गणेशस्तमुवाच ह ।
वरं वृणु महाभाग दास्यामि दुर्लभ ह्यपि ।।
त्वया कृतमिदं स्तोत्रं योगशान्तिप्रद भवेत् ।
मयि भक्तिकरं स्कन्द सर्वसिद्धिप्रदं तथा ।।
य यमिच्छसि तं तं वै दास्यामि स्तोत्रयन्त्रितः ।
पठते शृण्वते नित्यं कार्तिकेय विशेषतः ।।

।।इति श्री मुद्गलपुराणे भक्तमनोरथ सिद्धिप्रदं नाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

स्कन्द बोले — गणेश्वर ! सम्प्रज्ञात समाधि आपका शरीर तथा असम्प्रज्ञात समाधि आपका मस्तक है । आप दोनों के योगमय होने के कारण योगस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है । प्रभो ! आपके वामाङ्ग में भ्रान्तिरूपा सिद्धि विराजमान है, जो सब कुछ देने वाली है तथा आपके दाहिने अङ्ग में भ्रान्ति धारक रूप वाली बुद्धि देवी स्थित है । भ्रान्ति अथवा माया सिद्धि है उसे धारण करने वाले गणेश देव मायिक हैं । बुद्धि संज्ञा भी उन्हीं की है । गणेश्वर ! आप सिद्धि और बुद्धि दोनों योग में स्थित हैं, आपको बारंबार नमस्कार है । गकार जगत्स्वरूप है और णकार ब्रह्म का वाचक है । उन दोनों के योग में विद्यमान आप गणेश देवता को बारंबार नमस्कार है । जरायुज आदि भेद से चार प्रकार का जो जगत् हैं, वह सब ब्रह्म है । जगत् में ब्रह्म ही उसके रूप मे भास रहा है । इस प्रकार चतुर्विध जगत् ही आपके चार हाथ हैं । चतुर्भुज ! आपको नमस्कार है । स्वसंवेद्य जो ब्रह्म है, उसमें आप खेलते या आनन्द लेते हैं, इसलिये आप स्वानन्दवासी हैं । स्वानन्दपत ! आपको नमस्कार है । प्रभो ! आप भक्तों के हृदय में रहकर उनके सुख-दुःख आदि द्वन्द्वों को चोर की भाँति चरते या चुराते हैं । इसलिए मूषक (चुराने वाला) आपका वाहन है । आप जगत् रूप ब्रह्म में स्थित रहकर भोगों को भोगते हैं, तथापि अपने योग मे ही विराजते हैं, इसलिये ब्रह्म रूप जगत् आपकी चेष्टा को नही जान पाता । आप चोर की भाँति भोगकर्ता हैं, इसलिये आपका उत्कृष्ट वाहन मूषक है । आप मूषक पर आरूढ़ हैं । हेरम्ब ! आपको बारंबार नमस्कार है । गणाधीश ! आप योग शान्तिधारी उत्कृष्ट देवता हैं । मैं आपकी क्या स्तुति कर सकता हूँ । आपकी स्तुति करने में तो वेद आदि भी शान्ति (मौन) धारण कर लेते हैं ।

यह स्त्रोत सुनकर गणेशजी ने स्कन्द से कहा—'महाभाग ! वर माँगो । वह दुर्लभ होने पर भी मैं तुम्हें दूँगा । तुम्हारे द्वारा किया गया यह स्तोत्र योग शान्तिदाता, मुझ मे भक्ति उत्पन्न करने वाला तथा सम्पूर्ण सिद्धियों को देने वाला होगा । कार्तिकेय ! तुम जो-जो चाहोगे, वह-वह वस्तु तुम्हारे स्तोत्र में बंधकर मैं

निश्चय ही देता रहूँगा । विशेषतः उनको, जो प्रतिदिन इसका पाठ और श्रवण करते होंगे, मैं मनोवाञ्छित वस्तु दूँगा ।'

।। यह मुद्गल पुराणान्तर्गत भक्तमनोरथसिद्धिप्रद गणेश स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ।।

राजस्थान के मारवाड़ी समाज में सब ही प्रकार शुभ माङ्गलिक कार्यों तथा शुभ संस्कार किये जाते समय भगवान गणेशजी के गीत से ही कार्यों का शुभारम्भ किया जाता है । उदाहरण के रूप में विवाह संस्कार के समय में प्रयोग किये जाने वाले दो गीत प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

(१)

मढ़ रणत (रणथ) भंवर सै आवो विनायक, करो ए न चीती विड़दड़ी ।
विड़द विनायक दोनूजी आया, आय पवास्या, सील़ बडतल़ ।
पूछत-पूछत नगर परवेश्या, पोल बताओ, लाडला रै बाप की ।
ऊंचै-स-झरोखै, लाल किंवाड़ी, केला-रा-विरछ, लाडला रै वारणैं ।

इस गीत का भावार्थ है—'विनायकजी ! आप रणथंभोर गढ़ से पधार कर आओ और हमारे विवाह कार्यों में सब प्रकार की चिन्ता से मुक्ति प्रदान कराओ । विड़दडी (वृद्धि) और विनायक दोनों ही आ गये और उन्होंने नगर में प्रवेश किया और सीला बड़तल़ (ठण्डे वट वृक्ष) के नीचे अपना डेरा (ठहरना) कर लिया है । और वे बस्ती (नगरी) में पूछते-पूछते कि लाडला (वर) के बाप के मकान किधर हैं, बतलाएँ । तब ग्राम (बस्ती) वालों ने बतलाया (उत्तर दिया) कि वह झरोखा वाला मकान है और उसके कंवाड़ (फाटक) लाल रंग के हैं, उधर लाडले बींद (वर) अथवा दुलहा के मकान के दरवाजे के बाहर केला के वृक्ष लगे हुए हैं ।

इसी प्रकार का एक दूसरा गीत और प्रस्तुत है—

(२)

एक कोथलड़ी जस देय विनायक, लाडलैक ताऊ-बाप नैं ।
ये तो खाय-खरचै सो धन विलसै, जस रै तो परिवार में ।
एक बांहडली जस देई विनायक, लाडलै कै चाचै-बीर नैं ।
एक जीभडली जस देई विनायक, लाडलै की दादी-माय नैं ।
ये तो मीठी सी बोलैं नैकर चालै, ज्यों सरसै परिवार में ।
एक भात में जस देई विनायक, लाडलै क नाना-मामा नै ।
एक आरतै जस दई विनायक, लाडलै की भूवा-भैण नैं ।

इस गीत का भावार्थ है—हे विनायक ! वर (दुलहा) के ताऊ-बाप को कोथली का (थैली का), (जिसमें विवाह समय में रुपए खर्च करने हेतु रखे जाते हैं।) यश देना, इसका आशय है, इस थैली को रुपयों से सर्वदा भरी हुई रखना । वे अपने रुपयों का (धन का) भली प्रकार से उदारता पूर्वक उपयोग कर आनन्द लाभ प्राप्त करें । धन की उत्तम प्रकारों से अर्थात् खाने-पहनने, दूसरों के आदर सत्कारों में खर्च करें, जिससे उनका अपने सगे सम्बन्धी परिवार, इष्ट मित्रों में यश प्राप्त हो । हे विनायक ! वर (बींद) के चाचा और भाइयों को उनकी भुजा का बल प्रदान करना अर्थात् उनकी भुजा बल की सहायता का यश मिले । हे विनायक ! वर (दुलहा) की दादी और माँ को जीभ सम्बन्धी यश देना । वे मीठी वाणी बोलें और नम्रता पूर्वक व्यवहार करती रहें, जिससे पूरे कुटम्ब-परिवार में सरसता (मीठापन) बना रहे । हे विनायक ! वर (दुलहा) के नाना-मामा को भात

(मायरा) में यश देना। हे विनायक! वर (दुलहा) की भूवा-बहिन का ग्रारता में यश देना।

(साभार डॉ० मनोहरजी शर्मा के कल्याण में प्रकाशित लेख से संग्रहित)

विघ्नों को दूर करने वाले, उत्तम कार्यों की सिद्धि प्रदान करने वाले, चिंता हरण गणेशजी के चरणों में बारंबार प्रणाम निवेदन है।

卐

सोपान २४

ग्रन्थ समापन प्रार्थना, स्वस्त्ययन, सर्वमङ्गल-कामना, ग्रन्थकार का परिचय, भविष्य कामना निवेदन

प्रार्थना

नमो व्रातपतये नमो गणपतये। नमः प्रमथपतये।
नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्नविनाशने
शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमो नमः॥

'व्रात (देव समूह) के नायक को नमस्कार, गणपति को नमस्कार। प्रमथपति (शिव के गणों के अधिपति) को नमस्कार, लम्बोदर को, एकदन्त को, विघ्नविनाशक को, शिवजी के पुत्र को तथा श्री वरद मूर्ति को नमस्कार है।'

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवो नमो नमो व्रातेभ्यो
व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो
नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः॥

(शुक्ल यजुर्वेद १६।२५)

'देवानुचर गण-विशेषों को, विश्वनाथ महाकालेश्वर ग्रादि की तरह पीठ भेद से विभिन्न गणपतियों को, सङ्घों को, सङ्घपतियों को, बुद्धिशालियों को, बुद्धिशालियों के परिपालन करने वाले उनके स्वामियों को, दिगम्बर-परमहँस-जटिलादि चतुर्था श्रमियों को तथा सकलात्मदर्शियों को नमस्कार है।'

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरूर्न द्वयाविनः।
विश्वाइदस्माद् ध्वरसो वि वाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते॥

(ऋग्वेद २।२३।५)

'हे सर्वोत्तम रक्षा करने वाले ब्रह्मणस्पति! ग्राप जिसके रक्षक होते हैं, उसको कोई किसी भी प्रकार से दुःख कष्ट नहीं पहुँचा सकता है। पाप भी उसको

कोई पीड़ा नहीं दे सकते हैं, शत्रु भी उसको नहीं मार सकते हैं, कोई भी दुष्ट उसको नहीं सता सकते हैं। उसको किसी भी प्रकार से हानि पहुँचाने वाले समस्त हानिकारकों को आप दूर भगा देते हैं।'

देवाश्चित्ते असुर्यं प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः।
उस्रा इव सूर्योज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि ।।

(ऋग्वेद २।२३।१५)

'हे बलवान् बृहस्पति ! ज्ञानी देवताओं ने आपके पास से ही यज्ञों में स्थान प्राप्त किया है। तेजस्वी सूर्य जिस प्रकार किरण उत्पन्न करता है, वैसे ही आप सम्पूर्ण स्तोत्र उत्पन्न करते हैं (अर्थात् आप ही स्तोत्रों के उत्पादक हैं)।'

यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति स वैश्रवणोपभो भवति।
यो मोदक सहस्रेण यजति स वाञ्छित फलमवाप्नोति।........
सूर्यग्रहे महानद्याः प्रतिमासंनिधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति।

'हे गणपति महाराज ! जो नव-दूर्वादल के द्वारा आपकी पूजा करता है, वह कुबेर के समान धनवान् हो जाता है। जो आपको एक सहस्त्र मोदकों (एक हजार लड्डूओं) का नैवेद्य रूप में भोग लगाता है, उसको मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है। जो सूर्यग्रहण के समय महानदी में अथवा आपकी प्रतिमा के सामने आप श्री गणेशजी के मन्त्र का जप करता है, उसको मन्त्रसिद्धि प्राप्त हो जाती है।'

अनन्तचिद्रूपमयं गणेशं ह्यभेदभेदादिविहीनमाद्यम् ।
हृदि प्रकाशस्यधरं स्वधीस्थं तमेकदन्तं शरणंव्रजामः ।।
विश्वादिभूतं हृदि योगिनां वै प्रत्यक्षरूपेण विभ्रान्तमेकम् ।
सदानिरालम्ब समाधिगम्यं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।
यदीयवीर्येण समर्थभूता माया तया संरचितंच विश्वम् ।
नागात्मकंह्यात्मतया प्रतीतं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।
सर्वान्तिरे संस्थितमेकगूढं यदाज्ञया सर्वमिद विभाति ।
अनन्तरूपं हृदि बोधकं वै तमैकदन्तं शरणं व्रजामः ।।
यं योगिनो योगबलेन साध्यं कुर्वन्ति तं कः स्तवनेन नौति ।
अतः प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।

'जो भगवान गणेश अनन्त हैं, चेतन रूप हैं, अभेद और भेद आदि से रहित और सृष्टि के आदि कारण हैं, अपने हृदय में जो सदा प्रकाश धारण करते हैं तथा अपनी ही बुद्धि में स्थित रहते हैं, उन एकदन्त श्री गणेशजी की शरण में हम जाते हैं। जो संसार के आदि कारण हैं, योगियों के हृदय में अद्वितीय रूप से साक्षात् प्रकाशित होते हैं और निरालम्ब समाधि के द्वारा ही जानने योग्य हैं, उन एकदन्त गणेशजी की शरण में हम जाते हैं। जिनके बल से माया समर्थ हुई है और उसके द्वारा यह संसार रचा गया है, उन आत्मरूप से प्रतीत होने वाले नामरूपधारी एकदन्त श्री गणेशजी की शरण में हम जाते हैं। जो सब लोगों के अन्तःकरण में अकेले गूढ़ भाव से स्थित रहते हैं, जिनकी आज्ञा से यह जगत् विराजमान है; जो अनन्तरूप हैं और हृदय में ज्ञान देने वाले हैं, उन एकदन्त श्री गणेश की शरण में

हम जाते हैं। जिनको योगीजन योग बल से साध्य करते (जान पाते) हैं, स्तुति द्वारा उनका वर्णन कौन कर सकता है? इसलिए हम उनको केवल प्रणाम करते हैं, वे हमें सिद्धि प्रदान करें, उन प्रसिद्ध एकदन्त की शरण में हम जाते हैं।'

इस भाँति से सभी कार्यों के निर्विघ्न सिद्ध सम्पन्न होने के लिए आपके द्वादश (बारह) नामों के स्मरण नमन प्रार्थना रूप में कई एक स्तोत्र प्राप्त होते हैं और भक्त आस्तिक मनुष्य उनका अनेक कार्यों में प्रयोग करते हैं और सिद्धियाँ भी प्राप्त होती हैं।

(१)

प्रथम वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गज वक्त्रं चतुर्थकम्।।
लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्ठमम्।।
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्।।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिः प्रजायते।।

'प्रथम वक्रतुण्ड, द्वितीय एकदन्त, तृतीय कृष्णपिङ्गाक्ष, चतुर्थ गजवक्त्र, पंचम लम्बोदर, छठा विकट सातवाँ विघ्नराज, आठवाँ धूम्रवर्ण, नौवाँ भालचन्द्र, दशवाँ विनायक, ग्यारहवाँ गणपति, बारहवाँ गजानन। जो मनुष्य इन बारह गणेशजी के नामों का तीनों संध्या कालों (प्रातः, मध्याह्न, सायं) में पाठ (स्मरण) करता है, उसको किसी भी कार्य में विघ्न, भय नहीं होता और उसको सभी कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है।

(२)

सुमुखश्चैक दन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।

'१ सुमुख, २ एकदन्त, ३ कपिल, ४ गजकर्ण, ५ लम्बोदर, ६ विकट, ७ विघ्ननाशक, ८ विनायक, ९ धूम्रकेतु, १० गणाध्यक्ष, ११ भालचन्द्र, और १२ गजानन, इन नामों का विद्यारम्भ के समय, विवाह के अवसर पर, किसी नगर अथवा नए निर्माण किए हुए भवन (मकान) में प्रवेश के समय, यात्रा में कहीं बाहर जाते समय, संग्राम के अवसर पर अथवा किसी प्रकार की कोई विपत्ति आने पर स्मरण करने वाले के सभी उद्देश्य कार्यों में विघ्न दूर हो जाते हैं।

गणेश गीता में भगवान गणपति आप स्वयं का ही कथन है—

ध्यानाद्यै रुपचारैर्मां तथा पञ्चामृतादिभिः।।
स्नान वस्त्राद्यलंकार सुगध धूप दीपकैः।
नैवेद्यैः फल ताम्बूलैर्दक्षिणाभिश्च योऽर्चयेत्।।
भक्त्यैकचेतसा चैव तस्येष्टं पूरयाम्यहम्।

एवं प्रतिदिनं भक्त्या मद्भक्तो मां समर्चयेत् ।।
अथवा मानसीं पूजां कुर्वीत स्थिर चेतसा ।
अथवा फल पत्राद्यैः पुष्पमूल जलादिभिः ।।
(गणेश गीता ७।६-९)

जो मनुष्य ध्यान आदि, पञ्चामृत आदि तथा स्नान, वस्त्र, अलंकार, सुगध, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, ताम्बूल और दक्षिणा आदि उपचारों द्वारा भक्तियुक्त एकाग्रचित्त से मेरी अर्चना करता है, मैं उसका अभीष्ट पूर्ण करता हूँ। मेरा भक्त इसी प्रकार प्रतिदिन भक्तिभाव से मेरी पूजा करे। अथवा सुस्थिर चित्त से मानसी पूजा करे या फल, पत्र, पुष्प, मूल और जल मिष्टान्न (लड्डू) के द्वारा प्रयत्नपूर्वक मेरी अर्चना करे।'

अनेक शास्त्रों में अनेक स्थानों में लिखा हुआ प्राप्त होता है—

भगवान गणेशजी परमात्मा की बुद्धिरूप में प्रकट हुए हैं। अतः भावना से पूर्ण उपासना करने वाला भक्त गणेशजी के सगुण स्वरूप में अपना ध्यान स्थापित करता हुआ उनकी समष्टि बुद्धि वृत्ति से चित्त को लगा लेता है। और उसके द्वारा सब प्रकार के दिव्य ऐश्वर्यों को प्राप्त कर के सांसारिक कार्यों से मुक्ति भी प्राप्त कर लेता है।

परं धाम परं ब्रह्म परेशं परमोश्वरम् ।
विघ्ननिघ्नकरं शान्तं पुष्टं कान्तमनन्तकम् ।।
सुरासुरेन्द्रैः सिद्धैन्द्रैः स्तुतंस्तौमि परात्परम् ।
सुरपद्मदिनेशं च गणेशं मङ्गलायनम् ।।
(ब्रह्मवैवर्त पुरा. १२१।१०३-४)

'जो परमधाम, परब्रह्म, परेश, परम ईश्वर, विघ्नों के विनाशक, शान्त, पुष्ट, मनोहर और अनन्त हैं प्रधान-प्रधान सुर, असुर और सिद्ध जिनका स्तवन करते हैं, जो देवरूपी कमल के लिए सूर्य और मंगलों के आश्रय-स्थान हैं, उन परात्पर गणेशजी की मैं स्तुति करता हूँ।'

एकदन्ताय विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नोदन्ती प्रचोदयात् ।

'हम एकदन्त परम पुरुष भगवान् गणपति को जानते हैं। और उन वक्रतुण्ड भगवान् का हम ध्यान करते हैं। वे हमारी बुद्धि को सत्कार्यों के लिए प्रेरित करें।'

परमपिता परमात्मा भगवान् गणेशजी के चरणों में नमन, स्तवन करके कठिन और असंभव प्रतीत होने वाले कार्यों का आरम्भ करने पर कार्य सिद्धि प्राप्त होने के अनेक प्रमाण उदाहरण उपलब्ध होते हैं। सन् १९६४ ईस्वी में जीविकोपार्जन भार से मुक्त होने के पश्चात् वानप्रस्थाश्रम ग्रहण कर लिया और रात-दिन लिखने-पढ़ने के कार्यों में व्यस्त रहने वाला मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हुआ, अपनी भावी जीवन नैया को डावांडोल स्थिति में देखकर निराश एवं उदास हो गया। उस समय दयासिंधो भगवान् आपने ही आशा की किरणरूपी प्रकाश प्रेरणा देते हुए आशीर्वाद स्वरूप इस मन्त्र की ओर ध्यान प्रदान कराया —

उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवांतु
ते दक्षतातिं कृणोमि ।
आ हि रोहेमामृतं सुखं रथम्
अथ जिर्विर्विदथ मा वदासि ।।

(अथर्व. ८।१।६)

भावार्थ—'हे पुरुष ! तुम जीवन से कैसे निराश हो रहे हो, उद्यमी पुरुष कभी जीवन में निराश होकर मृत तुल्य नहीं होते । हे दिव्य महारथी ! तुम भावी जीवन के प्रति दृढ संकल्प होकर खड़े हो जाओ और परमपिता परमात्मा के गुण चरित्रों का बार-बार पठन-लेखन करो । फिर यह निराश हुआ भावी जीवन ही उत्तम कार्य सफलता में परिणत होकर तुमको अमृत पान कराएगा ।'

आपके इस प्रेरणा आशीर्वाद को शिरोधार्य किया । किन्तु मुझ स्वल्प बुद्धि मानव में परमपिता भगवान आपके चरित्र गुणों के पठन-मनन, तात्विक विषयों के समझने और लिखने की सामर्थ्य कहाँ—जबकि माता सरस्वती, सृष्टिकर्ता ब्रह्मा के भी लिए पूर्णरूप से कहना संभव नहीं । किन्तु तब ही 'पारिजात-हरण' नामक अभिनव काव्य में लिखे हुए एक श्लोक का स्मरण हो आया—

पित्रापि मेऽगम्यतम प्रभावं
भवत्यसावप्यसती मदुक्तिः ।
किंजात पक्षाऽपि हरे कदाचित्
पिपीलिका चुम्बति चन्द्र विम्बम् ।।

(पारिजात हरण)

(नारदजी ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा) हरे ! आपका प्रभाव मेरे पिता ब्रह्माजी के लिए भी अगम्य है—उसे जान लेना उनके लिए कठिन ही नहीं, असंभव है । ऐसे अगम्य प्रभावशाली आप परमेश्वर के विषय में मैंने जो कहा है, जो भी स्तुति करने की धृष्टता की है, वह मेरी उक्ति क्या समुचित हो सकती है ? नहीं-नहीं, उसमें आपके गुण वर्णन की क्षमता कहाँ है ? वह तो सर्वथा अनुचित, असमर्थ; असती अर्थात् अनुचित है । क्या चींटी के पंख निकल आने पर भी वह कभी चन्द्र-मण्डल का चुम्बन कर सकती है ? कदापि नहीं । इसी प्रकार यह मेरी उक्ति आपके गुणप्र-भाव का निरूपण कदापि नहीं कर सकती । किन्तु परमपिता परमात्मा देव, आपकी कृपा प्रेरणा दयाभाव का आदेश तथा आशीर्वाद मानकर प्रथम 'शिव-तत्त्व-दर्शन', द्वितीय शक्ति-तत्त्व-दर्शन', तृतीय 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन', तथा चतुर्थ 'ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन', नामक ग्रन्थों का लेखन प्रकाशन हुआ, सनातन धर्मावलम्बी जगत् में उनका अत्यन्त ही विशिष्ट रूप में समादर किया गया । इसी प्रकार का यह पञ्चमग्रन्थ 'गणेश-तत्त्व-दर्शन', आपकी वाङ्मयी पूजा के पुष्प रूप में लिखा गया है । भगवान गणपति देव के स्वरूप विविध अवतार लीला चरित्रों, मान्यताओं स्थापनाओं के विषय में प्रचुर साहित्य उपलब्ध है । यदि सब ही साहित्य का प्रयोग करते हुये भगवान गणपति के विषय में ग्रन्थ निर्माण किया जाए तो सैकड़ों वर्षों में भी पूर्ण होना संभव नहीं हो सकता और वृद्ध अवस्था धर्मवश अब अधिक कार्य क्षमता भी नहीं रही । प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा करके तीन-चार बार बैठ-

बैठ कर इसको पूर्ण करने का प्रयास किया है। परमपिता भगवान् गणेशजी का ही यह अनुग्रह है, जो उन्होंने इतना करा दिया है।

राम कृपा बिन कछु होता नाहीं।
राम कृपा कछु दुर्लभ नाहीं ।।

हे भगवान गणेशजी! जिस प्रकार की प्रेरणा-समय-समय पर प्रदान करने का अनुग्रह आपने इस चरण किंकर पर किया है, उसी का यह प्रतिफल आपके ही श्री चरण कमलों में सादर समर्पित है। इसमें अनेकों मूल त्रुटियाँ भरी हुई हैं, वह सब मेरे स्वल्प बुद्धि के कारण ही रही हैं, इसके प्रति आप मुझ पर करुणाभाव करके अवश्य क्षमा करें।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन।
यत्पूजितं मया देव, परिपूर्णं तदस्तु मे ।।
यदक्षर पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।।

'हे भगवान जनार्दन (गणेशजी)! मेरी यह पूजा मन्त्र, विधि, क्रिया एवं भक्ति से हीन है, इसको आप ही पूर्ण करेंगे। इसमें प्रयुक्त जो अक्षर पदभ्रष्ट एव मात्राहीन हों, उन्हें भी हे भगवान परमेश्वर (गणपति देव)! आप क्षमा करें।

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरण मम।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ।।

'हे भगवान् गणपतिदेव! मुझे न आपका आह्वान करना आता है और न आपकी पूजा की विसर्जन क्रिया ही आती है। अतः हे परमब्रह्म परमेश्वर गणेशजी महाराज! आप मुझे क्षमा करें। आपकी शरण ग्रहण करने के अतिरिक्त मेरे पास कोई भी अन्य मार्ग नहीं है। अतः हे भगवान् विघ्नेश्वर! हे प्रभो! आप दया भाव से मेरी रक्षा करें।'

पिता त्वं माता त्वं दयिततनयस्त्वं प्रियं सुहृत्
प्वमेव त्वं मित्रं गुरुरपि गतिश्चासि जगताम्।
त्वदीयस्त्वद्भृत्यस्तव परिजनस्त्वद्गतिरहं
प्रपन्नश्वैवं सत्यहमपि तवैवास्मिहिभरः ।।

'हे भालचन्द्र! आप ही विश्व के माता-पिता, प्रिय पुत्र, प्यारे सुहृद, मित्र, गुरु और गति हैं, मैं आपका ही सम्बन्धी, आपका ही दास, आपका ही परिचारक, आपको ही (एकमात्र) गति मानने वाला और आपके ही शरण हूँ। इस प्रकार अब आप पर ही मेरा समस्त भार है।'

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।

'हे भगवान् तुम ही मेरी माता और पिता हो, तुम ही भाई और सखा हो, तुम ही मेरी विद्या व धन हो, तुम ही मेरे सर्वस्व हो।'

योवा अनन्तस्य गुणाननन्तान-
नुक्रमिष्यन् स तु बालबुद्धिः ।
रजांसि भूमेर्गणयेन् कथंचित्
कालेन नैवाखिलशक्तिधाम्नः ।।

(श्रीमद्भागवत ११।४।२)

'हे भगवान ! आप अनन्त हैं, आपके गुण भी अनन्त हैं । जो यह सोचता है कि मैं आपके गुणों की गणना कर लूँगा, वह मूर्ख है । बालक की बुद्धि जैसी बुद्धिवाला है । यह तो संभव है कि कोई किसी प्रकार कभी पृथ्वी के धूलिकणों की गणना कर लें, परन्तु समस्त शक्तियों के आश्रय भगवान आपके अनन्त गुणों का कोई कभी किसी प्रकार से पार नहीं पा सकता है ।'

तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर ।
यादृशः त्वं महादेव तादृशाय नमो नमः ।।

हे महान् ईश्वर ! आपका तत्त्व कैसा है, यह जानने में नहीं आता है । हे महादेव (बड़े देव) गणपति ! जैसा देखने में आता है उसी को नमस्कार है ।'

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ।।

'हे भगवान् देवेश्वर ! आप गोपनीय से भी गोपनीय वस्तु की रक्षा करने वाले हो, मेरे इस जप (पूजा) को ग्रहण करो । आपकी कृपा प्रसाद से मुझे सिद्धि प्राप्त हो ।'

हे परमपिता परमेश्वर ! चिन्ताहरण ! विघ्नविनाशन ! मंगलमूर्ति ! गणनायक ! वरदमूर्ति ! गजकर्ण ! लम्बोदर ! वक्रतुण्ड ! एकदन्त ! देवगुरु ! ब्रह्मणस्पति ! महाराज मैं तो आपकी शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ । इसके अतिरिक्त और क्या निवेदन करूँ, आपका नाम लेने और स्मरण मात्र से सभी कार्य निर्विघ्न पूर्ण रूप से सम्पन्न हो जाते हैं । और यह कार्य तो भगवान् गजानन, गणपति देव, सिद्धि-बुद्धि के पतिदेव, क्षेम-कुशल के पितृदेव आपका ही है । मुझे तो पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास है, आप ही अपने इस यज्ञ को मेरे पर अनुग्रह करके अवश्य सानन्द उत्तमतापूर्वक शीघ्र सम्पन्न करायेंगे ।

भगवान् गणेशजी मैं बार-बार आपके चरणों में यही प्रार्थना निवेदन करता हूँ । इस शुभ यज्ञ कार्य को निर्विघ्न शीघ्र पूर्ण कराने की दया करें ।

वक्रतुण्ड महाकाय, सूर्यकोटि समप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव, सर्वकार्येषु सर्वदा ।।

ॐ अनेन पूजनेन सच्चिदानन्दघन परमात्मा सर्वेश्वर मङ्गलमूर्ति, विघ्नेश्वर, गजानन, विनायक, शूपकर्ण, मोदकप्रिय, कपित्थ-जम्बूफलप्रियाय, एकदन्त, वरदमूर्ति प्रीयतां न मम । ॐ ब्रह्मस्वरूप श्री गणपतिदेवार्पणमस्तु ।। श्री शुभमस्तु ।। श्रीरस्तु ।।

स्वस्त्ययन

हरि: ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा विश्ववेदा: ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽरिष्टनेमि: स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।।१

'वृद्धश्रवा (बड़ी कीर्तिवाले) इन्द्र हमारे निमित्त स्वस्तिविधान करें, सर्वज्ञ पूषा हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, अरिष्टनेमि तार्क्ष्य (तार्क्ष्य-रथ अर्थात् जिस रथ की नेमि की गति कोई भी रोकने में समर्थ नहीं है उसको ही अरिष्टनेमि तार्क्ष्य कहते हैं. यहां रथरूप से वर्णन हुआ है ।) हमारे निमित्त स्वस्ति का विधान करें । बृहस्पति हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें ।१।

ॐ पय: पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधा: ।
पयस्वती: प्रदिश: सन्तु मह्यम् ।।२।।

पृथिवीदेवी हमारे निमित्त अर्थात् हमको देने के लिए रस धारण करें, ओषधियाँ भी हमारे निमित्त रस धारण करें, स्वर्ग लोक और अन्तरिक्ष लोक भी हमारे निमित्त रस धारण करें अर्थात् आहुति के परिणाम से पृथिवी आदि हमको भगवत्कृपा से अभीष्ट फल देने वाले हों ।२।

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्यादेवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।।३।।

(१) अग्नि देवता की प्रार्थना करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(२) वायु देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(३) सूर्य देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(४) चन्द्रमा देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(५) वसु देवताओं का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(६) रुद्र देवताओं का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(७) आदित्य देवताओं का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(८) मरुत देवताओं का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(९) विश्वेदेवा देवताओं का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(१०) बृहस्पति देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(११) इन्द्र देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।
(१२) वरुण देवता का ध्यान करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ।।३

ॐ यो देवोऽग्नो योऽप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश: ।
य ओषधीषु यो वनस्पतीषु तस्मै देवाय नमो नम: ।।४

'जो सर्वशक्तिमान् पूर्ण ब्रह्म परम देव अग्नि में है, जो जल में है, जो समस्त लोकों में अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट हो रहे हैं, जो ओषधियों (अन्न आदि) में है, और जो वनस्पतियों में है, अर्थात् जो सर्वत्र परिपूर्ण है, जिनका अनेक प्रकार से पहले वर्णन हो चुका है उन परमदेव परमात्मा को नमस्कार है, नमस्कार है ।।४

त्रयो देवा एकादश त्रयस्त्रिँ शाः सुराधसः।
बृहस्पतिपुरोहिता देवस्य सवितुः सर्वे देवा देवैरवन्तु मा ।।५
(शुक्ल यजु. संहिता. २०।११)

त्रिगुण एकादश अर्थात् तैंतीस सुसम्पन्न देव, जिनमें बृहस्पति अग्रगण्य हैं सविता या परमात्मा की आज्ञा में वर्तमान होकर अन्य देवों के साथ हमारी रक्षा करें ।५

तत्पुरुषाय विद्महे. वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।।६।।

भगवान् तत्पुरुष सर्वप्रथम पूज्य गणेशजी को हम शास्त्र गुरुमुख द्वारा जानते हैं। उन वक्रतुण्ड महाराज गणपति का ध्यान करते हैं । वह एकदन्त विद्या-बुद्धि के अधिष्ठाता हमको उत्तम ज्ञान-ध्यान के लिए प्रेरणा प्रदान करें ।.६

ॐ जलबिम्बाय विद्महे, नीलपुरुषाय धीमहि ।
तन्नो वरुणो प्रचोदयात् ।।७।।

श्री वरुण देवता को हम जल रूप में गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं । हम उस नील पुरुष का ध्यान करते हैं। वह वरुण देवता ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें । ।।७।।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिःपृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवा शान्तिः सर्वँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।८।।

द्युलोक रूप शान्ति और अन्तरिक्षरूप शान्ति, पृथिवी रूप शान्ति, जल रूप शान्ति,औषधरूप शान्ति, वनस्पति रूप शान्ति, विश्वेदेवा सम्बन्धी शान्ति व सर्व देवरूप शान्ति, त्रयी लक्षण युक्त शान्ति, सर्व जगत् रूप शान्ति, जो स्वरूप से ही शान्ति शान्ति है, वह हमारे प्रति हों अर्थात् ये सब हमको शान्ति रूप हों।.८।।

ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु सर्वारिष्ट शान्तिर्भवतु ।
अनेन गणेश-तत्त्व-दर्शनाख्येन ग्रन्थेन भगवान् विघ्नेश्वर मङ्गलमूर्ति, सिद्धिसदन, गजानन्द प्रीयतां न मम ।। ॐ भगवान् गणेशार्पणमस्तु ।। श्री शुभमस्तु ।।श्रीरस्तु ।।

सर्व मङ्गल कामना

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ।।

इस विश्व में सब सुखी हों, सब नीरोग हों, सब कल्याण मार्गों का दर्शन करें । कोई भी दुःख को प्राप्त न हो ।,

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वः भद्राणि पश्यतु ।
सर्वः सद् बुद्धिमाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु ।।

सब कठिनाइयों से, विपत्तियों से त्राण पायें, सब मङ्गलों का दर्शन करें, सब सद्बुद्धि को प्राप्त हो, और सब सर्वदा सर्वत्र आनन्द लाभ करें ।

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात् ।
शान्तः मुच्येत् बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेत् ।।

'दुष्टजन सज्जन हो जाएँ, सज्जन शान्ति को प्राप्त करें, शान्तजन बंधन से मुक्त हो जाएँ और मुक्तजन दूसरों को बन्धन से मुक्त करें ।'

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां न्यायोयेन मार्गेण महीं महीषाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।।

'प्रजाजनों का कल्याण हो, राज्याधिकारी न्याययुक्त मार्ग से पृथ्वी पर शासन करें । गौओं एवं ब्राह्मणों का सर्वदा मंगल हो, सम्पूर्ण लोक सुखी हो जाएँ ।'

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी शस्यशालिनी ।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ।।

'बादल समय पर वर्षा करें, पृथ्वी धान्य से समृद्ध हो । यह देश (भारत वर्ष) क्षोभ रहित हो जाए, ब्राह्मण, सन्त (महात्मा) निर्भय हो जाएँ ।'

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां
ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथोदिया ।
मनश्च भद्रं भजता दधोक्षजे
आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी ।।

'विश्व ब्रह्माण्ड का कल्याण हो, दुष्ट लोग शान्त हो जायें, सभी प्राणी अपनी बुद्धि के द्वारा एक दूसरे का भला सोचें, मन सर्वदा भलाई और मंगल का चिन्तन करे एवं हम सब की बुद्धि बिना किसी हेतु के भगवान् में आविष्ट हो जाए ।'

ॐ असतो मा सद्गमय । तमसो मा ज्योतिर्गमय । मृत्योर्माऽमृतंगमय ।।
शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ।।

असत् से मुझे सत् की ओर ले जाओ, अन्धकार से प्रकाश में ले जाओ, मृत्यु से बचाकर मुझे अमर कर दो ।

क्षमेऽहं सर्वान् वै जीवान् ते च क्षाम्यन्तु मां सदा ।
मैत्री स्यात्सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्तिकेनचित् ।।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा करें । सब भूतों से मेरी मित्रता हो, किसी से द्वेष न हो ।

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम् ।।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

मैं राज्य की, स्वर्ग की, मोक्ष की भी कामना नहीं करता हूँ, मैं कामना करता हूँ कि दुःख से पीड़ित प्राणियों का दुःख नष्ट हो ।

ॐ सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ।।
ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्ति ।।

'हम सब परस्पर एक दूसरे की रक्षा करें, विरोध को छोड़कर सुखों का भोग करें, हमारी विद्या तेजस्वी हो, हम आपस में द्वेष न करें।'

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्युते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ॐ वह (परब्रह्म) पूर्ण है और वह (कार्यब्रह्म) भी पूर्ण है, क्यों कि पूर्ण से पूर्ण की ही उत्पत्ति होती है तथा (प्रलयकाल में) पूर्ण (कार्य ब्रह्म) ही बच रहता है। त्रिविध ताप की शान्ति हो।

ॐ विश्वा निदेव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव॥

'हे सविता देव! हमारे सब दुःखों को दूर करो। जिस से हमारा कल्याण (भला) हो, वही प्राप्त कराओ। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

भगवान् गणेशजी की आरती

आरती गजवदन विनायक की।
सुर-मुनि-पूजित गणनायक की॥टेक॥
एकदन्त शशिभाल गजानन,
विघ्नविनाशक शुभगुण-कानन,
शिवसुत वन्द्यमान-चतुरानन,
दुःख विनाशक सुखदायक की॥सुर.
ऋद्धि-सिद्धि-स्वामी समर्थ अति,
विमल बुद्धि दाता सुविमल-मति,
अघ-वन-दहन, अमल अविगत-गति,
विद्या-विनय-विभव-दायक की॥सुर.
पिङ्गलनयन, विशाल शुंडधर,
धूम्रवर्ण शुचि वज्रांकुश-कर,
लम्बोदर बाधा-विपत्ति-हर,
सुरवन्दित सब विधि लायक की॥सुर.

ग्रन्थ लेखक परिचय एवं ग्रन्थ समाप्ति

इति श्री भारतवर्षे राजस्थान प्रान्तीय झुन्झुनू मण्डलान्तर्गत प्राचीन खेतड़ी नगर निवासिना भूतपूर्व खेतड़ी राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् श्री रूड़मल्ल वलदेव शर्माणां प्रपोत्रेण राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् धर्माध्यक्ष श्री महासुख शर्मणां पौत्रेण राजकीय संस्कृत विद्यालय प्रधानाचार्य राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् श्री रघुनाथ शर्मा शास्त्रीणां आत्मजः सीकर मण्डलान्तर्गत भूतपूर्व खण्डेला राज्यपण्डित नन्दकुमार शर्मणामात्मजा श्रीमती भगवती व्यास्तु गर्भजः विविध स्वरूपधारी श्री भगवान् परब्रह्म परमात्मा विघ्नेश्वर मंगलमूर्ति सर्वदेवाग्र

पूज्य गणपतिदेव चरणानुरागी गौड़ वंशावतंस त्रिप्रवरस्य, माध्यन्दिनी शाखा, शुक्लयजुर्वेदीय, कात्यायनी सूत्र, गोतम गोत्रोद्भवेन वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मणा शास्त्रिणा विरचित 'गणेश-तत्त्व-दर्शनम्' इत्याख्यस्य ग्रन्थस्य चतुर्विंशोऽध्याय सम्वत् २०४१ विक्रमाब्दे भाद्रपद मासे शुक्लपक्षे ४ श्रीगणेश चतुर्थ्याम् तिथौ गुरुवासरे दिनांक ३० अगस्त मासे सन् १९८४ ईस्वीय, चित्रानक्षत्रे, शुभयोगे, तुला राशि स्थिते चन्द्रे कुम्भ राशि स्थिते सूर्ये ग्रन्थ सम्पूर्णम् ।।शुभमस्तु ।। श्री शुभंभूयात् ।। श्रीरस्तु ।।

श्रीगणेश-तत्त्व-दर्शन-माहात्म्य

गणेश गीता में भगवान् गणेशजी का कथन है—

येन येन हि रूपेण जनो मां पर्युपासते ।
तथा तथा दर्शयामि तस्मै रूपं सुभक्तित: ।।

(गणेशगीता ९।४०)

'जिस-जिस रूप में लोग मेरी उपासना करते हैं, उनकी उत्तम भक्ति से प्रसन्न होकर मैं उन्हें उसी रूप में दर्शन देता हूँ ।,

यो मां मूर्तिधरं भक्त्या मद्भक्त: परिसेवते ।
स मे मान्योऽनन्यभक्तिर्नियुज्य हृदयमपि ।।

(गणेशगीता ९।३)

'जो मेरा भक्त मुझ में अपना मन लगाकर अनन्य भक्ति रखते हुए प्रेमपूर्वक मुझ साकार ईश्वर का सेवन करता है, वह मेरे समादर योग्य है ।'

एवं ब्रह्मधियं भूपयो विजानाति देवत: ।
तुर्यामवस्थां प्राप्यापि जीवन्मुक्तिं प्रयास्यति ।।

(गणेशगीता १।६९)

'यदि दैव की अनुकूलता से वृद्धावस्था में भी ऐसी ब्रह्मबुद्धि प्राप्त हो जाती है तो वह भी जीवन्मुक्ति को प्राप्त हो जाएगा ।'

इदं ब्रह्मकरं स्तोत्रं सर्वपापप्रनाशनम् ।
सर्वकामप्रदं नृणां सर्वोपद्रवनाशनम् ।।

'यह स्तोत्र ब्रह्मभाव की प्राप्ति कराने वाला और समस्त पापों का नाश करने वाला है। मनुष्यों की समस्त मनोवांछित वस्तुओं का प्रदान करने वाला तथा समग्र उपद्रवों की शान्ति करने वाला है ।'

भविष्य कामना

न धर्मनिष्ठोऽस्मिन् चात्मवेदी
न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे ।
अकिंचनोऽनन्यगति: शरण्यं
त्वत्पादमूलं शरणं प्रपेदे ।।

'मैं न धर्मनिष्ठ हूँ, न आत्मज्ञानी हूँ और न आपके चरणों में भक्तिमान हूँ,

मैं तो अकिंचन हूँ, अनन्यगति हूँ, और हे शरणागत-रक्षक ! आपके चरण कमलों की शरण में आया हूँ ।'

दिवि वा भुविवा ममास्तु वासो
नरकेवां नरकान्तक प्रकामम् ।
अवधीरित शारदारविन्दो
चरणौते मरणेऽपि चिन्तयामि ।।

'हे नरकनाशक ! मैं चाहे स्वर्ग में, पृथ्वी पर या नरक में रहूँ, किन्तु शरत्कालीन कमलों को तिरस्कृत करने वाले आप के चरण-युगल को मरते समय भी स्मरण करता रहूँ ।'

स्वकर्मफलानिर्दिष्टां यां यां योान व्रजाम्यहम् ।
तस्या तस्या हृषिकेश त्वयि भक्तिर्दृढ़ास्तु मे ।।

'हे इन्द्रियों के सूत्रधार ! भगवान् हृषिकेश ! मैं अपने कर्मों के अनुसार जिस किसी योनि में जाऊँ, वहां आप से मेरा अटूट प्रेम बना रहे ।'

यं धर्मकामार्थविमुक्तिकामा
भजन्त इष्टां गति माप्नुवन्ति ।
किं त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं
करोतु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम् ।।

(श्री मद्भागवत ८।३।१९)

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की इच्छा वाले पुरुष जिनका भजन करते हुए अपनी अभीष्ट गति प्राप्त करते हैं, यही नहीं, जो उन्हें नाना प्रकार के योग सुदृढ़ शरीर प्रदान करते हैं, वे परमदयालु प्रभु मेरा उद्धार करें ।'

द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च ।
यदनुग्रहतः सन्ति न सन्ति यदुपेक्षया ।।

(श्रीमद्भागवत २।१०।१२)

'द्रव्य, कर्म, काल, स्वभाव और जीवादि भगवदनुग्रह के बल से ही स्थित हैं, यदि भगवान् थोड़ी सी भी उपेक्षा करदें तो कुछ भी शेष नहीं रहता ।' "कृपा विना सर्व-साधनानां न चोद्भव ।" अर्थात् कृपा के बिना किसी भी साधन की उत्पत्ति नहीं होती है ।

भक्ति मार्गे कृपा मात्रं कारणं परमुच्यते ।
तेनैव मार्गे सकलं सिद्धिमेति न संशय ।।

(शिक्षापत्र २४।१)

'भक्तिमार्ग में तो कृपा पात्रता ही उत्तम कारण है, इस कृपा से ही समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । इसमें संशय नहीं है ।'

न धनं न जनं न सुन्दरीं कवितां वा जगदीश कामये ।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे भवताद् भक्तिरहैतुकीत्वयि ।।

(चैत. शिक्षा. ४)

'हे जगदीश (गणेश) ! देखिए, मैं न धन चाहता हूँ, न जन चाहता हूँ,

न सुन्दर कविता ही चाहता हूँ। मैं तो चाहता हूँ, केवल आप में मेरी प्रत्येक जन्म जन्म में अहेतु की भक्ति हो जाए।'

मङ्गलमूर्ति !

मङ्गलमय हो, प्रभो !
बिना मांगे मङ्गल दोगे ही।
मेरी स्तुतियों के चरणों को
चरणों में लोगे ही ॥
दाता ! नियम निभाओगे तो
व्यर्थ नहीं माँगूँगा ।
निद्रालस्य निवारोगे तो
निर्विवाद जागूँगा ॥

भगवान् विघ्नविनाशन, मङ्गलमूर्ति, वरदायक, चिन्ताहरण गणपति, वक्रतुण्ड, विद्यानिधि, ब्रह्मणस्पति, विद्या, शुभसिद्धि प्रदाता, गणपति प्रियतां न मम। ॐ भगवान् भालचन्द्रार्पणमस्तु। शुभमस्तु।

ॐ शान्तिः ! ॐ शान्तिः !! ॐ शान्तिः !!!

卐

परिशिष्ट
गणेश-तत्त्व-दर्शन
आशीर्वाद, मङ्गल कामना तथा सम्मतियाँ

।। श्री शारदाचन्द्रमौलीश्वराय नमः ।।

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्रीशंकराचार्य महासंस्थानम्, दक्षिणाम्नाय श्री शारदा पीठम्, शृङ्गेरी-५७७१३९ (कर्नाटक)

डिट्टी संदर्भ २३६२ दिनांक २३-५-८५

पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्रीजी

सादर हरिस्मरण।

आपका पत्र मिला एवं गणेश-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ का संक्षिप्त परिचय भी। आचार्य चरण ग्रन्थ का विषय संग्रह जानकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। श्रीगणपतिजी के बारे में जानने योग्य सारी बातें वेद, पुराण और मन्त्रशास्त्र से एकत्र संग्रह करके प्रकाशन से गणेशभक्तों और तत्त्वजिज्ञासुओं को बड़ा लाभ होगा। आपने शिव-तत्त्व-दर्शन आदि अनेक ग्रन्थ लिखे। वे सभी शास्त्र की जानकारी देने वाले बड़े ही उपयोगी ग्रन्थ हैं। यह गणेश-तत्त्व-दर्शन भी वैसा ही है। श्री गुरु महाराज का आशीर्वाद है कि गणेश-तत्त्व-दर्शन शीघ्र प्रकाशित होकर भक्तों के कर कमलों को सुशोभित करे। इति। इसके साथ ही दूसरा पत्र और प्राप्त हुआ उसमें लिखा है। आपकी आशा, इच्छा गुरु महाराज के आशीर्वाद और श्री शारदा चन्द्र मौलीश्वर के प्रसादों से पूरा होवें। इस पत्र के साथ प्रसाद भेज रहा हूँ। इति

एच०एन० शर्मा
प्राइवेट सेक्रेटरी टू हिज होलीनेस
श्रीजगद्गुरु शंकराचार्य
शृंगेरी (कर्नाटक)

卐

श्रीचन्द्रमौलीश्वराय नमः

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यवर्य

श्री अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्री स्वामी शंकराचार्य परम्परागतं श्रीकामकोटि पीठाधिपति महासंस्थानम्, काञ्चीपुरम् (तमिलनाडु) का शुभाशीर्वाद

श्रीकाञ्चीक्षेत्रम् दिनांक २३-४-८५

श्रीपंडित रामप्रसादशर्मा शास्त्री विरलाग्राम (नागदा) मध्यप्रदेश नामासि। भवतां ५-४-८५ तम दिनांकिनो लेखः 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' संक्षिप्त परिचय सहितः प्राप्तः श्रीचरणसंन्निधो विज्ञापितश्च।

श्री चरणेज्ञातन्तद्ग्रन्थार्थमनुगृहितमाशीर्वचनमनेन लेखेन साके प्रेषिते विद्यते इति निवेद्यते ।

शिव-तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन, विष्णु-तत्त्व-दर्शन ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन, इतिनामभिः, चतुर ग्रन्थान् श्रुति-स्मृति-पुराणादि पुरस्सरं हिन्दीभाषायां रचितवता पंडित रामप्रसाद शर्मा महोदयेन विरचिते गणेश-तत्त्व-दर्शने गणेश स्यावतारः तस्य गजमुखत्वे कारणम्, प्रथम पूजाकारणम्, गणेशलोकः, महाभारत लेखनम्, गणेशभक्त कथा; सहस्रनामादि स्तोत्राणि अन्ये गणेशसंवन्धिनो विषयाश्च, ब्रह्मवैवर्त, नारद, ब्रह्माण्ड शिवादि पुराणानि प्रमाणीकृत हिन्दी भाषायां लिखितः ।

हिन्दी भाषाज्ञाःऽग्रति मुत्तमे ग्रन्थे पठित्वा श्रीगणेशमहिमानमवधार्य श्री गणेश मूर्तौ भक्तिमभिवर्धयन्तःऽइतिन्मुर्त्यनुग्रहात् सर्वाण्यपि मङ्गलान्यवाप्नुयुरित्याज्ञास्महे । नारायण स्मृतिः ।

आज्ञानुसारम्,
पी० नीलकान्तम् (इंग्रेजी में)
फार-श्रीपीठनिर्वाहक

卐

।। श्री सर्वेश्वरो जयति ।।

।। श्रीनिम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः ।।

श्रीमन्निखिल महीमण्डलाचार्य, चक्र-चूड़ामणि सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र द्वैताद्वैत प्रवर्तक, यतिपतिदिनेश, श्रीभगमन्निम्बार्काचार्यपीठविराजित श्रीनिम्बार्कतीर्थ, सलेमाबाद (अजमेर) राजस्थान का शुभाशीर्वाद ।

पंडित श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा निवद्ध 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ का अवलोकन किया। इस ग्रन्थ की विषय वस्तु एवं विवेचना शैली अनूठी है। इस ग्रन्थ में पौराणिक आधारों से पुष्ट गणेश स्वरूप का गहन मार्मिक एवं प्राच्य विज्ञान बुद्धि से तात्त्विक विवेचना प्रस्तुत की गई है। ग्रन्थ लेखक के पूर्व लिखित शिव; शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा तत्त्व प्रभृति ग्रन्थों की रचना के समान ही यह सद्य-रचना भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी - ऐसी आशा है। वैष्णव दर्शन, भक्ति और उपासना के क्षेत्र में यह गवेषणात्मक एवं ज्ञान-सारगर्भित कृति पंडितजी का स्तुत्य प्रयास ही नहीं, वरन् प्रामाणिक सफलता का प्रतीक है। भगवान् श्री सर्वेश्वर प्रभु से यही प्रार्थना है कि रचनाकार की सृजनात्मक-शक्ति की निरन्तर अभिवृद्धि हो। इति शुभम्।

श्रीचरणों की आज्ञा से
दिनांक २६-६-८५ निम्बार्काचार्य पीठ प्रबन्धकर्ता
डा० रामप्रसाद शर्मा

卐

श्रीनाथजी

अनन्त श्री विभूषित श्रीवल्लभ सम्प्रदायाचार्य जगद्गुरु गोस्वामी तिलकायत श्री गोविन्दलालदेवजी महाराज श्रीनाथ द्वारा का शुभाशीर्वाद।

पंडित श्रीरामप्रसादजी शर्मा शास्त्री सप्रेम नमस्कार।

आपका पत्र एवं साथ ही 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का संक्षिप्त परिचय प्राप्त होकर श्रीमानों को अवलोकन हुआ। यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि हमारे विशाल देश की हिन्दी भाषा धर्म प्राण जनता के हितार्थ आपने प्राचीन वेद धर्म-शास्त्रादि के आधार पर शिव-तत्त्व, विष्णु-तत्त्व तथा ब्रह्मा-तत्त्व की शृंखला में एक और अमूल्य कड़ी 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' जोड़कर अपने वानप्रस्थ आश्रम का पूर्ण सदुपयोग किया है।

पूज्यपाद श्रीतिलकायतजी महाराज श्री ने आपको इस नवीन धार्मिक कार्य की पूर्ण सफलता हेतु अपना हार्दिक शुभाशीर्वाद भिजवाने की आज्ञा प्रदान की है।

दिनांक ३०-४-८५ भवदीय

केम्प-पोद्दार हाउस डॉ० वल्लभदास तिवारी

बम्बई-५४ सचिव, खाशदफ्तर

卐 मोतीमहल, नाथद्वारा (राज०)

॥ श्री गोपालो जयति ॥

अनन्त श्री विभूषित श्रीगोपाल वैष्णव पीठाधीश्वर जगद्गुरु श्री विट्ठलेशजी महाराज मथुरा का आशीर्वाद

श्रीमान् पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री को शुभाशीष।

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ का संक्षिप्त परिचयात्मक पत्र पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। आपने इस ग्रन्थ का परिणयन करके मानव लोक का कल्याण पथ प्रशस्त किया है। क्योंकि गणेश साधना के बिना सभी मन्त्र विघ्नों से विघ्नित होते हैं। अतः कार्यारम्भ में गणपतिजी को प्रसन्न कर साधन करने से निर्विघ्न कार्य सफल सम्पन्न हो जाते हैं। अन्यथा निद्रा, आलस्य, भूख प्यास, क्रोध, लोभ, मोह, काम, प्रमाद, रोग आदि विघ्नों का आक्रमण हो जाता है। यह बात मेरु तन्त्र में भगवान् शिव ने श्री गौरी के प्रति कही है—

अथ विष्णो प्रवक्ष्यामि सूक्तं गणपतेश्च यत्।
यत्साधवं बिना सर्वे मंत्रा विघ्नैस्तु विघ्नताः॥
तस्मादादौ गणेशानं प्रसाद्य पुनराचरेत्।
देवता साधनं स तु निर्विघ्नेन प्रजायते॥
निद्रालस्यं क्षुधा लोभो मोहो क्रोधो मनोभवः।
प्रमादी रोग इत्थाद्या मन्त्रविघ्नकराः स्मृता॥ (मेरुतन्त्र)

अतः सर्वलोकोंपकारी इस ग्रन्थ की रचना से ज्ञात हो सकेंगी। और अभीष्ट कार्यों की सिद्धि में सहायक होगा। श्री गोपाल प्रभु आपका परिश्रम बनायेंगे। दिनांक १० अप्रेल १९८५ ई० भवदीय शुभेच्छु

卐 विट्ठलेश

अनन्त श्री विभूषित महान्त श्री स्वामी रामदास जी शास्त्री

महामण्डलेश्वर चार सम्प्रदाय आश्रम, अध्यक्ष भारत साधू-समाज, ब्रजमण्डल शाखा, वृन्दावन, सदस्य अखिल भारतीय धर्म संसद दिल्ली का शुभाशीर्वाद

सप्रेम जय श्री कृष्ण—शुभाशीर्वाद।

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' देखा, ग्रन्थ के चौबीस सोपानों को पढ़ने से ज्ञात हुआ कि भगवान् श्री गणेशजी के विषय में सर्व प्रथम हिन्दी में एक सर्वाङ्गपूर्ण सम्पूर्ण तात्त्विक विवेचना का बोध कराने वाला अनुपम ग्रन्थ हिन्दी भाषी जगत् को प्रदान हो रहा है।

भगवान् गणेश हमारे पञ्चदेवों में एक प्रमुख उपास्य देव हैं, संसार के सभी धर्मों मतों पन्थों और जातियों में किसी न किसी रूप नाम से पूजे जाते हैं, विघ्न विनाशक विनायक श्री गणेश की विष्णु, शिव और ब्रह्मा से भी प्रथम पूजा का विधान है। ये आदि देव हैं, जिनकी शिव-पार्वती के विवाह में भी सर्व प्रथम पूजा हुई थी।

सृष्टि के आरम्भ से आज तक सम्पूर्ण वाङ्मय में श्री गणेशजी की महिमा का विशदरूप से वर्णन प्राप्त होता है। वेद, पुराण, इतिहास, धर्म शास्त्र तो श्री गणेश भगवान् के मङ्गलमय चरित्रों का दिव्य वर्णन करते-करते नहीं अघाते।

किन्तु अनेक कथानकों के प्रचलित रहते हुए अभी तक श्री गणेशजी के तात्त्विक विवेचन के सम्बन्ध में जन-समाज में भ्रान्तियाँ ही फैली हुई थी। जिनका समुचित सप्रमाण समाधान इस 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ में किया गया है। ग्रन्थ के २४ चौबीस सोपानों में भगवान् गणेश विषयक सामग्री को खोज-खोजकर इस प्रकार से सजाया गया है कि पाठक सहज ही उन रहस्यों को सरलता से समझ पायेंगे। जिन में से अनेक बातें अत्यन्त निगूढ और रहस्यमयी हैं—जैसे 'भगवान् श्री कृष्ण ही गणेशावतार हैं', 'गणेश लोक परिचय', 'गणेश क्षेत्रों का परिचय', 'अनेक भक्तों तथा वेदव्यास के ऊपर कृपा', आदि अनेक ऐसे प्रसंग हैं—जिनको विद्वान् लेखक ने कठिन परिश्रम से प्रकाशित किया है।

पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री वृद्धावस्था-वानप्रस्थी जीवन में चल रहे हैं, परन्तु उनकी श्रुति और स्मृति भगवान् की कृपा से अभी भी शक्ति सम्पन्न हैं। इसके पूर्व भी पण्डितजी चार तत्त्व-दर्शन-ग्रन्थों का प्रणयन करके प्रकाशित करा चुके हैं। शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा तत्त्व पर भी दार्शनिक दृष्टि से उपादेय मन्थन किया गया है। ऐसे ग्रन्थों की महती आवश्यकता है।

भगवान् से प्रार्थना है कि पण्डित राम प्रसाद शर्मा शास्त्री को और अधिक शक्ति, कार्य क्षमता, स्वस्थ जीवन, दीर्घायुष्य प्रदान करें जिससे वे हिन्दू धर्म समाज के हितार्थ और अधिक मार्ग दर्शन हेतु विविध ग्रन्थों का निर्माण कर सकें।

दिनांक १७ अप्रेल १९८५

स्वामी रामदास शास्त्री महामण्डलेश्वर

卐

।। ॐ श्री गुरु वशिष्ठाय नमः ।।

महान्त ब्रह्मचारी श्री स्वामी युगलशरण जी महाराज

अध्यक्ष श्रीगोमुख वशिष्ठाश्रम, श्राबूपर्वत,

हार्दिक शुभाशीर्वाद। शत आयुष्यमान् भव !

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इसमें भगवान् गणेश विषयक प्राय: सभी विषय अनेक वेद, पुराण, धर्म-शास्त्रों में बिखरे हुए दुर्लभ मौलिक साहित्य को चुन-चुनकर संग्रह करके यथा स्थान, उत्तम सरल ज्ञान बोधगम्य रूप में संजोकर, ग्रन्थ रत्न में पिरोकर प्रस्तुत किया गया है, कि सुधी पाठक के हृदय में शीघ्र ही अपना स्थान बना सकेगा। इससे पूर्व आपके लिखे हुए, प्रकाशित शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों का सुधी विद्वानों द्वारा प्रशंसित हुए हैं। इसी प्रकार यह 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' भी सम्मान प्राप्त करेगा। परम पिता परमेश्वर से मैं आपके स्वस्थ उत्तम भविष्य की शुभ कामना निवेदन करता हूँ। दिनांक २० जून सन् १९८५।

महान्त युगल शरण

卐

।। श्री गणेशाय नमः ।।

गणेशजी के परमभक्त सिद्ध महापुरुष गुरुवर्य

श्री गोपालजी हर्षजी महाराज

बीकानेर

गणेश-तत्त्व अनुत्पन्न हुआ अलौकिक तत्त्व है। ऋग्वेद में श्रीगणपति की स्तुति करते हुए कहा गया है।

"न ऋते त्वत्क्रियते किंचनारे महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च ।।"

(ऋग्वेद. म. १०।९९।९)

'हे गणपते ! आपके बिना बाहर या भीतर, दूर या समीप कोई भी कर्म नहीं किया जा सकता है। हे ऋद्धि-सिद्धि और बुद्धि के एक छत्र रस वर्षाने वाले सम्राट ! आप अपने महान् अर्चनीय एवं विचित्र ज्ञान-प्रकाश को प्रकट कीजिए।'

अतः सृष्टि की रचना के लिये ब्रह्माजी ने महागणपति की विधिवत् स्तुति की। उन्होंने ही सबसे पहले महामुनि वेद व्यासजी को श्री विघ्नेश तत्त्व बतलाया शिव ने त्रिपुर का संहार करने के लिए गणपति का पूजन किया तो विष्णु ने श्री विघ्नेश की लीलाओं का वर्णन ब्रह्माजी के सामने किया जो 'क्रीड़ा-काण्ड के नाम से प्रसिद्ध है।

प्राचीन ऋषियों ने श्री गणेशजी के दो प्रकार से दर्शन किये हैं। गुरु शिष्य मिलन में एवं उपनिषद् में कथित प्रत्यक्ष तत्त्व रूप में श्री हर्ष कृत 'खण्डत-खण्ड-खाद्यम्' नामक ग्रन्थ में इसी को कर्ता, धर्ता और हर्ता बतलाया गया है।

पण्डित राम प्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'गणेश-तत्व दर्शन' नामक कृति की रचना कर पौराणिक गवेषणा जगत् में युगान्तकारी शोध सूक्ष्मेक्षिका का परिचय दिया है। चौबीस सोपानों में विभक्त इस ग्रन्थ रत्न के लेखक ने गणपति के विभिन्न

स्वरूपों का विवेचन करके तात्विक व्याख्या की है, जो नितान्त मौलिक और मूर्ति पूजा की स्थापना के प्रतिशोध कार्य ऐतिहासिक महिमा से मण्डित हो गया है।

लेखक द्वारा विनिर्मित तत्व-दर्शन अपने नाम के विराट ज्ञान-कोश हैं।

निःसंदेह इस युग में 'गीता प्रेस गोरखपुर संस्था' के पश्चात् हिन्दू धर्म के 'देव-तत्व-दर्शन' को जन साधारण के सामने उपस्थित कर लेखक स्वयं ही एक संस्था के रूप में प्रकट हुआ प्रतीत होता है। लेखक को पंच देवों साधना में लीन हो रहा देखकर महामुनि वेद व्यास का स्मरण होता है।

इस ग्रन्थ रचना से हिन्दू, बौद्ध, जैन धर्म संस्कृति में रुचि रखने वाले तथा शोधकर्ता लेखक के सर्वदा ऋणी रहेगे। मैं भगवान् गणेशजी के चरणों में लेखक के उत्तम भविष्य की कामना निवेदन करता हुँ। दिनांक ३ जून १९८५ ई०

卐

श्री गोपाल हर्ष

डा० जयमन्त मिश्र,

व्याकरण-साहित्याचार्य, एम. ए; पी. एच- डी;
कुलपति कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

तात्त्विक विवेचन कर्त्ता मनीषी पंडित रामप्रसाद शर्मा द्वारा प्रणीत शिव-तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन, विष्णु-तत्त्व-दर्शन, तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन से सुधी-समाज सुपरिचित हो चुका है। सम्प्रति गणेश-तत्त्व-दर्शन, विवेकी विद्वानों के विलोकनार्थ प्रज्ञावान् पंडित शर्मा शास्त्री ने प्रणयन किया है।

प्रकृत ग्रन्थ के चौबीस अध्याय (सोपानों में लेखक ने वेदवाणी, संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध बिखरे हुए गणेश सम्बन्धी विचारों द्वारा तात्त्विक विवेचन प्रस्तुत करते हुए 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक अपूर्व ग्रन्थ सप्रमाण समाज के कल्याण के लिये निबद्ध कर प्रकाशित करा रहे हैं। शर्मा शास्त्री का यह सारस्वत प्रयास अत्यन्त स्तुत्य है और इसके लिये वे बधाई के पात्र हैं। दृढ़ विश्वास है सुधी समाज में इस प्रशंसनीय उपयोगी कृति का सम्यक् समादर किया जायेगा।

दिनांक ६ जून १९८५ ई०

डॉ. जयमन्त मिश्र

卐

॥ श्री गुरुः शरणम् ॥

पं० रामचन्द्र शास्त्री होसमने

वेद-न्यायाचार्य प्राचार्य एवं अध्यक्ष,
राष्ट्रपति पुरस्कृत तथा आचार्य एवं
प० विशेश्वर शास्त्री द्राविड, उपाध्यक्ष साङ्गवेद महाविद्यालय, वाराणसी

श्री पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा विरचित 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' अन्वर्थ नाम का है। अर्थात् भगवान् गणेश के विषय में विद्वानों को ही नहीं सामान्य जनों को भी सम्पूर्ण ज्ञान कराने वाला है। श्री शास्त्री जी ने इस कार्य में बहुत परिश्रम द्वारा गणेश के सभी तत्त्वों का संग्रह अनेक ग्रन्थों से करके इस ग्रन्थ में इस प्रकार संजोकर प्रस्तुत किया है, जिसके द्वारा अनायास ही जिज्ञासुओं को उनके तत्त्वज्ञान का लाभ हो सकता है। लेखक ने इसके पूर्व शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा के भी

तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों का निर्माण कर प्रकाशित कराये हैं। जिनसे जिज्ञासुओं को बहुत लाभ हुआ है। श्री शास्त्रीजी दीर्घायु होते हुए इसी प्रकार अन्य देव-तत्त्व के ग्रन्थ निर्माण कर प्रकाशित करावें जिससे आस्तिक जनताओं का महदुपकार हो सके, ऐसी भगवान् विश्वेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

कार्तिक कृष्ण ४ चतुर्थी १९४१ विक्रम — अध्यक्ष रामचन्द्र शास्त्री होसमने
दिनांक १५-१०-१९८४ — उपाध्यक्ष विश्वेश्वर शास्त्री द्रविड़

卐

पं० हरिशंकर वेणीराम शास्त्री

महामहोपाध्याय, वयोवृद्ध आचार्य,
गुजरातराज-राज्यपाल द्वारा सम्मान पुरस्कार प्राप्त,
यज्ञकर्मकाण्ड-ज्योतिषाचार्य, विद्याभूषण, संस्कृत-रत्न, विद्यालकार (हलवद, गुजरात)

स्वस्ति श्रीमतां तत्र भवतां परम सुहृदुतमानां, स्नेह सुधा सान्द्रहृदयानां सद्विद्या सद्गुण शेमुषी सम्पत्ति निधानानां, नाना निगमागम पुराणेतिहासे संहिताद्यध्ययन-मनन-निधिध्यासन सिद्धधिषणानां, वानप्रस्थाश्रम धर्मपरायणानां विविधोपाधिलङ्कृतानां, पण्डित प्रवराणां तत्रभवतां भवतां श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, महोदयानां पुरतोमें प्रस्ततात् सादरं सप्रेम वेदोक्त शुभाशीराशिभिः सहनतितति कुसुमाञ्जलय समुल्लसन्तुतराम्।

श्री 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थे ग्रथितानां विषयाणां चतुर्विशति सोपानेसु संकलितं, तत्पठनेन महती प्रसन्नता जाता। श्री गणेशस्योपासना भारतवर्षे विदेशेषु च सर्वत्र वैदिक सनातन धर्मानुयायी समस्त हिन्दू समाजे एवं च सर्व प्राचीनार्वाचीन सम्प्रदायेषु तथैव बौद्ध, जैन, पारसिक, सिखादि सर्वमतपन्थेषु दृष्यते। सर्वश्रौत स्मार्त विहित माङ्गलिक कार्येषु श्री गणेशस्य पूजनं सर्वजनैः प्रथम क्रियते।

'श्री गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थस्या वश्यकतास्मि, साभवद्भिः गणेश-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थस्य लेखनेन स्मयक् पूर्णतां 'नीतास्ति' तत् शोभनं कार्यभवद्भिः कृतम्।

अतीवोपयोगि ग्रन्थस्यास्य प्रसार सर्वत्र स्यादेतत्श्रेयसे प्रेयसे च सर्वेषां स्यादिति ममापि प्रायोऽस्ति श्रीमतां प्रयत्न सफलो भूयादित्याशासे। भवतां दीर्घमायुष्यं कामये।

भवतां सर्वमनोरथाः सफलासन्तु-इति श्रीजगदम्बिकां सम्प्राथंये वेदोक्तान् शुभाशीर्वादान् प्रेषयामि। शम्।

दिनांक ११-४-८५ ई० — शास्त्री हरिशंकर वेणीराम आचार्यः
हलवदस्थः

卐

डॉ० हिम्मतराम जानी (याज्ञिक)

ज्योतिषशास्त्रमार्तण्ड. खगोलशास्त्र-दिवाकर. ज्योतिषशास्त्र-भास्कर, सिद्धान्त ज्योतिषरत्न, विद्यारत्न, सिद्धान्त ज्योतिषाचार्य, व्याकरण शास्त्री, काव्यतीर्थ, ज्योतिषवाचस्पति, ज्योतिष चक्रवर्ती, वाचस्पति, पञ्चांगकर्ता, ज्योतिष एवं तन्त्रशास्त्रीय अनेक ग्रन्थ लेखक, डाईरेक्टर साइन्स एण्ड टेक्नोलोजी इन इन्डोखोजी वेधशाला, अहमदाबाद (गुजरात) की सम्मति

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ को पढ़कर आश्चर्य हुआ। आपने गणेश विषयक साहित्य महासागर का गहन अवगाहन कर अमूल्य रत्नों का खजाना जन-समुदाय के लाभार्थ इस ग्रन्थरूपी म तृ पात्र में प्रस्थापित कर निश्वार्थ भाव से केवल जिज्ञासृजनोंपकारार्थ प्रदर्शित किया है। आपकी यह उदात्त भावना का शब्दों में वर्णन करना अशक्य है।

आपके द्वारा रचित एवं प्रकाशित शिव-तत्त्व, शक्ति-तत्त्व, विष्णु-तत्त्व; ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन के साथ इस 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का प्रणयन और प्रकाशन हो जाने से पंचायतन देवताओं को वाङ्मय उपासना यश का महान् अनुष्ठान साङ्गोपाङ्ग पूर्ण हो रहा है। जो आपके पांडित्य जीवन का एक महदुपयोगी अत्युत्तम महायज्ञ कार्य है।

भगवान् शंकराचार्य ने भारतीय सनातन धर्मावलम्बी नर नारियों के लिये पंचमहातत्त्वों के अधिपति पंच देवताओं की पूजा उपासना करने का जो आदेश दिया है, उसकी परिपूर्ति के लिये यह आपके पांचों ग्रन्थ आपकी पञ्चदेवोंपासना को पूर्ण करायेंगे।

भगवत्पादाचार्य शंकर के आदेश को आपने शिरोधार्य करके आपने अपने ब्राह्मणत्व की सार्थकता सिद्ध करदी है। आपका यह बुद्धिज्ञान श्रम अपनी कर्तव्य परायणता को अतिशय आलोकित कर रहा है और अनेक समानधर्मी विद्वानों को मार्ग दर्शक हो रहा है। इति शिवम्।

दिनाङ्क १० अप्रेल १९८५ ई० डॉ. हिम्मतराम जानी (याज्ञिक)
सिद्धान्त ज्योतिषाचार्य

卐

डा० निखिलेश शास्त्री

एम.ए., एम. लिट्; पी.एच डी;
लाड कालोनी, इन्दौर (म०प्र०)

'कलौ चण्डी विनायकौ' यह उक्ति भारतीय आस्तिक जनता में सर्व विदित है। अर्थात् कलियुग में पराम्बा देवी तथा श्री गणेश ही ऐसे देवी-देवता हैं, जिनकी उपासना तत्काल फलप्रद होती है, इनमें भी समस्त ऐहिक कामनाओं की सिद्धि के लिए श्रीगणेशोपासना एक अमोघ उपाय है। श्री गणेश ऋद्धि-सिद्धि के अधीश हैं तथा बुद्धि के स्वामी हैं, अतः जिस-जिस कामना को लेकर भगवान गणपति की शरण में जाता है, वही कामना उसकी पूर्ण होती है।

श्रद्धालुओं को यह सर्व सुलभ उपाय सुबोध हो, इस दृष्टि से आचार्य पंडित प्रवर रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का संकलन लोक-मंगल की साधना हेतु किया हैं। शास्त्रीजी ने इस पुनीत ग्रन्थ में २४ चौबीस सोपानों में विभक्त कर श्रीगणेश के दिव्य चरित्रों को उद्धृत किया है। नाना पुराण एवं स्मृतियों से विघ्न नाशक गणेश के दिव्य गुणों से सम्बन्धित अनेक कथाएं संकलित कर लेखक महोदय ने एक अनुपम ग्रन्थ भक्तों के लाभार्थ हिन्दी में सुलभ कर दिया है। वस्तुतः आचार्य प्रवर शर्मा शास्त्रीजी का यह कठिन भगीरथ-प्रयत्न स्तुत्य है, जिन्होंने अपने अद्वितीय शास्त्र ज्ञान से तथा अथक परिश्रम से एक और ऐसी

ही कृति का निर्माण किया है। जैसा कि इससे पूर्व 'शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा के तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों का आपकी लेखनी द्वारा तिरोहित होकर हिन्दू धर्म समाज में अद्वितीय रूप में प्रख्यात हो चुके हैं। जिसके अध्ययन एवं मनन से भक्तों को ऋद्धि-सिद्धि के दाता मुद मंगल के अधिनायक विघ्नहन्ता श्री गणेश का उत्कृष्ट प्रसाद प्राप्त हो सकेगा। इति शुभम्।

卐

पण्डित विश्वनाथ मिश्र

व्याकरण-साहित्याचार्य, एम ए; प्रधानाचार्य
राजकीय संस्कृत कॉलेज बीकानेर (राजस्थान),
डीन संस्कृत संकाय, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

'श्रीगणेश-तत्त्व-दर्शन' में कुल चौबीस सोपान हैं। इन सोपानों में गणेशजी से सम्बन्धित सारे तत्त्वों का विशद् विवेचन किया है। श्रीगणेश तत्त्व उस अद्वय चिन्मय तत्त्व से अतिरिक्त है। परमहंस अमलात्मा योगियों के भक्तियोग विधान के लिए वह आज भी अवतार ग्रहण करता है। गणेश का अवतार भगवदवतारों में अन्यत्तम है।

प्रस्तुत पुस्तक में गणेश-तत्त्व का व्यापक एवं सर्वाङ्गीण निरूपण किया गया है। गणेश से सम्बन्धित सारे विषयों का इसमें एकत्र संकलन अपने में अनुपम है। गणेशसहस्र नाम का इसमें प्रकाशन एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। इसमें सन्देह नहीं कि गणेश तत्त्व के व्यापक और विशद ज्ञान के लिए यह पुस्तक नितान्त उपयोगी सिद्ध होगी। दिनांक १०-४-८५ ई०

卐

पण्डित गोविन्द नारायण शर्मा

न्याय-साहित्याचार्य सेवा निवृत अध्यक्ष एवं प्राचाय
महाराजास्-संस्कृत कॉलेज जयपुर (राज०)

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ का निर्माण किया है।

भारतीय आस्तिक समाज में सर्व प्रथम वन्द्य विघ्नविनाशन श्री गणेश का अप्रतिम स्थान रहा है। 'कलौचण्डी-विनायकौ' के अनुसार कलियुग में भगवती चण्डी एवं भगवान गणेश ही विशेष रूप से उपास्य एवं सद्यः फलदायक माने गए हैं। वेद, संस्कृत वाङ्मय में भगवान गणपति का पर्याप्त गुणानुवाद किया गया है किन्तु वह यत्र-तत्र बिखरा हुआ है। किन्तु राष्ट्र-भाषा हिन्दी में एकत्र उन सब उपयोगी विषयों को चुन-चुनकर उनका संकलन किया जाकर ही इस ग्रन्थ का सरल शैली में निर्माण किया गया है। जो अत्युत्तम सिद्ध होगा। श्रीशास्त्रीजी द्वारा निर्मित अब तक ऐसे ही शिव, शक्ति; विष्णु तथा ब्रह्मा के तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ जिज्ञासुओं के लिए बहुत ही उपादेय हुए हैं। श्री शास्त्रीजी देव-तत्त्व-दर्शन की व्याख्या कला में सिद्ध हस्त हो गए है। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि शास्त्रीजी चिरायु हों और स्वस्थ रहें। तथा इस प्रकार का पुनीत देव-तत्त्व-दर्शन यज्ञ कार्य करते ही रहें। शुभम्। दिनांक २८-५-८५ ई०

शोभन्ते विद्यया विप्राः

विद्यावाचस्पति, वेदश्रमी श्रीजीवानन्द 'आनन्द' शास्त्री,

सिद्धान्तालङ्कार, साहित्यभूषण, कुलसचिव श्रीराजस्थान ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत कॉलेज, रतनगढ़ (राज०), उपसभापति राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन जयपुर, सदस्य राजस्थान राज्य संस्कृत एडवाईजरी बोर्ड, जयपुर (राज०)

गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ का अवलोकन कर हार्दिक प्रसन्नता हुई।

वर्तमान युग में हिन्दू धर्मावलम्बी जनता भौतिकवाद की चकाचौंध में दृग्भ्रमित हो रही हैं। ऐसे समय में शिव-शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन नामक ग्रन्थों का वेद-पुराण, संहितादि धर्मशास्त्रों के प्रमाण संदर्भों के परिवेश में हिन्दी भाषा में निर्माणकर आपने महान् यज्ञ किए हैं। इस शृंखला में यह पञ्चम ग्रन्थ 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' निर्माण कर-कर तो आपने महान् ही मङ्गलप्रद कार्य सम्पन्न किया है। आपकी लेखनी द्वारा विरचित ग्रन्थों का हिन्दी संसार में बहुत सम्मान हुआ है। 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' गायत्री मन्त्र के चौबीस अक्षरों के प्रतीक रूप में चौबीस सोपान रखे हैं। इन चौबीस सोपानों में गणेश विषयों की प्रायः सब ही साहित्य-सामग्री का समावेश किया गया है।

भगवान गणेशजी हिन्दू धर्मशास्त्र और लोक व्यवहार के अग्रगण्य पूज्य और वैदिक देवता हैं। ऋग्वेद के १० वें मण्डल के ११२ वें सूक्त के ९ वें मण्डल में आया है—

'निषुसीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतम कवीनाम्।
न ऋते त्वत्क्रियते किञ्चनारे महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च।।'

भगवान गणपति के स्मरण नमन किए बिना कोई कार्य निर्विघ्न पूर्ण नहीं होता, ऐसी पूर्णरूपेण मान्यता व प्रमाणित है। यह आपका कार्य अनुकरणीय तथा अभिनन्दनीय है। मुझे दृढ़ विश्वास है कि आपका यह ग्रन्थ आपके पूर्व प्रकाश्य ग्रन्थों से भी अधिक समादर किया जाएगा। और आपके लिए मंगलकारी होगा। भगवान आशुतोष से प्रार्थना है कि आपकी कर्मणा शक्ति को और बल प्रदान करें जिससे समाज को और भी पथ प्रदर्शन प्राप्त होता रहे, इसी कामना के साथ। शुभम्। दिनांक १४-५-८५ ई.

卐

वैद्य विश्वनाथ जोशी

विद्यावारिधि, आयुर्वेद वाचस्पति, व्याकरण-साहित्य-आयुर्वेदाचार्य, साहित्य रत्न, काव्य-व्याकरण तीर्थ. प्रधान चिकित्सक-श्री राजाराम दातव्य औषधालय, श्री राम धर्मार्थ औषधालय, तुमसर (महाराष्ट्र)

श्रीमता मभिनव लेखक मणीनां श्री राम प्रसाद शास्त्रिणांकृते

प्रशस्ति पंचकम्

(१)

येषां मतिः शास्त्र पयोनिधीनिहाऽ —
वगाहच सारस्वत मंदिरस्य।

श्रियै, जनस्यापि हिताय तेन
निबन्धरत्नानि नवानि लोके ।।

(२)

प्रकाशिता ब्रह्म हरीश शक्ति—
तत्त्वस्य संदर्शन नाम धेयाः ।
भाषा निबन्धाः श्रुतिवाक्य गर्भाः
सुकीर्ति तेषां कलयन्ति दिक्षु ।।

(३)

अवस्थया सम्प्रति सप्तते रपि
परं गताः किन्तु निरुद्यमा न ये ।
ते श्री गणेशस्य सुतत्त्व दर्शने
सदा विदां मोदवहे समुद्यताः ।।

(४)

अत्र प्रबन्धेऽपि पुराण धर्म—
शास्त्र प्रमाणान्यधिकृत्य चित्रम् ।
पुण्यं चरित्रं प्रमथाधिपस्य
पूजा विधानादि युतं निबद्धम् ।।

(५)

वैदुष्यं सुरवाचि यस्य मनसाऽचिन्त्य विपश्चिद्वरैः
आचारः श्रुतिसम्मतः कृतिरपि, लोकेऽनुकूला सताम्।
मूर्त्या चापि महर्षिरेष सुमती, रामप्रसादाभिधः
शास्त्री संजनयन् सुख सुमनसां, कुर्यात्, गिरां वैभवम् ।।

दिनांक १० अप्रेल १९८५ ई

卐

।। श्रीः ।।

पण्डित नटवर लाल जोशी

साहित्याचार्य, एम. ए; प्राचार्य श्री ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत महाविद्यालय, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थान,

विद्वद्वरेण्य पण्डित प्रवर श्रीरामप्रसादजी शास्त्री के अथक परिश्रम से किए जा रहे सारस्वत अनुष्ठान का परिणाम है पंचम ग्रन्थरत्न 'श्री गणेश-तत्त्व-दर्शन'। चार ग्रन्थ रत्न शिव, शक्ति, विष्णु एवं 'ब्रह्म-तत्त्व-दर्शन' रूप में सुधी समाज को पहले ही समर्पित कर चुके हैं। पण्डितजी जिस उत्साह एवं लगन से अपने आयुष्य के चतुर्थ सोपान में भगवती शारदाम्बा की सेवा में लगे हैं, वह सभी के लिए प्रेरणास्पद है, विशेषतः संस्कृत सेवी समाज के लिए। भगवान गणेश के समग्र तत्त्व का साङ्गोपाङ्ग विवेचन समस्त वेदपुराणादिकों से एतद्विषयक सामग्री का संकलन कर जिस रीति से राष्ट्र-भाषा में श्री शास्त्रीजी ने किया है अनुपमेय है। यह विन्दु

में सिन्धु भरने का सफल प्रयास है। और विद्वान् लेखक के विपुल विद्वता, श्रम, भक्ति एवं निष्ठा का परिचायक है।

भारतीय संस्कृति प्रणव स्वरूप महामहिम गणाधिपति श्री गणेश से महिमान्वित है। श्री गणेश लोक देवता हैं, जन-जन के मानस में रमे हैं। श्री गणेशाराधना-श्रीगणेश को जाने बिना भारतीय संस्कृति को जान सकना एवं समझ पाना नितान्त दुष्कर हैं। साधकों की साधना का श्री गणेश, श्री गणेशायनमः से है एवं सिद्धि भी सिद्धि विनायक की कृपा दृष्टि से ही संभव है। वे एक साथ विघ्नेश्वर एवं विघ्न विनाशक हैं। जो इस सर्व हितैषी सफल प्रयास के लिए लेखक की जितनी प्रशंसा की जाए थोड़ी ही होगी।

परम प्रभु से सतत साधना संलग्न पूज्य श्री शास्त्रीजी के यशोविमल, आरोग्य, सिद्धि, एवं समृद्धि पूर्ण शतायुष्य की कामना है। दिनांक ८ जून १९८५ ई.

□

॥ श्रीः ॥

डॉ. गिरधारी शर्मा

एम. एस., एफ. आर. सी. एस; (कनाड़ा), एफ. ए. सी. एस; एम. एस; (कार्डियो वेस्कुलर सर्जरी), एफ. ए. सी. सी; एफ. सी. सी. पी; एफ. आई. सी. ए., एफ.आई. सी.एस; थोरेसिक एण्ड कार्डियो वेस्कुलर सर्जन, हृदय शल्य चिकित्सक बम्बई अस्पताल

'गणेश-तत्त्व-दर्शन एक अनुपमेय ग्रन्थ'

"गणानान्त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपवश्रस्तमम्"
उतिष्ठ ब्रह्मणस्पते' (ऋग्वेद)
द्याः (यजुर्वेद)
वागीशाद्याः सुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे
यं नत्वा कृतकृत्याः स्यु तं नमामि गजाननम्"

'भाष्यकार श्री सायणाचार्य'

सनातन धर्म के अन्तर्गत षण्मत और पंचायतन पूजा विधि में सर्व प्रथम भगवान् गणेश की पूजा है। वे ही वेदों में गणपति, ब्रह्मणस्पति, वाचस्पति आदि नामों से जाने गए हैं। "कलौ चण्डीविनायकौ" आदि उक्ति के अनुसार इस युग में उन की उपासना सद्यफल देने वाली और इस जाग्रत देवता का अनुग्रह कराती है। महाभारत, मुद्गलपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण, नारदपुराण, स्कन्दपुराण, अथर्वशीर्ष (अथर्ववेद का उपनिषद्) में गणेश महिमा ही गाई गई है।

विद्वान् लेखक के अनुसार गणेश उपासना न केवल बौद्ध, जैन तथा यहूदी धर्मों में पाई जाती है वल्कि जावा, सुमात्रा, जापान, चीन, MAXICO, अमेरिका में भी गणपति की मूर्तियाँ मिली हैं। पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा ने अपनी विद्वत्ता और लोकोत्तर धर्मानुराग के कारण इस ग्रन्थ में "गागर में सागर' भर दिया है। गणेशोपासना की इतनी सामग्री एक ही जगह मिलनी बहुत दुर्लभ है। भगवान् विनायक, भगवान् शिव और जगन्माता पार्वती के पुत्र स्कन्द (सुब्रह्मण्य)

के अनुज महाभारत के लेखक और ऋद्धि-सिद्धि के स्वामी हैं। आधुनिक समय में लोकमान्य तिलक ने महाराष्ट्र में विनायकोत्सव को सार्वजनिक रूप देकर हमारी धर्म प्राण जनता में राजनैतिक चेतना जगा दी। फलस्वरूप स्वतंत्रता प्राप्ति का गणेश ६० वर्ष पूर्व ही हो गया था। लेखक ने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति-तत्त्व-दर्शनों की शृङ्खला में 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' जोड़कर सनातन धर्मावलम्बी संसार की बड़ी सेवा की है। मैं उन्हें इस प्रयत्न की सफलता पर बधाई देता हूँ और भगवान् विनायक से उनकी लेखनी को "शरद: शत" सतत् चलती रहने की प्रार्थना करता हूँ। "नमस्ते गणपतये। त्वमेव केवलं कर्ताऽसि।" तारीख ८-५-८५ ई०।

□

श्री सूरजमल गर्ग

बी. ए; एल. एल. बी; साहित्य रत्न, साहित्यालंकार, भूतपूर्व एडवोकेट जनरल, मध्य प्रदेश राज्य सरकार, अधुना एडवोकेट सुप्रीम कोर्ट-ऑफ इण्डिया

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन के लेखन-प्रकाशन के तदनन्तर पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने गणेश-तत्त्व-दर्शन नामक ग्रन्थ भी लिख लिया है। और प्रकाशन की व्यवस्था में रत हैं। भारतीय संस्कृति में किसी भी शुभ कार्य को करने के पहले भगवान् गणेश की पूजा अनिवार्य है, यहाँ तक कि धर्म निरपेक्ष संस्कृति के मानने वाले राजनैतिक नेता भी अनेक उद्घाटनों के अवसर पर श्री गणेशजी की पूजा अनिवार्य रूप से करते हैं। ग्रन्थ रत्न के संक्षिप्त रूप-रेखा को पढ़ने से प्रतीत होता है कि पुस्तक गणेशजी के विषय में अपने आप में पूर्ण होगी। और वेद-संस्कृत नहीं जानने वालों के लिए भी यह पुस्तक अत्यन्त लाभप्रद होगी क्यों कि पुस्तक हिन्दी में लिखी गई है। और समग्र वेद शास्त्रों के उदाहरण प्रमाणों का हिन्दी अनुवाद ही नहीं किया है बल्कि संस्कृत की पूजा विधि का अनुवाद हिन्दी भी साथ में प्रस्तुत किया गया है। जिस से अल्प संस्कृतज्ञ पूजा कराने वाला विद्वान् भी पूजा मन्त्रों का अर्थ समझ सके और केवल हिन्दी में पूजा करने वाला हिन्दी में पूजा भी कर सकें।

मेरी दृष्टि में भगवान् गणेशजी के विषय में सर्वाधिक हिन्दी में ज्ञान कराने यह प्रथम पुस्तक होगी। यद्यपि आँगल भाषा में एलिफेन्ट गाड के सम्बन्ध में दो पुस्तकें उपलब्ध हैं।

मैं परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह पण्डित जी को दीर्घायु करें। और उन्हें स्वस्थ और सबल बनाए रखे। जिससे वे और देवताओं पर भी ऐसी पुस्तकें लिख सकें। दिनांक ३० अप्रेल १९८५ ई०

'दूरस्थोऽपि न दूरस्थो यो यस्य हृदय स्थित:'

साहित्यमार्तण्ड डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव

एम. ए; त्रय (संस्कृत-हिन्दी एवं प्राकृत-जैनशास्त्र), पी. एच डी; साहित्य-पुराण-जैन-दर्शन-पाल्याचार्य, व्याकरणतीर्थ, साहित्यरत्न, साहित्यालङ्कार, संपादक-बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् पत्रिका, पटना (बिहार);

भारतीय धार्मिक संस्कृति के परम तत्वज्ञ मनीषि प्रवर पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्रीजी द्वारा लिखित 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक महत्कृति 'शिव-तत्व दर्शन,' 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन,' विष्णु-तत्त्व-दर्शन,' तथा 'ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन,' की परम्परा में पाँचवाँ सारस्वत पद विन्यास है। लोक और शास्त्र दोनों परम्पराओं की दृष्टि से, भारतीय देवो पासना में गणेश आदि पूज्य देवता के रूप में बहु प्रतिष्ठ हैं। साधारण और असाधारण, दोनों प्रकार के लौकिक और वैदिक कार्यों के आरम्भ में, विशेषतया विद्यारम्भ, विवाह, प्रवेश, निर्गम (यात्रा) शत्रु संग्राम, संकट आदि के समय विघ्नविनाशक देवता गणेश का स्मरण अनिवार्य होता है। भारतीय जनजीवन के लिए सामान्यतया 'जय गणेश' या 'श्री गणेश' शब्द का उच्चारण तो किसी भी कार्य के प्रारम्भ का पर्याय प्रतीक ही हो गया है। कहना न होगा कि गणेश लोक-जीवन के देवता हैं, इसलिए उनकी महिमा की जानकारी जन-जन के लिए अतिशय आवश्यक है। पण्डितवर शास्त्रीजी ने 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' की रचना द्वारा भारतीय जनता को उसके अपने जन देवता का शास्त्रीय और व्यौहारिक परिचय देकर प्रभूत लोकोपकार का श्लाघ्यतम प्रयास किया है।

प्रस्तुत महत्त्वपूर्ण कृति का प्रतिपाद्य विषय कुल चौबीस सोपानों में विशदता से पल्लवित हुआ है, साथ ही गणेश को कृष्ण का अवतार मानकर उनके विविध स्तवनों के उल्लेख पूर्वक उनकी पूजन विधि और गणेश व्रत के माहात्मय का प्रस्तवन किया गया है। पूजा विधि निर्देश के क्रम में हिन्दी-भाषा में भी वृहत् पूजा विधान उपन्यस्त है। इसके द्वारा कोई भी हिन्दी-भाषी स्वय विधि पूर्वक गणेश की पूजा कर सकता है। संस्कृत निवद्ध कर्मकाण्ड विधि का राष्ट्र-भाषा हिन्दी में उपस्थापन द्वारा शास्त्रीजी ने प्रसिद्ध हिन्दी सेवी राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन की ऐतिहासिक मान्यता को सामयिक मूल्य देकर स्पृहणीय और अनुकरणीय कार्य किया है। ज्ञातव्य है स्वयं राजर्षि टण्डनजी ने विवाह पद्धति का हिन्दी-रूपान्तर प्रस्तुत किया है।

इसके अतिरिक्त इस कृति में अनेक रोचक, लौकिक तथा पौराणिक कथाओं के माध्यम से गणेश की लोक प्रियता भी संकेतिक की गई है। निश्चय ही भारतीय प्राच्य वाङ्मय के प्रकाण्ड अधीती लेखक ने समग्र वैदिक पौराणिक और तान्त्रिक वाङ्मय का गम्भीर अवगाहन करके शोधार्थियों और जिज्ञासुओं के लिए समस्त भारतीय प्राच्यविद्या का एकत्र अध्ययन सहज सुलभ कर दिया है। सारस्वत साधना की सिद्धि से सम्पन्न लेखक वरेण्य शास्त्रीजी की यह वैदुष्यपूर्ण महार्धकृति तत्त्व-दर्शन परक उक्त चारों कृतियों की तरह, स्वाध्याय और सन्दर्भ ग्रन्थ के रूप में, व्यापक विद्वज्जन प्रियता आयत्त करेगी, इसमें सन्देह नहीं है। दिनांक १५ फरवरी १९८५ ई.

॥ श्रीः ॥

महर्षि डॉ० हरिकृष्णजी छाँगाणी

एम. ए; डी. लिट्; पी. एच. डी; (ज्योतिष), ज्योतिषाचार्य, ज्योतिष भास्कर, ज्योतिष-शिरोमणि, ज्योतिष-महोपाध्याय, अध्यक्ष ज्योतिष शोध संस्थान पत्रिका, फलोदी (राजस्थान)

पन्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ का २४ सोपानों में प्रणयन किया है। श्री गणेश प्रथम पूज्य देवता है। श्री गणेश सम्बन्धी साहित्य वेद, उपनिषद्, पुराण, संहिता तथा धार्मिक ग्रन्थों में प्रचुर रूप में प्राप्त है, किन्तु देववाणी, संस्कृत में होने से सामान्य पाठक उस ज्ञान से वञ्चित ही रहते हैं। श्री शर्माजी द्वारा लिखित 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' हिन्दी भाषा में निबद्ध होने के कारण हिन्दी भाषी लोग भी इसका लाभ प्राप्त कर सकेंगे। यह ग्रन्थ आपके प्रौढ़ पांडित्य और अथक परिश्रम का प्रतिफल है। मैं ऐसे शोधपूर्ण ग्रन्थ की रचना के लिए श्री शर्मा शास्त्रीजी को हार्दिक बधाई देता हूँ। और माँ जगदम्बा से प्रार्थना करता हूँ कि आप दीर्घायु हों, जिससे ऐसे सुन्दर ग्रन्थों का और निर्माण कर सकें।
दिनांक २३-५-८५

□

डॉ. रामचरण 'महेन्द्र'

एम. ए; पी. एच. डी;

अवकाश प्राप्त प्रिंसिपल गवर्न्मेंण्ट कॉलेज झालावाड़ एवं बिड़ला कॉलेज भवानी मण्डी, महेन्द्र साहित्य सदन, नयापुरा, कोटा (राजस्थान)

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ का संक्षिप्त परिचय पढ़ा। धन्यवाद। इससे पूर्व आप इसी क्रम में शिव, शक्ति, विष्णु, तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन नामक उपयोगी ग्रन्थ लिख चुके हैं। इन सभी ग्रन्थों में अपने अपने विषयों की अलभ्य उपयोगी जानकारी एक ही स्थान पर सप्रमाण प्रस्तुत कर आपने हिन्दू धर्म की बड़ी सेवा की है। प्रत्येक पुस्तक पर बहुत परिश्रम हुआ है। आपकी विद्वत्ता पर मुग्ध हूँ। गजब का ज्ञान है। सर्वत्र स्वाध्याय की गहनता प्रकट होती है खूब पढ़ा है और सभी उपयोगी जानकारी सप्रमाण प्रस्तुत की है। नैतिक और सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए आप के ग्रन्थ सर्व साधारण के लिए अतीव उपयोगी हैं। इनसे विचार-क्रान्ति एव भावनात्मक नव-निर्माण का कार्य सुलभ हो जाएगा।

आप अपने सीमित साधनों से हिन्दू धर्म के लिए बड़ा उपयोगी कार्य कर रहे हैं। आशा है आपके अन्य ग्रन्थों की भाँति गणेश-तत्त्व-दर्शन भी लाजवाब बनेगा। रूपरेखा सम्पूर्ण है। इसमें और बढ़ाने की गुंजाइस नहीं है। पुस्तक की सफलता की कामना करता हूँ। तारीख ३-४-८५ ई०

□

डॉ. सदाशिव एम. डांगे

एम. ए; पी-एच. डी; डी. लिट्;

आचार्य एवं अध्यक्ष संस्कृत-विभाग, बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई (महाराष्ट्र)

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ की परिचायका पढ़कर अत्यन्त हर्ष हुआ। गणेश सम्बन्धी कथा, सम्वाद, पूजा आदि का सम्पूर्ण दर्शन इस ग्रन्थ से हो जाएगा, इसमें सन्देह नहीं है। सूक्ष्म ज्ञान जानकारी प्राप्त करने वालों को ही नहीं अपितु सर्व साधारण हिन्दू धर्म के आस्थावान् उपासक भक्तों एवं पाठकों को भी इस ग्रन्थ से ज्ञान लाभ हो सकेगा। इस स्तुत्य उपक्रम से हर्ष होता है। आपको बधाई।
दिनांक ३० मार्च १९८५ ई०

डॉ. कल्याणमल लोढ़ा

एम ए; पी-एच. डी;

आचार्य हिन्दी विभाग कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का संक्षिप्त परिचय पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। आपने अत्यन्त परिश्रम द्वारा मन एवं लगन से इस ग्रन्थ में भगवान् गणेशजी के विषय में विविध प्रकार की सब ही जानकारी सामग्री का संग्रह करके सरलता पूर्वक निवद्ध किया है। यदि एक अध्याय और बढ़ाकर विदेशों में भी श्री गजानन का बड़ा महत्त्व है, वह सामग्री भी इसमें सम्मिलित कर देवें तो उत्तम और अनुकूल रहेगा। दिनांक १ अप्रेल १९८५।

□

डॉ. श्री किशोर मिश्र

वेद-दर्शनाचार्य, एम. ए; पी-एच. डी;

विद्यावारिधि प्रवक्त्या-संस्कृत विभाग, कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

श्री गणपति जयति

एतमर्थमभि व्यञ्जयतो मम हृष्यति चेतो यन्मरुदेशीयायां वीर प्रसविन्या वसुन्धरायां क्षेत्ररयिक्षेत्रे लब्धजनुष: श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्रिणो वयोवरिष्ठा अपि ज्ञानवान्तो, तत्परिकर्म सम्पतौ, तत्प्रचारणायाञ्च युवान: शिव-तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन, विष्णु-तत्त्व-दर्शन, ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शनाख्य ग्रन्थ चतुष्टय प्रणयन प्रकटित पाण्डित्या: प्रशस्त प्रतिभाशालिन: श्रीगणेश-तत्त्व-दर्शनाभिधं पुस्तकप्रकृष्टं राष्ट्रभाषीयद्वाङ् मय रत्नभूतं व्यररिचन्।

स चायं विद्याधिपतिर्गणपतिर्देवतागणनाभाङ्न भारतीय मात्रस्यापितु विश्वस्मिन् सम्यान्तरानुवर्तिनोऽमरीका—फ्रीकादिद्वीपान्तर निवासिनोऽपिजनस्य चिरात् परिचित:। को नामा मरवरिष्ठमें तंन्न सं सेवमानो भूयाद् बुद्ध्यधिजिगमिषुरपायापनोदनपरश्च। तदास्मा कीन श्रद्धा भाजनस्य देवस्य प्रमाण पुरस्सरं गुणगुणादन् प्रकाशयन्तोलिसननिष्णाता: पण्डित प्रवरा: श्री रामप्रसाद शास्त्रि महोदया नूनं साधुवादानर्हन्ति।

तथा चैतद् गणेशतत्त्वदर्शनं चतुर्विंशति सोपान संयोजित प्रसन्नं समुन्निता-लङ्कार विन्यासं कर्त्तुं वंचक्षणो माचज्ञाण मखिलधर्मज्ञचेत: कौतूहलावहं विशेषत उपासना प्रपञ्च प्रविविक्षूणामन्तेवासिनां सर्वपयोनोपकारमावहदस्तीति सकर्तृक मेतदभिनन्दयति। वैशाखसिते चतुर्थी २०४२।

॥ श्री: ॥

डॉ रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

एम ए; (हिन्दी-संस्कृत) पी-एच.डी; डी-लिट्; आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग अधिष्ठाता स्नातकोत्तर शिक्षा सामान्य विज्ञान तथा मान्विकी संकाय, सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

शास्त्री श्री रामप्रसाद शर्मा वेद-शास्त्र-पुराणादि प्राचीन धर्म ग्रन्थों के गम्भीर मर्मज्ञ हैं। उन्होंने शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा के सम्बन्ध में जो ग्रन्थ निर्माण कर प्रकाशित कराये हैं, उनसे भारतीय चिन्तन का प्रभूत उपकार किया से। प्रस्तुत ग्रन्थ में उन्होंने गणेश-तत्त्व का पर्याप्त समय और विवेक लगाकर मंथन किया है तथा सरल भाषा में उसे सामान्य पाठकों के लिये बोधगम्य बनाया है।

श्री गणेशजी के अवतार गज-मुख होने, प्रथम पूजा का सम्मान पाने आदि पर विचार करके विद्वान् लेखक ने गणेश विवाह, गणेश लोक, गणेश-तत्त्व, गणेश-सहस्रनाम, गणपति क्षेत्र आदि पर विस्तार से विचार किया है। तत्पश्चात् गणेशजी की पूजा और व्रत आदि से सम्बन्धित विभिन्न सांस्कृतिक तथा धार्मिक परम्पराओं के रहस्य स्पष्ट किये गये हैं।

गणेश पूजा विधि आदि पर सुस्पष्ट विचार व्यक्त करके विद्वान् लेखक ने इस ग्रन्थ को धर्म प्रेमी जनता के लिये सुपाठ्य बना दिया है मुझे विश्वास है कि श्री गणेशजी के सम्बन्ध में समस्त प्रकार की सामग्री एक ही ग्रन्थ में पाकर हिन्दी पाठकों को बहुत सन्तोष और हर्ष होगा। मैं शास्त्री जी को इस सुन्दर ग्रन्थ की रचना के लिये हार्दिक बधाई देता हूँ। इति।

दिनाङ्क २-४-८५ ई०

卐

।। श्रीः ।।

महामहोपाध्याय डॉ० दामोदर शास्त्री

व्याकरणाचार्य, सर्वदर्शनाचार्य, जैन दर्शनाचार्य, एम.ए; (संस्कृत-हिन्दी,-प्राकृत व जैन शास्त्र) विद्यावारिधि, पी एच.डी; प्राध्यापक एवं अध्यक्ष जैन-दर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री, केन्द्रिय-संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली।

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' कृति में गणेश सम्बन्धी समग्र आवश्यक विवरण संकलित कर धार्मिक अध्यात्मिक जनता का तो कल्याण किया ही है। अनुसंधान के क्षेत्र में भी अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। मैं समझता हूँ कि यह कृति अपने विषय की अद्वितीय होगी तथा भारतीय संस्कृति के भक्तजनों में काफी लोकप्रिय भी होगी। भगवान् से प्रार्थना है कि श्री शर्मा शास्त्री जी इसी तरह अन्य कृतियों की रचना करते रहें। मैं लेखक महोदय के स्वस्थ दीर्घायु की कामना करते हुए इस कृति की रचना पर साधुवाद करता हूँ। दिनाङ्क २-४-८५।

卐

।। श्रीः ।।

डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी

एम.ए; पी.एच.डी; डी.लिट्; साहित्याचार्य, आचार्य नवीन पीठ, अध्यक्ष हिन्दी विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महामनीषि मान्य शर्मा शास्त्रीजी,

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' की विस्तृत रूपरेखा देखी। मेरा पूर्ण विश्वास है कि आपकी जैसी अटूट निष्ठा, प्रगाढ़ अध्यवसाय, अपराजेय बोध तथा सत्संकलप है-उसके अनुसार आपकी प्राक्तन कृतियों की तरह यह ग्रन्थ भी प्रशंसार्ह होगा। आप भारतीय पवित्रवाङ्मय राशि में एक अभूतपूर्व प्रदेय इन कृतियों के माध्यम से दे

रहे हैं। आपका यह उपकार निष्ठावान् सनातनियों पर सदा अशोधनयी ऋण होगा। भगवान् आपको सब कुछ दे और आप ऐसी सारस्वत सेवा निरन्तर करते रहें। दिनांक २७-४-८५ ई०

卐

ॐ नमः शिवाय

डॉ० विजेन्द्र रामकृष्ण शास्त्री

एम. एस. सी; पी. एच. डी; एफ. आई. सी.एस; एफ.,आई.ए एच;पी. एस; ज्योतिष-काव्य-पुराण तीर्थ; साहित्य रत्न, साहित्य-सुधाकर (गोल्ड मेडलिस्ट) आचार्य एवं अध्यक्ष यूनिवरसीटी स्कूल आफ स्टूडीज इन कमेष्ट्री, विक्रम विश्व-विद्यालय उज्जैन (मध्य प्रदेश), ऐसोसियट एड़ीटर (फिजिकल कमेष्ट्री) आफ दी रीसर्च जनरल (७८-७९) एण्ड कौन्सलर (८०-८२), इंडियन केमिकल सोसायटी कलकत्ता-९, आनरेरी जनरल सक्रेटरी इंडियन ऐसोसिएसन फार हिस्ट्री एण्ड फिलोसफी आफ साइन्स आई. ए. एच. पी. एस. एक्सपर्ट मेम्बर (एडवाइजरी कमेटी) नेशनल कमिशन ऑफ हिष्ट्री एण्ड साइन्स, इंडियन नेशनल साइन्स एकाडेमी न्यू-दिल्ली-२, डिपार्ट आफ कमेष्ट्री यूनिवरसीटी आफ साउथ केलिफोर्निया, लास इंगलिस, यू. एस. ए.-९०००७ मेम्बर नेशनल फैकल्टी, मेम्बर इन्टरनेशनल फैकल्टी, लेक्चर व्यूरो न्यूयार्क, डीन साइन्स फैकल्टी विक्रम यूनिवर-सीटी, उज्जैन

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर प्रसन्नता हुई। यह जानकर हर्ष हुआ कि आप इससे पूर्व भी इस तत्त्व-दर्शन परम्परा में चार ग्रन्थ लिखकर प्रकाशित करा चुके है।

'गणेश-तत्व-दर्शन' में गणपति से सम्बंधित प्रायः सभी वैदिक, पौराणिक, पारम्परिक, पूजनात्मक, मूर्तिपरक आदि प्रायः सभी विषय समाविष्ट किए जा चुके हैं। यह आपका प्रयास स्तुत्य है। विद्वानों एवं श्रद्धालु जन साधारणजनों के लिए भी यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध होगा। धन्यवाद एवं शुभ कामनाएँ।

विजेन्द्रनाथ

इ-५
विक्रम विश्वविद्यालय क्षेत्र
उज्जैन, दिनांक २७-३-८५ ई.

卐

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद दूबे

विद्यावारिधि, एम. ए; डी, लिट्; पी-एच. डी;

साहित्य-गणित-फलित ज्योतिषाचार्य, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग रांची विश्वविद्यालय, रांची (बिहार)

शास्त्रमर्यादा से परिपुष्ट लौकिक आचार धर्म का जीवन्त रूप और स्वस्थ है। व्यावहारिक कार्यकलाप में आर्ष-प्रक्रिया के माध्यम से अनुशासन और व्यवस्था में परि-वद्ध सनातन मार्ग देवी-देवताओं के अनुग्रह से फूलता-फलता रहा है। परन्तु भारतीय

ज्ञान की अपार और गम्भीर परम्परा के कारण प्रमाणिक तथ्यों को भी अन्ध-विश्वास कहकर स्वीकार करने वाले लोगों को वास्तविकता बतलाना परमावश्यक है। पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री द्वारा इसी प्रयास का अग्रिम पुष्प यह 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' है । श्री शास्त्री जी श्रुति-स्मृति और धर्म शास्त्र पुराण के अनवरत अध्ययन को लोकोपकार में स्थापित करने का जो अध्यवसाय किया है, वह स्तुत्य और खासकर गणाधिपति को अपनी विवेचना का विषय बनाकर उसके गहन विश्लेषण से माइथोलोजी सम्बन्धी सारे विवादों को सन्तुष्ट पूर्णविराम दिया है। अपनी पैनी दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक का विभिन्न सोपानों में विभाजन करके ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड के परिप्रेक्ष्य में गणेश को परखने का लेखक का श्रम अद्वितीय है । सरल, सुबोध और पौराणिक भाषा तथा शैली ग्रन्थ के प्राण हैं ।

इस प्रणयन के संदर्भ में मैं लेखक को साधुवाद देता हूँ । आशा और विश्वास है कि श्री शर्मा शास्त्री के इस प्रयास-साध्य कार्य से धर्म-दर्शन श्रद्धालुओं को अभूतपूर्व लाभ तथा भारतीय संस्कृति को पुरजोर प्रकाश मिलेगा । इति । दिनांक ९-४-८५ ई०

卐

डॉ. शिवशंकर अवस्थी

एम. ए; पी-एच. डी; शास्त्री;

सेवानिवृत रीडर, संस्कृत पालि एवं प्राकृत विभाग, गोरखपुर विश्व-विद्यालय, प्रमुख अनुसंधानकर्ता विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, गोरखपुर (उ. प्र.)

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का संक्षिप्त परिचय प्राप्त हुआ । आप निरन्तर सारस्वत साधना में निरत हैं, यह जानकर हृदय हर्ष के अतिरेक से आप्लुत हो गया । आप जैसे तपस्वी विरल हैं ।

वेद-पुराण, आचार्यों एवं स्वकीय अनुभवों के आधार पर भगवान् गणेश के सम्बन्ध में विस्तृत सम्पूर्ण सामग्री का सरलभाषा में उक्त पुस्तक के रूप में जो एकत्र समावेश आप प्रस्तुत कर रहे हैं उससे जिज्ञासु जनसमाज सदैव आपका ऋणी रहेगा ।

कुछ प्राच्य एवं पाश्चात्य विद्वानों ने गणेश के विषय में विकास सम्बन्धित बातें लिखी हैं । सच तो यह है और हमारी अल्प बुद्धि में विकाश होता है और हम उसे देवता पर आरोपित कर देते हैं । गणेश सहस्रनाम के खद्योत भाष्य में महायोगी भास्कर राय ने लिखा है—

विवदादि प्रपञ्चस्य समूहो गण उच्यते ।
तदात्मकस्तदीशश्च तेन देवो गणेश्वरः ।।

आकाश आदि प्रपञ्च के समूह को गण कहते हैं । गणरूप एवं गणों के स्वामी होने से वे देव गणेश्वर कहलाते हैं । अस्तु

भगवान् गणपति से प्रार्थना है कि वे आपको रोग रहित दीर्घायुष्य प्रदान करें । दिनांक १२-४-८५

विलन्दपुर, गोरखपुर—२७३००१ शिवशंकर अवस्थी

卐

डॉ. शिवसागर त्रिपाठी

एम. ए. (हिन्दी-संस्कृत), पी-एच. डी;

साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, महासचिव राजस्थान संस्कृत परिषद्, प्रवाचक संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)।

मनीषी पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री की सतत सारस्वत साधना का पञ्चम पुष्प 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' के रूप में प्रकाशितप्राय है। विद्वान् लेखक ने इस ग्रन्थ को २४ चौबीस सोपानों में विभक्त करके ब्रह्मस्वरूप विनायक श्री गणेश के स्वरूप उनकी आराधना, पूजा पद्धति, तत्त्वविवेचन, नामानुकीर्तन, क्षेत्र परिचय, गणेश चतुर्थी विचार, अनुग्रह कथाएँ और सम्बद्ध स्तोत्र आदि पर शोधात्मक एवं साङ्गोपाङ्ग आध्यात्मिक विवेचन परम्परागत शैली में प्रस्तुत किया है। आदि स्मरणीय श्रीगणेश बौद्धिक विकास के प्रतीक रहे हैं। यह स्वदेश में ही नहीं, किसी न किसी रूप में लङ्का, चीन, जापान, तुर्किस्तान, तिब्बत, जावा आदि विदेशों में भी पूज्य व आराध्य रहे हैं। इन सबका भी दिग्दर्शन यदि एक सोपान में हो पाता तो अत्युत्तम होता।

श्री शर्मा जी द्वारा लिखित समस्त ही ग्रन्थ उनके अध्यवसाय अनुशीलन और वैदुष्य के परिचायक हैं। उनके वानप्रस्थ आश्रम का सदुपयोग स्तुत्य और अनुकरणीय है। भौतिकता से सन्तप्त मानव के लिए ये ग्रन्थ उपादेय तथा संग्रहणीय हैं।

ईश्वर से कामना है वह श्री शर्मा जी को चिरायु करे और उनकी लेखनी को बल प्रदान करे, जिससे धर्म प्रेमी जिज्ञासु पाठकगण निरन्तर उपकृत होते रहें। किम्बहुना—

'शिवं,' 'शक्ति,' च ब्रह्माणं सङ्कीर्त्य स्वमनीषया।
'गणेश-स्तवने सक्त्याः 'वैद्याः' सन्तु चिरायुषः॥

दिनांक १-५-८५ ई.। डॉ० शिवसागर त्रिपाठी

卐

डॉ. श्यामा भटनागर शास्त्री

एम. ए; पी-एच. डी;

व्याख्याता संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

श्रद्धेय पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा एवं उनका सर्वजन सुलभ पाण्डित्य अब परिचयापेक्षी नहीं है। उनके पूर्व प्रकाशित चार ग्रन्थों की भाँति प्रस्तुत ग्रन्थ 'गणेश-तत्त्व-दर्शन' भी कामतरु की भाँति विविध रुचियों के पाठकों को संतृप्त करने वाला है। लेखक महोदय की मधुसंचयी प्रतिभा ने इस सामग्री को जो प्रायः समयाभाव के कारण अनदेखी रह जाती है; एकत्रोपस्थित कर संस्कृत भाषा के ज्ञान से रहित व्यक्तियों का ही नहीं, अपितु संस्कृतज्ञों का भी अत्यन्त उपकार किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में सनातन धर्म के प्रथम पूज्य गणपति के सम्बन्ध में सुपरिचित एवं अपरिचित (यथा गणेश विवाह) समस्त तथ्यों का एकत्रोद्घाटन हुआ है।

जहाँ एक ओर, भक्तों के लिएअमृत तुल्य स्तोत्र, गणेश तीर्थों का परिचय, माहात्म्य, व्रत आदि का समावेश है, तो दूसरी ओर है कर्मकाण्ड सम्बन्धी विधि विधानों का भी सर्वाङ्ग पूर्ण सन्निवेश। शोधार्थियों के लिए वेद, उपनिषद् विविध पुराण एवं अन्य धर्मग्रन्थों के सन्दर्भ विद्यमान हैं, तो जनमानस को भाव विभोर करदेने वाली गाथाएँ भी।

अन्त में मेरी यही शुभकामना है कि इसी प्रकार दुर्लभ को सर्वजन सुलभ बनाकर अपने वानप्रस्थ आश्रम का अधिकाधिक सदुपयोग करते हुए श्रद्धेय लेखक शर्मा शास्त्री जी दीर्घजीवी हों। दिनांक ३-७-८५।

श्यामा भटनागर

॥ श्रीः ॥

डॉ० धनवती मिश्र

एम. ए; पी. एच-डी. पूर्व व्याख्याता कम्ब्रिज विद्यालय अधुना वार्डेन ईश्वरस्वा कन्या-छात्रावास, श्री सत्य सांई कला एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, हबीबगंज, भोपाल (मध्य प्रदेश)

शिव-शक्ति-विष्णु तथा ब्रह्म-तत्त्व-दर्शन' के पश्चात् गणेश-तत्त्व-दर्शन। मन किसी क्रम में उलझता कि—

सुनि कोउ संशय जनि करें, सुर अनादि जिय जानि।

आस्था के साथ ही तर्क ने भी तुष्टि दी कि ब्रह्म और शक्ति के सार का सुन्दर समन्वय ही तो है, श्री गणेश। विघ्न-विनाशक विनायक में चाहे ब्रह्म का स्वरूप समाया हो या विष्णु अवतार श्री कृष्ण का अंश किन्तु अग्रपूजा का अधिकार स्वयं अर्जन किया है, भवानी-शिव नन्दन ने ही। सभी देव और शक्ति तत्त्व उनमें समाहित है। माँगलिक कार्यों में विधि-विधान के पूजन में गौरी-गणेश ज्ञानार्जन में वाणी के साथ विनायक और व्यापार वैभव में क्षेम-लाभ की शुभांशा में भी लक्ष्मी के साथ श्री गणेश का ही पूजन होता है। बुद्धि-सिद्धि चरण-दासियाँ हैं। ईश्वर-वादियों में ही नहीं निरीश्वर वादियों में भी पूज्य हैं, श्री गणेश।

ऐसे सर्वव्यापी सर्वदेव-पूज्य श्री गणेश का समग्र सुव्यवस्थित साहित्य सर्वप्रथम सुलभ है, गणेश-तत्त्व-दर्शन में।

इस कोटि के स्वयं-सिद्ध पावन ग्रन्थ के लिए अपनी सम्मति लिखते हुए यही अनुभव कर रही हूँ कि ज्ञात और साधना मानव मन की महत्तम मनःस्थिति है, भक्ति उसमें स्वयमेव समाहित है। ऐसी त्रिवेणी म आकण्ठ डूबकर, अपनी सतत साधना और कठिन तपश्चर्या से लेखक ने वेदवाणी, संस्कृत वाङ्मय की दुर्लभ अमूल्य निधियों को सुलभ करा दिया है। सरल हिन्दी भाषा में ग्रन्थ में ज्ञान और भक्ति के साथ सनातन धर्म की संस्कृति के संरक्षण तथा समाज के मंगलमय विधान का भी सफल स्तुत्य प्रयास है। हिन्दी-भाषा विद् लेखक के कृतज्ञ ही नहीं चिरऋणी रहेंगे।

लेखक को जीवन का प्रशिक्षण ऐसा ही पुण्यमय रहे तथा शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक शक्ति के संगम का सुख सतत मिलता रहे, ऐसी प्रार्थना है मेरे अपने प्रभु के चरणों में। दिनांक ९ जून १९८५ ई.। डा० धनवती मिश्र

॥ श्रीः ॥

डॉ० योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरूण'

एम. ए; पी-एच. डी; रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, बी. एस. एम. (पी. जी.) कॉलेज. रूड़की, (उत्तर प्रदेश)

श्रद्धेय शास्त्रीजी, सादर नमस्कार।

शिव, शक्ति, विष्णु एवं 'ब्रह्म-तत्व-दर्शन' जैसे महाग्रन्थों के प्रणयन के पश्चात् आपने गणेश-तत्व-दर्शन भी लिख लिया है, यह महान् प्रसन्नता का विषय है। मैं भारतीय संस्कृति निष्ठावान् तपी साधक के रूप में आपका स्तवन सदैव करता रहा हूँ। उक्त चार ग्रन्थों में आपने संस्कृत एवं वेदों में यत्र-तत्र बिखरे हुए ज्ञान तत्वों को जिस प्रकार से चुन-चुन कर एकत्र करके जिज्ञासुओं के लिए संजो-संजो कर प्रस्तुत किया है। यह अत्यन्त स्तुत्य एवं महनीय यज्ञ कार्य है। मैं निःसंकोच आपको भारतीय धर्म दर्शन एवं संस्कृति का 'विश्वकोश' कह सकता हूँ।

चौबीस सोपानों में लिखा हुआ यह 'गणेश-तत्व-दर्शन' शीघ्र-मुद्रण एवं प्रकाशित होकर आपका यह यज्ञ कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो, यही मेरी प्रार्थना एवं मंगल कामना है। यूनान में गणेश के लिए 'जेनस' (JANUS) शब्द प्रचलित है, जो ध्वनि की दृष्टि से 'गणेश' ही है। अंग्रेजी के महिनों में 'जनवरी' (JANUARY) का सम्बन्ध 'जेनस' से ही है। वहाँ भी यह 'जेनस' शुभारम्भ का ही प्रतीक है।

भारतीय वाङ्मय में आदि देवता के रूप में विघ्न विनाशक गणेश का स्मरण सर्वत्र हुआ है। पुराणों में अनेक कथाएँ ऐसी हैं, जिनसे गणेश माहत्म्य स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है।

'गणेश-तत्व-दर्शन' निश्चय ही महान् ग्रन्थ सिद्ध होगा जिससे हम सभी जिज्ञासु उपकृत हो सकेंगे, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

अङ्क विद्या के अनुसार मेरा विश्वास है २४ सोपान (२४ = ०६) वाला यह ग्रन्थ १९८६ (२४ = ०६) के जनवरी माह में हर स्थिति में श्री गणेशजी महाराज को अर्पित हो सकेगा।

मेरी हार्दिक मंगल कामनाएँ सादर स्वीकार करें। परमपिता परमात्मा से मैं आपके स्वस्थ दीर्घायुष्य सानन्द रहने की कामना करता हूँ। शुभम्।

दिनांक १३-५-८५

卐 योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण'

डॉ० ए. कमलनाथ 'पंकज'

एम.ए; पी-एच. डी; अध्यक्ष हिन्दी विभाग, आदोनी आर्टस एण्ड साइन्स कॉलेज, आदोनी, जिला कर्नूल (आंध्रप्रान्त)

आदरणीय पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्रीजी

सादर नमस्कार।

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' का परिचय पढ़ा। श्री गणेश शीघ्र वर देने वाले देवता हैं, इसलिए ध्यानोपासना के लिए उनका वर प्राप्त करना आवश्यक माना गया

है। सर्वविघ्नों का नाश करने वाला विघ्नेश्वर, त्रिविध तापों का परिहार करता है और काया के पीछे लगी छाया के समान भक्तों के साथ रहकर उनकी रक्षा करता है।

ऐसे गणेश देवता के बारे में विपुल सामग्री का संचय कर, वेद, पुराण, धर्मशास्त्रादि के प्रमाण-उदाहरणों द्वारा सुशोभित कर 'गणेश-तत्व-दर्शन' के रूप में प्रस्तुत कर आप सनातन धर्म और राष्ट्र-भाषा की महान् सेवा कर रहे हैं। 'गणेश-तत्व-दर्शन' अध्यात्म-साधना की अमूल्य सम्पत्ति है, इसमें कोई संदेह नहीं है। दिनांक ३० अप्रेल १९८५ ई.

卐 कमलनाथ 'पंकज'

।। हरि ॐ ।।

पण्डित रमेशचन्द्र तैलंग शास्त्री

एम. ए; बी. एड; संगीत सरोज, कोविदमणि,

प्राचार्य राजकीय संस्कृत विद्यालय, सरमथुरा (धौलपुर) राजस्थान।

सर्वादि: सर्वोत्पत्ति स्थिति प्रलयहेतु: सर्वान्तर्यामि श्रीलीला पुरुषो नाना विग्रहधारी सचराचरञ्जगच्छिक्षयितु स्वलीला: "चरित्रादि: दर्शयितम् किञ्च तात्कालिक स्थितिं परिवर्तयितुं ययेच्छंवपुर्विभाति।

तदा लोका लीलावपुषो लोकोत्तरं रूपं तल्लोकोत्तराणि च कर्माणि विलोक्य परम पुरुषं लीलावपुर्धारिणं परमपुरुषस्य चरित्राणिध्यायमाना गाययन्तश्च भवाब्धि मनायासेन तरन्ति।

एवमेव जगत्पितृ पार्वती परमेश्वर परिणयनन्तारं बहुतिथ: काल: व्यतीत:। जगन्मात्रा "पार्वत्या" जगत्पिता शङ्करोऽगादि यदहं सत्पुत्रमभिलषानि। इतिमनोरथं ज्ञात्वा भगवताशङ्करेण पुण्यकव्रतं चरिन्तु भगवती समादिष्टा। तद्व्रतार्थं सर्ववस्तु जातं व्यवस्थापितम्। यज्ञाचार्येण श्रीसनत्कुमारेण व्रतोद्यापनं कारितम्। दक्षिणा-याञ्च सनत्कुमारेण भगवान् शङ्कर एव पार्वती समयाचि, तदानीं भगवती धर्मसंकटे मग्ना। भगवता विष्णुना च बोधिता सती दक्षिणां दत्तवती आशिषञ्चालभत्। आशिष: फलानुरूपंस्वयं भगवान् श्रीकृष्ण: एव पुत्रत्वेनावततारो जगत्पितरौ च बहवासर पूगान् यावत्पुत्रोत्सवं सोत्साहं कुरुताम्। सर्वे देवौर्देवीभिश्चाशी समर्वद्धि-श्रीगणेश:। इतिसौष्ठवेन व्यलोखे शास्त्रिप्रवार:।

शनैश्चर: एकदा भगवन्तं गणेशं द्रष्टुमना: समाजगाम श्री सदाशिवधाम: तदा च अधोमुखाय तस्थषु शनैश्चराय स्पष्टतया गणेशं द्रष्टुं विरतवचसि जगन्मातरि शनि दृष्टेसर्ति एव भगवतो गणेशस्य मुखं छिन्नं क्वापि आदर्श नीयतांगतम्। जगज्जननी च पर्य्यताप्यत। श्री विष्णुन्न च कस्यचन बालगजस्य शिरश्छित्वा श्रीगणेश कलेवरेण संयोज्य श्री पार्वत्या: परितापो दूरीकृत.। इत्यादिवृत्तं समर्वणि श्री शर्म महानुभावै:।

नाना पुराणानुसारं श्री गजाननेन सर्वदेवाग्र पूजा गृहीतेति वृतान्तमपि-सर्वनाह्लादकर वर्णित।

श्री गजाननेन सिद्धि बुद्धिभ्यां सहपरिणयं विधाय लाभ, क्षेमै च पुत्रौ समजाने इत्यायेवृतं बहुरोचकं लाभदायकंञ्चास्ति ।

इति सुचारू न्यलेखि पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री महोदय श्री गणेश लोकस्य परिचयो वर्णनञ्च श्रीगणेश पुराणानुसारेण रोचकतया समकारि पंडित प्रवरेः ।

श्री गणेशस्य तात्त्विक विवेचनं ऋग्वेदानुसारं शुक्लयजुर्वेदानुसारं च, गणपत्युपनिषत्, अथर्व वेदानुसारञ्चाथर्वशीर्ष, गणेशगीता, गणेशमहिम्न स्तोत्रानुसारं व्यलेखि श्रीरामप्रसाद शर्मभिः ।

श्री गणेश सहस्र नाम्नां पाठ विधिः संन्यासः माहात्म्य सहितश्च हिन्दी भाषार्थेसमम् व्यलेखि पंडित वर्यें । एक विंशतिः प्रधानानि गणपति क्षेत्राणि तथा च अष्ट प्रमुखानि विनायक क्षेत्राणि स परिचयं यद् भारते कुत्र-कुत्र विनायक क्षेत्राणि सन्ति ।

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी चन्द्रावलोकनेन दोषः कथमापतति ? गणेश पुराणानुसार मिति समलेखि ।

अस्य दोषस्य मार्जनार्थं श्रीमद्भागवतोक्त दशम स्कन्ध वर्णितस्यमन्तकोपाख्याने सत्राजित् कथा समुदृङ्किता ।

गणपति चतुर्थ्यां मातुरुत्पतिर्मुद्गल पुराणानुसारं वर्णिता । चतुर्थ्यां मातुर्मन्दिराणां परिचयोऽपिदत्तः । इति ।

दिनांक १ मई १९८५ रमेशचन्द्र तलंग शास्त्री

卐

श्रीमत्परमहंस—ब्रह्मचिन्तन-लीन, कौमदमणि ।

पण्डित खुशीराम भनोत

एम. ए; बी. टी; एल. एल. बी;

सेवा-निवृत प्रधानाचार्य श्री शार्दूल उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बीकानेर (राज.)

पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा निर्मित शिव, शक्ति, विष्णु एवं 'ब्रह्मतत्व-दर्शन' ग्रन्थ रत्नों का प्राचीन-अर्वाचीन शास्त्र निष्णात् विद्वानों द्वारा सर्वत्र समादर किया गया है । इस देव-तत्व-दर्शन शृङ्खला में ही यह पंचम ग्रन्थ गणतंत्र के आदि प्रणेता भगवान् महागणाधिपति की उपासना की दिशा में स्वात्मा परिपूर्ण एवं अभूत पूर्व अपने प्रकार का एक मात्र प्रमाणित एवं मौलिक ग्रन्थ रत्न है । लेखक के पूर्व प्रकाशित ग्रन्थों की भाँति यह ग्रन्थ भी अनुपमेय सिद्ध होते हुए समादर किया जाएगा ।

निःसंदेह लेखक ने 'गणेश-तत्व-दर्शन' ग्रन्थ विषय में वैदिक, पौराणिक तान्त्रिक, ऐतिहासिक, भौतिक, ज्योतिष एवं कर्मकांड आदि विधि शास्त्रों की दृष्टिकोणों से इनहीं शास्त्रों के सूक्ष्म, गम्भीर एवं स्थूल सूत्रों को चुनकर उन्हीं के परिवेश में यह ग्रन्थ निर्माण किया है । जो गणेश देव ज्ञान कांड का कोश है । इसमें सर्वाङ्गीण शास्त्र सम्मत प्रमाणिक गवेषणा की गई है, जो हिन्दी में

विवेचना होने से सर्वसाधारण पाठकों को भी लाभान्वित होने का अवसर प्राप्त हो सकेगा।

चौबीस सोपानों में विभक्त इस ग्रन्थ में गणेशजी की प्रभावकता एवं महत्ता के व्यापक सन्दर्भ उपलब्ध हुए हैं। इसके अतिरिक्त विश्व की सृष्टि प्रक्रिया में गणेशजी की महत्वपूर्ण भूमिका को उपन्यस्त करने के क्रम में सुधी शोधप्रज्ञ लेखक ने विविध अनेक ग्रन्थों के प्रमाणों द्वारा गम्भीर विवेचना करते हुए अवतारवाद के परिप्रेक्ष्य में भगवान् गणेशजी की सृष्टि लीलाओं को भी अनेक अभिनव आयाम प्रदान किए हैं। विश्वमान्य हिन्दू विचारधारा के विभिन्न ग्रन्थों के प्रणयन से हस्तावलम्ब प्रदान किए हैं। लेखक के गरिमायुक्त सारस्वत साधना का यह एक आदर्श रूप है।

भगवान् गणपति के श्री चरणों में यही प्रार्थना है कि ग्रन्थ लेखक शर्मा शास्त्री जी स्वस्थ सुखी एवं शतायु हों, जिससे उनका कृतित्व इसी भांति श्रीवृद्ध होता रहे और वे हमारे गौरवमय अध्यात्म धार्मिक जगत् की ओर भी मार्मिक एवं गूढ अभिव्यंजना कर सकें।

दिनांक ३ जून १९८५ ई० खुशीराम भनोत

卐

वैद्य पंडित महावीर प्रसाद जोशी

साहित्यायुर्वेदाचार्य शार्दूलपुर, राजगढ़ जिला चूरू (राजस्थान)

पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा लिखा गया 'गणेश-तत्व-दर्शन' नामक ग्रंथ का संक्षिप्त परिचय पढ़ा। लेखक द्वारा पूर्व लिखित शिव-शक्ति-विष्णु तथा 'ब्रह्म-तत्व-दर्शन' के समान ही यह ग्रंथ-रत्न भी भगवान गणेश विषयक अमूल्य निधि है। भगवान गणेशजी के सभी रहस्यों का उद्घाटन करता है। आपकी लेखन शैली बहुत ही सरल सारगर्भित एवं विवेचना पूर्ण है। एक ही स्थान में उक्त विषय के सार-सूत्रों का संकलन एवं विवेचन लेखक की विद्वता एवं कठिन परिश्रम के द्योतक हैं। आपके द्वारा लिखित अनेक देव-तत्व-दर्शनों का उद्घाटन हुआ है। जिससे विद्वत् समाज का ही नहीं, धार्मिक जन समाज का भी अत्यन्त उपकार हुआ है। दिनांक ३ जून सन् १९८५ ई.

महावीर प्रसाद जोशी

卐

वैद्य निरंजनलाल मिश्र

भिषगाचार्य, सेवानिवृत्त अध्यक्ष राजस्थान औषधिनिर्माणशाला, जयपुर एवं मैनेजर औषधि निर्माणशाला विभाग, धन्वन्तरि औषधालय, जयपुर (राजस्थान)

वैद्य पंडित रामप्रसाद शर्मा विनिर्मित गणेश-तत्व-दर्शन नामक ग्रंथ पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इससे पूर्व आपकी लेखनी द्वारा तिरोहित शिव-शक्ति-विष्णु तथा ब्रह्म-तत्व-दर्शन भी पढ़ गए हैं। देव-तत्व-दर्शन की श्रृंखला में आपकी लेखनी का यह पंचम पुष्प है। आपके पूर्व प्रकाशित ग्रंथ सनातन धर्म समाज में ही नहीं अपितु वेद, पुराण, धर्मशास्त्रों में रुचि रखने वाले समस्त भारत के विद्वानों

द्वारा सम्मानित हुए हैं। गणेश-तत्त्व-दर्शन भी पूर्व प्रकाशित ग्रंथों के समान ही समादर किए जायेंगे। यह लेखक के बीस वर्षों से अधिक समय सदुपयोग एवं विद्वतापूर्ण अथक परिश्रम के फल हैं। जो देव-तत्व-दर्शन दुर्ज्ञेय विषय के सहस्रों वेद-पुराण-धर्मशास्त्रों का सार तत्व ग्रहण कर हिन्दी में सप्रमाण निबद्ध कर जन-साधारण से विशिष्ट विद्वानों तक के लिए सुलभ कर दिए हैं। हिन्दू धर्म शास्त्रों में एवं देवी-देवताओं में आस्था, विश्वास, श्रद्धा रखने वाले सभी जन मानुष आपके सर्वदा ऋणी रहेंगे। दिनांक २५ जून १९८५ ई.

卐

वैद्य पंडित रामप्रताप महावीर प्रसाद मिश्र

साहित्यायुर्वेदाचार्य, चिराना-शेखावाटी (झुँझुनू) राजस्थान

'गणेश-तत्व-दर्शन' ग्रंथ को ध्यानपूर्वक पढ़ा। लेखक ने वेद शास्त्रोपनिषद्, पुराण, संहिताओं के मौलिक आधार पर भगवान गणेश की तात्त्विक व्याख्या को नवीनता प्रदान कर हिन्दी में सरलतापूर्वक ज्ञान गम्य रूप देकर निबद्ध किया है जो लेखक के शास्त्रीय ज्ञान एवं ज्ञान पिपासा के सद्प्रयास का साकार रूप है और संस्कृत वाङ्मय शब्दब्रह्म की मौलिक सच्ची सेवा है। इस ज्ञान दीप को सारस्नेह से ओत-प्रोत पूरित किया है कि युगों तक यह प्रकाश स्तम्भ भारतीय संस्कृति को आलोकित करता रहेगा। आपके कल्पनातीत इस कठिन परिश्रम की अन्तःकरण से भूरी-भूरी प्रशंसा करते हुए लेखक महोदय के दीर्घायुष्य की कामना करते हैं, जिससे लेखक द्वारा माँ शारदा की महत्युपासना होती रहे। लेखक की विद्वता से ऐसे तत्व-दार्शनिक ग्रंथों के निर्माण द्वारा राजस्थान भी गौरवान्वित हुआ है। लेखक के ऐसे ही पूर्व प्रकाश्य ग्रंथ शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्मा-तत्त्व-दर्शन प्राचीन भारतीय वाङ्मय में रुचि रखने वाले विद्वानों में बहु चर्चित एवं समादर किए गए हैं। शुभम्। दिनांक २६ मई १९८५ ई.

रामप्रताप महावीर प्रसाद मिश्र

卐

पंडित जगदीश प्रसाद दीक्षित

बी. ए; एल. एल. बी; आर. ए. एस; रिटायर्ड मजिस्ट्रेट राजस्थान गॉवर्न्मेन्ट, जयपुर

'गणेश-तत्त्व-दर्शन' वेद-पुराण धर्मशास्त्रादि के प्रमाणों द्वारा पुष्टित अनुपमेय ग्रंथ हिन्दी में देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ। विद्वान् लेखन पंडित प्रवर रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने प्राच्य संस्कृत ग्रंथों में छितराए हुए गणेश विषयक विविध ज्ञान रत्न तत्त्वों का संग्रह करके सरल भाषा में ज्ञान कराने वाले बुद्धिविवेक से इस ग्रंथ का निर्माण किया है। इसमें गणेश विषयक कोई तत्त्व शेष नहीं रहा है, जो इस ग्रंथ में समाविष्ट न किया गया हो। सब ही श्रद्धालु देवभक्त हिन्दी भाषी पाठक इसका लाभ प्राप्त कर सकेंगे। मैं लेखक महोदय का अभिनन्दन करता हुआ उनके दीर्घायु होते हुए स्वस्थ एवं अत्युत्तम भविष्य की कामना करता हूँ। इति। १६, जोबनेर बाग, जयपुर।

卐 जगदीश प्रसाद दीक्षित

पण्डित रामनारायण त्रिपाठी
व्याकरण-वेदान्त-धर्मशास्त्राचार्य, एम.ए.,
अध्यक्ष प्राच्य संस्कृत-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

'गणेश-तत्त्व-दर्शन'

शुभाशंसनम्

कल्याणार्थं जनानां सुकृतफलवतां पुण्यकामः प्रसन्नः
प्राज्ञो रामप्रसादो विमलहृदयधीः पूर्वमेव व्यधाद्यः ।
विष्णौ रुद्रस्य शक्त्या जलजजनिमतो दर्शनं वेदसख्यं
सोऽयं द्वैमातुरीयं रचयति रुचिरं दर्शनं दिव्यभावम् ।।१
अस्मिन्नूतनप्रबन्धे गणपतिजननं दन्तिवक्त्रोपलब्धिः
प्राथम्यं तस्य पूजायजनजपविधौ सद्विवाहः सुताप्तिः ।
लोकस्तत्त्वं च संज्ञा भरतभुवि हितं क्षेत्रमस्य प्रशस्तं
भाद्रे शुक्ले चतुर्थ्यां दिनपति सुहृदो दर्शने दोषहेतुः ।।२
तद्दोषोद्धारमार्गः प्रियतिथिजननं तद्व्रतानां विधानं
देवे द्वैपायनादौ विविधविधकृपा भक्तवृन्देऽनवद्ये ।
पूजा तद्पद्धतिश्च श्रुतिविधिसहिता तान्त्रिकी लोकसिद्धा
भाषायां देववाण्यां स्तुतिरथ विमला सर्वमेतन्निबद्धम् ।।३
एषा लोकोपकारे बुधनवलकृतिर्धार्मिकी साधुयोगा
वक्तुस्तोषाय पूर्णा प्रभवतु नितरां सर्वसौख्यं वितन्यात् ।
भक्तैर्ग्राह्या च वन्द्या सुगमसरणिदा प्रेमतः पाठकानां
निष्ठां ज्ञानं प्रवृत्तिं जनयतु सहजं संस्कृतौ च स्वधर्मे ।।४
प्राचीना सभ्यता सा प्रसरतु भुवने या पुराणेषु गीता
येन स्यान्मानवानां स्मृति विहितजुषां क्षेममार्गः प्रशस्तः ।
भूयाद् रामप्रसादो बुधजनमहितो वन्दितो नन्दितश्च
श्रेष्ठामन्यां कृतिं स्वामुपहरतु नवां श्रीगणेशप्रसादात् ।।५

विदुषां वशंवदः —
रामनारायण त्रिपाठी

卐

पुस्तकालय, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ
परिग्रहण सं. 7563
जयपुर